अंडमान और निकोबार
द्वीप समूह

बंगाल की खाड़ी में स्थित पन्ने की तरह चमकते सामरिक महत्व के अंडमान और निकोबार द्वीप समूह हाल में पर्यटन विकास की असीम संभावनाओं के कारण आकर्षण के केंद्र बने हुए हैं । विषम जलवायु व खूंखार आदिवासियों का यह अगम्य प्रदेश, जिसे अंग्रेजों ने सन् 1857 के स्वतंत्रता-सेनानियों के लिए एक कैदी बस्ती के रूप में स्थापित किया, किस प्रकार आज पर्यटकों के स्वर्ग के रूप में उभरकर आया है, यह एक बड़ी ही रोचक व रोमांचकारी कहानी है ।

इस पुस्तक में लेखक ने अंडमान और निकोबार द्वीप समूहों में भारत के उस अंश को उजागर किया है, जो महानगरीय सभ्यता की चकाचौंध से दूर प्रकृति की गोद में बसी आदिवासी जनजातियों के सरल जीवन और जीज़िविषा की अदम्य छटपटाहट से जुड़ा है।

लेखक बहादुर राम टम्टा (जन्म-1926) अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवा के सदस्य हैं। उत्तर प्रदेश के पर्वतीय क्षेत्रों तथा दिल्ली महानगर के विकास में इनका महत्वपूर्ण योगदान रहा। टम्टा जी अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में विकास आयुक्त के पद पर रहे, जहां से वे साहित्यिक व सामाजिक सेवा के लिए स्वेच्छा से सेवा निवृत्त हो गये।

भारत – देश और लोग

अंडमान और निकोबार द्वीप समूह

बहादुर राम टम्टा



नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

आवरण चित्र : अशोक दिलवाली

ISBN 81-237-0485-2

प्रथम संस्करण : 1994 (शक 1915)

Andaman and Nicobar Islands (*Hindi*)

रु. **35.00**

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, ए-5 ग्रीन पार्क,
नयी दिल्ली - 110 016 द्वारा प्रकाशित

विषय-सूची

प्राक्कथन सात

हरे-भरे द्वीप 1

बन्दरगाह से सेलूलर जेल तक 9

शहीदों की जेलयात्रा 24

जापान के अधिपत्य में 32

नेताजी का आगमन 48

प्रशासनिक व्यवस्था 62

द्वीपों के विकास कार्य 68

सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक जीवन की झांकी 106

आदिवासी जनजातियां 133

पर्यटकों का स्वर्ग 147

ग्रंथ-सूची 160

प्राक्कथन

अंडमान और निकोबार द्वीप समूह को आमतौर पर कालापानी के नाम से जाना जाता रहा है । वर्षों पूर्व संगीन जुर्म की सजा या तो फांसी होती थी या अभियुक्त को कालापानी भेज दिया जाता था । इस प्रकार फांसी व कालापानी पर्यायवाची शब्द बन गये थे । फांसी के एक झटके के साथ जीवन लीला समाप्त हो जाती थी जबकि कालापानी की सजा में भयावह वातावरण, पेयजल का अभाव व प्रतिकूल जलवायु में कैदी घुट-घुट कर मर जाता था। अत: देश में कालापानी के नाम से ही लोग भयभीत हो जाते थे।

सन् 1977 में देश में हुई राजनीतिक उथल पुथल के फलस्वरूप विकास आयुक्त के रूप में मेरा स्थानान्तरण इस द्वीप में किया गया । यह सब मेरे परिजनों व मित्रों के लिए एक गहन चिन्ता का विषय बन गया था । उन्हें आशंका थी कि संभवत: मैं वहां से जीवित नहीं लौट सकता । भविष्य के प्रति भय, शंका व कौतूहल लिए मैं अंडमान और निकोबार द्वीप समूह के लिए रवाना हो गया । मैं अपने विचारों में खोया हुआ था, कि तभी विमान पोर्ट ब्लेयर हवाई अड्डे पर उतरा ।

अथाह, अपार सागर के बीच मोती की माला से पिरोए ये द्वीप प्रकृति की अनुपम देन लग रहे थे । चारों ओर फैली हरियाली व पहाड़ियों की ढलानों पर बने सुन्दर बंगले, अत्यंत मनोहर बन्दरगाह आदि देख कर लगा कि मैं किसी स्वप्नलोक में आ गया हूं । प्रकृति कितनी शांत एवं रमणीय थी । मैंने मन ही मन भगवान के प्रति असीम कृतज्ञता प्रकट की । इन द्वीपों के प्रति यह प्रथम प्रेम आने वाले वर्षों में गहनतम होता गया । विभिन्न द्वीपों का भ्रमण, आदिवासियों का जीवन-अध्ययन, यहां के जन-जीवन में दूध पानी की तरह मिलना, इन सबने जीवन में एक नवीन प्रेरणा व चेतना का संचार किया ।

इन द्वीपों में वर्तमान सामाजिक जीवन की उत्पत्ति सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के साथ हुई जब हजारों स्वतंत्रता-सेनानियों को मुख्य भूमि की जेलों में रखना संभव नहीं रहा । देश के स्वतंत्रता संग्राम में इन द्वीपों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है जबकि हजारों स्वतंत्रता-सेनानी सेलूलर जेल में बंद किए गए । यहां के निवासी अक्सर इस बात की शिकायत करते थे कि मुख्य भूमि के लोग उनके प्रति उपेक्षा का भाव रखते हैं तथा उन्हें

कैदियों की संतान समझते हैं। इन द्वीपों का सही इतिहास इस खाई को पाट सकता है। इस संबंध में मेरे कुछ लेख "धर्मयुग" में प्रकाशित हुए जिन्हें पाठकों ने सराहा। "धर्मयुग" के तत्कालीन प्रधान संपादक श्री धर्मवीर भारती जी ने मुझे लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। इस बीच मेरे इन लेखों को नेशनल बुक ट्रस्ट के विद्वानों ने भी पढ़ा और मुझे इन द्वीपों के बारे में एक पुस्तक लिखने को कहा। प्रस्तुत पुस्तक उसी का परिणाम है।

पुस्तक लिखने में मुझे अनेक लोगों, संस्थाओं और मित्रों ने बहुत योगदान दिया। मेरी पुत्री बीना ने विशेष रूप से मदद की। मेरा प्रयास रहा है कि इन द्वीपों के विषय में अधिक से अधिक जानकारी दी जाय, जिससे मुख्य भूमि तथा इन द्वीपों के बीच मानवीय संबंधों की अविरल धारा सागर के दोनों छोरों को निरंतर मिलाए रहे। मैं अपने इस उद्देश्य में कहां तक सफल रहा हूं, यह केवल पाठक ही बता पायेंगे।

मैं नेशनल बुक ट्रस्ट के प्रति आभार प्रकट करता हूं जिन्होंने पुस्तक को वर्तमान स्वरूप में प्रकाशित करने में विशेष रुचि ली।

—बहादुर राम टम्टा

हरे-भरे द्वीप

9 फरवरी 1979 की वह शाम मैं कभी नहीं भूल सकता, जब हर्षवर्धन जहाज से सैकड़ों स्वतंत्रता-सेनानी, जिन्होंने भारत माता के चरणों में अपना सर्वस्व निछावर करके, अपने जीवन का प्रभात काले पानी की "सेलूलर" जेल की काल-कोठरियों में व्यतीत किया था, पोर्ट ब्लेयर के बंदरगाह पर पहुंचे। सेलूलर जेल को राष्ट्रीय स्मारक घोषित करने का निर्णय कई वर्ष पूर्व ही किया जा चुका था और आज उसके औपचारिक समारोह में सम्मिलित होने के लिए इन लोगों को विशेष रूप से आमंत्रित किया गया था।

स्वागताध्यक्ष के रूप में मैं संभ्रात नागरिकों के तथा अन्य अधिकारियों के साथ पहले ही बंदरगाह पर पहुंच गया था। जहाज जेटी पर आ लगा। सीढ़ी लगायी गयी और स्वतंत्रता-सेनानी उतरने लगे, एक-एक करके। सुनहरी धूप छिटक रही थी। अधिकांश स्वतंत्रता-सेनानी बहुत वृद्ध थे और उन्हीं के परिवारों के नवयुवक और नवयुवतियां उन्हें सहारा दे रहे थे। उनके मुख पर एक अनुपम दिव्य कांति और भावुकता छायी हुई थी। जब पुष्प वर्षा और जय-जयकार से उनका स्वागत हुआ, भावातिरेक से उनके नेत्र सजल हो उठे। स्वागत के लिए आये हुए हजारों नर-नारियों की आंखों से भी आंसू बहने लगे। नतमस्तक हो उन्होंने स्वतंत्रता-सेनानियों को प्रणाम किया और बहुतों ने उनके चरणों की धूल माथे पर लगायी। मैं स्वयं भी इस प्रवाह में बह गया।

अगले कई दिन मैंने स्वतंत्रता-सेनानियों के साथ व्यतीत किये। उनसे बातें हुईं। उनके अनुभव सुने। मेरी उत्सुकता बढ़ती गयी यह जानने के लिए कि वह कौन सी भावना, प्रेरणा व अनुभूति थी, जिसने इन लोगों को बिना किसी स्वार्थ व प्रलोभन के जलती ज्वाला में कूदने के लिए प्रेरित किया था। उन्हें दी गयी यातनाओं का वर्णन हृदय को दहलाने वाला था। स्वतंत्रता-संग्राम में अंडमान द्वीपों ने बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। यहां की सेलूलर जेल को स्वतंत्रता-संग्राम का विश्वविद्यालय कहा गया है। मेरा मन इस विषय की पूर्ण जानकारी प्राप्त करने के लिए मचलने लगा। इस विषय पर मैंने शोधकार्य किया तथा अनेक दुर्लभ लेखों का अध्ययन किया।

अंडमान निकोबार द्वीप समूह बंगाल की खाड़ी में पन्ने की तरह चमकता हुआ एक अलौकिक प्रदेश है, जो स्वर्ग की कल्पना साकार करता है। प्राचीन यात्रियों के यात्रा विवरणों

में इन द्वीपों का जिक्र किया गया है। कुछ विद्वानों के अनुसार यहां की आदिवासी जनजातियां, रामायण में चर्चित जनजातियों से काफी मिलती जुलती हैं। उनके अनुसार "अंडमान" शब्द "हनुमान" का अपभ्रंश है। अगम्य होने तथा खूंखार आदिम जनजातियों के कारण ये द्वीप रहस्यमय बने रहे। ऐतिहासिक दृष्टि से इन द्वीपों का प्राचीनतम उल्लेख रोम के प्रसिद्ध विश्व भ्रमणक व भूगोलज्ञ क्लाडियस प्लौटमी के भ्रमण विवरणों में मिलता है जो दूसरी सदी में पैदा हुआ था और जिसने इन्हें "सौभाग्यपूर्ण द्वीप" की संज्ञा दी। ईसिंग एक बौद्ध धर्म का विद्वान था जो इन द्वीपों में सातवीं सदी में आया, वह इनका वर्णन "अन्डबान्स" के नाम से करता है। सन् 1290 ई. में मार्कोपोलो ने भी इन द्वीपों का स्पर्श किया, उसने भी इनके विषय में लिखा है। तेरहवीं सदी के बाद के यात्रियों के विवरण में अक्सर इन द्वीपों का जिक्र आया है। आर.एफ.लेविस द्वारा उद्धृत एक भ्रमणक के अनुसार - "इस प्रदेश में मानवभक्षी लोग रहते हैं, जो देखने में भयानक होते हैं। यदि किसी जहाज के नाविक यहां अकस्मात किसी समुद्र तट पर उतर जाएं या भयानक तूफान में जहाज टूटने से इस प्रदेश में कहीं किनारे लग जाएं और दुर्भाग्यवश कहीं इन लोगों के हाथ पड़ जाएं तो ये निश्चित रूप से उन्हें मार कर खा जाते हैं।" यह विवरण अतिश्योक्तिपूर्ण प्रतीत होता है। ऐसे भी समाचार मिले हैं कि मलाया के समुद्री डाकू अक्सर इन द्वीपों पर आक्रमण करते थे तथा यहीं से जनजातियों को कैदी बनाकर ले जाते तथा मलाया प्रायद्वीप, चीन तथा श्रीलंका में गुलाम के रूप में बेच देते थे। जौन फ्रांसिस जर्मेली, जो इटली का चिकित्सक था, समुद्री मार्ग से विश्व का चक्कर लगाकर 1695 में निकोबार द्वीप में पहुंचा। समीप के द्वीप निवासियों के बारे में वह लिखता है - "ये मानव नहीं पिशाच हैं। जब वे अपने दुश्मन को घायल कर डालते हैं, तो उसके बहते खून को चूसने के लिए बड़ी लालसा से दौड़ते हैं। डच लोगों ने इस प्रकार की निर्दयता स्वयं अपनी आंखों से देखी थी।" .... डच लोगों का इन द्वीपों को जीतने के पीछे मुख्य कारण था विदेशों में फैली अफवाह कि इन द्वीपों में एक कुआं है, जिसका पानी लोहे को सोने में बदल देता है किन्तु उनके विरूद्ध मानवभक्षी होने का आरोप कभी सिद्ध नहीं हुआ। बंगाल की खाड़ी में 780 किलोमीटर समुद्र में फैले अंडमान व निकोबार द्वीप समूहों को देखकर लगता है मानो मोतियों की माला टूटकर बिखर गई हो। द्वीपों का दक्षिणी छोर-पिगमैलियन पाइन्ट, जिसका नामकरण अब इन्दिरा पाइन्ट के रूप में किया गया है, हिन्देशिया से केवल 154 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। संभवतः कुछ लोगों को यह बात विचित्र लगे किन्तु यह सत्य है कि भारत का दक्षिणी छोर कन्याकुमारी नहीं वरन् इन्दिरा पाइन्ट है। ये द्वीप 6 अंश तथा 14 अंश उत्तरी अक्षांश एवं 92 तथा 94 अंश पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित हैं।

कुल मिलाकर 554 द्वीप हैं जिसमें छोटे बड़े चट्टानी द्वीप भी सम्मिलित हैं। किन्तु वास्तविक द्वीप केवल 298 हैं। 1981 की जनगणना के अनुसार छत्तीस द्वीपों में कुल 1,88,741 की जनसंख्या है। अधिकांश द्वीप बहुत छोटे हैं और केवल बीस द्वीप ऐसे हैं, जिनका क्षेत्रफल बीस वर्ग किलोमीटर से अधिक है। 554 में से पांच सौ द्वीप कुल द्वीपों के

8293 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में से केवल सात प्रतिशत क्षेत्रफल में फैले हैं। पूरे द्वीप समूह अंडमान तथा निकोबार के दो जिलों में विभक्त हैं जिन्हें 160 मील का खुला समुद्र पृथक करता है। इसमें 10 अंश का खतरनाक जलान्तराल (चैनेल) भी सम्मिलित है। अंडमान तथा निकोबार द्वीप का क्षेत्रफल क्रमश: 6340 वर्ग किलोमीटर तथा 1953 वर्ग किलोमीटर और जनसंख्या 1,58,287 तथा 30,454 है।

द्वीपों की राजधानी पोर्ट ब्लेयर की जनसंख्या 49,634 है जो कलकत्ता से 1255 किलोमीटर तथा मद्रास से 1190 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। उत्तरी अंडमान, मध्य अंडमान तथा दक्षिणी अंडमान के महत्वपूर्ण द्वीपों को मिलाकर बृहद अंडमान बना है। ये द्वीप समूह सभ्यता के प्रभाव से दूर रहे हैं। केवल 1858 के बाद पोर्ट ब्लेयर के केन्द्र से प्रशासन बाहर की तरफ फैला। इन अछूते द्वीपों में जब अंग्रेज शासक किसी क्षेत्र विशेष के सम्पर्क में आए तो इसका नाम उसी अंग्रेज पर पड़ गया या उसके सुझाव पर इनका नामकरण किया गया। यही एक प्रधान कारण है कि हमें यहां पर अंग्रेजी मूल के नामों का बाहुल्य मिलता है। बृहद अंडमान के अन्य द्वीप हैं नारकोन्डम, ईस्ट, स्मिथ, स्टिवार्ड, बाराटांग, वाइपर, जौन लौरेंस, हेनरी लौरेंस, सिंक, ब्रदर्स, सिस्टर्स, रेडस्किन इत्यादि। बृहद अंडमान के अधिकांश द्वीप ऊंचे, नीचे हैं जिसमें सबसे ऊंची पहाड़ी सैडल पीक 722 मीटर ऊंची व माउन्ट फोर्ड 432 मीटर ऊंची है। चूंकि द्वीप छोटे-छोटे हैं इसलिए इनमें कोई बड़ी नदी नहीं है केवल उत्तरी अंडमान में एक छोटी-सी नदी कलपांग है, जो सैडल पीक से निकलती है।

निकोबार द्वीप शृंखला में अन्य महत्वपूर्ण द्वीप हैं, कार निकोबार, चौरा, टेरेसा, बम्पूका, कचाल, कमोरटा, नानकोरी, ट्रिन्केट, कन्ऊल पुलोमिलो, ग्रेट निकोबार, तिलंगचोंग आदि। कारनिकोबार, चौरा तथा अन्य कुछ द्वीप बिल्कुल समतल हैं किन्तु ग्रेट निकोबार में ऊंची पहाड़ियां व गहरे नाले हैं। सबसे ऊंची पहाड़ी माउन्ट थूलियर है, जो 642 मीटर ऊंची है। गलतिया यहां की सबसे बड़ी नदी है। दूसरी बड़ी नदी है एलेक्जैन्ड्रिया।

जलवायु

इन द्वीप समूहों की जलवायु ऊष्ण व नम है। इन द्वीपों में उत्तर पूर्वी तथा दक्षिण पश्चिमी मानसून से वर्षा होती है। पिछले तैंतीस वर्षों का लेखा देखने से विदित होता है कि वर्षा की सालाना औसत 3200 मिलीमीटर है। सबसे अधिक 4362 मिलीमीटर वर्षा 1961 में हुई तथा सबसे कम 2421 मिलीमीटर वर्षा 1960 में हुई। अधिकांश वर्षा दक्षिण पश्चिम मानसून के समय में होती है। सबसे भारी वर्षा के महीने जून व जुलाई हैं तथा सबसे अधिक सूखे के महीने फरवरी व मार्च होते हैं जब पांच मिलीमीटर से भी कम वर्षा होती है। आनुपातिक नमी अस्सी प्रतिशत रहती है और सत्तर के नीचे तो बहुत कम होती है। तापमान में बहुत कम परिवर्तन होता है और यह 29 अंश व 23 अंश के बीच नीचे ऊपर होता रहता है। इन द्वीपों में उत्तर पूर्वी हवा नवम्बर से जनवरी तक तथा दक्षिण

पश्चिमी हवा मई से लेकर अक्तूबर तक बहती है । मानसून के दिशा परिवर्तन के समय मौसम तूफानी हो जाता है । अधिकांश समुद्री चक्रवात् जिनकी चपेट में भारत के पूर्वी तट आते हैं इन्हीं द्वीपों में प्रारंभ होते हैं । कभी-कभी ये बहुत बड़ी तबाही मचाते हैं जिससे लोगों का जीवन संकट में पड़ जाता है और समुद्र में चलने वाले बड़े जहाज व नौकाएं इन द्वीपों की शरण लेते हैं ।

ये द्वीप भूकम्प प्रवण क्षेत्र में आते हैं और यहां नारकोंडम द्वीप में एक बुझा हुआ ज्वालामुखी भी है ।

वनस्पति

ऊंची-नीची भूमि, समान तापमान, अत्याधिक नमी, व वर्ष में अधिक समय तक वर्षा, ये सब पेड़ पौधों के लिए बहुत अनुकूल हैं, जिसकी पुष्टि अंडमान व निकोबार में फैले विशाल घने वन करते हैं । ये वन हिन्द-मलेशियन ऊष्ण कटिबन्धी वनों के अन्तर्गत आते हैं जो विश्व के चार प्रमुख भागों में एक है । ऊष्ण कटिबन्धी वन पुराभौगोलिक तथ्यों के आधार पर समसामयिक जलवायु, मिट्टी तथा मानव हस्तक्षेप के अन्तर को ध्यान में रखते हुए विभाजित किए जाते हैं । चैम्पियन व सेठ द्वारा वनस्पति वनों के मुख्य नौ अंगों में विभाजित की गई है । उदाहरणार्थ ज्वारीय, तटीय, आर्द्र, पतझड़ी, अर्द्ध सदाबहारी, दक्षिणी पहाड़ियों के सिरे पर ऊष्ण कटिबन्धी सदाबहारी, दैत्याकार सदाबहारी तथा बांस व केन की झाड़ियां । ये विभिन्न प्रकार के जंगल इन द्वीपों में बनी मिट्टी की परत की किस्मों से सम्बन्धित हैं और लगभग दो सौ विभिन्न किस्मों के पेड़ यहां पर उगे हैं जिनमें से केवल 44 किस्में ऐसी हैं जिनको काटा जाता है और जिसमें 29 जातियों का उद्योग में प्रयोग सर्वविदित है । सदाबहारों में गरजन तथा पतझड़ वृक्षों में पडौक है किन्तु ये दोनों प्रकार के पेड़ निकोबार द्वीप समूह में नहीं पाए जाते । तटीय वनों में समुद्री महुआ नाम की लकड़ी के वनों की प्रधानता है, इसे अंडमान बुलेट वुड भी कहते हैं । प्रारम्भ में केवल पडौक लकड़ी की ही अधिक मांग थी । ऐसा कहा जाता है कि बकिंगघम के महल में भी इसका प्रयोग किया गया । पडौक के कुछ दुर्लभ पेड़ों में कैंसर के फोड़ों के आकार की कुछ विकृतियां उत्पन्न हो जाती हैं, जो धीरे-धीरे बढ़ती रहती हैं । कई वर्षों के बाद इस गोलाकार आकृति को काट लिया जाता है । साफ करने पर इन गोलाकार टुकड़ों में, जिन्हें "बर्र" के नाम से जाना जाता है, एक विलक्षण चमक व लुभावना रंग निखर आता है । सजावट के लिए यह एक अनुपम दुर्लभ वस्तु है तथा इसकी मांग बहुत है । प्रशासन ने इसके अंडमान क्षेत्र से बाहर बिना अनुमति ले जाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया है । अंडमान बुलेट वुड जहाजों के निर्माण में प्रयुक्त होती है क्योंकि यह लकड़ी पानी में नहीं सड़ती । दूसरी अन्य साधारण किस्में हैं - बादाम, सफेद व काला चुगलम, पपीता, बकोटा आदि ।

यद्यपि वनों के कटान का काम 1883 में प्रारंभ कर दिया गया था किन्तु प्रारम्भ में केवल पडौक, सिल्वर ग्रे तथा कोको तक ही यह कटान कार्य सीमित रहा क्यों कि बाकी किस्मों की बाहर से कोई मांग नहीं थी। चैथम द्वीप में स्थित एकमात्र आरा मिल इनको चीरने का काम करती थी। 1920 में दियासलाई का कारखाना बना। देश में प्लाईवुड तथा दियासलाई के कारखाने स्थापित होने के परिणामस्वरूप 1930-31 तक पेड़ों की कुछ और किस्में कटकर बाहर जाने लगीं।

यद्यपि यहां के वन पिछले एक सौ बरस से काटे जा रहे हैं परंतु अब भी अधिकांश भाग अगम्य होने के कारण अछूता पड़ा है। उसमें सम्मिलित प्रमुख भाग इस प्रकार हैं, निकोबार द्वीप समूह का समस्त क्षेत्र, अंडमान समूह में पश्चिमी तट के समीप के क्षेत्र, क्यों कि वहां समुद्र प्राय: बहुत अशांत रहता है, उत्तरी अंडमान, द्वीप के अन्दर ऊंचाई पर स्थित वन, जहां न तो समुद्र से जाया जा सकता है और न संकरी खाड़ियों द्वारा पहुंचा जा सकता है।

सागौन की लकड़ी अंडमान के वनों में नहीं पाई जाती थी किन्तु सागौन की वे किस्में जो दक्षिण भारत व थाइलैंड में पाई जाती हैं, उनकी पौध भी यहां पर कृत्रिम रूप में उगाई गई।

एक विशेष प्रकार के अत्यन्त लुभावने घने वृक्ष गरान (मैनग्रौव) हैं, जो समुद्र के बिल्कुल किनारे पर पाए जाते हैं और नित्य ज्वार के समय पानी में आधे डूबे रहते हैं। ये पेड़ इन द्वीपों की एक बहुत बड़ी विशेषता हैं। अनेक वन वृक्ष विज्ञानी इन्हें ज्वारीय वनों के नाम से सम्बोधित करते हैं क्योंकि अंडमान निकोबार द्वीपों समेत एशिया में इस समुद्री पानी की वनस्पति पाश्चात्य देशों के गरान (मैनग्रौव) की अपेक्षा कहीं अधिक किस्मों से सम्पन्न है। सच बात तो यह है कि केवल अंडमान व निकोबार द्वीप समूह में इस कच्छ वनस्पति की चौंतीस विभिन्न जातियां हैं। इस पेड़ की एक विशेषता है इसकी बहुत बड़ी ईंधन शक्ति, इसका एक अन्य गुण है कि वह बिना सुखाए ही जलने लगती है।

खनिज पदार्थ

कुछ खनन सम्बन्धी सर्वेक्षण अतीत में किए गए किन्तु उसमें कोई विशेष सफलता नहीं मिली। लोहे के अलावा कोई अन्य खनिज पदार्थ नहीं मिले। इन द्वीपों में भू-तेल आदि के अक्षय भंडार बताए जाते हैं। कुछ वैज्ञानिक तो कहते सुने गए कि ये द्वीप भू-तेल के ऊपर तैर रहे हैं। इस प्रकार की आशा के लिए उचित कारण भी है, क्योंकि ये द्वीप समूह उसी समुद्र में डूबे हुए पर्वत श्रेणियों का अंग हैं जो बर्मा में हिन्देशिया तक चले गए हैं और इन दोनों स्थानों पर भू-तेल काफी मात्रा में निकला है। इसकी पुष्टि तेल व प्राकृतिक गैस निगम ने अपने प्रारम्भिक सर्वेक्षण से कर दी है। परीक्षा के रूप में विदेशी सहयोग से पोर्ट ब्लेयर के समीप समुद्र में एक कुआं खोदा गया, जहां से गैस बहुत तेजी से बाहर निकली। इंडियन

ऑयल ने अब यहां 10,900 वर्ग किलोमीटर में 62,42 करोड़ की लागत से अन्य तेल के कुएं खोदने का काम आरंभ किया हुआ है।

जीव-जन्तु

प्रारम्भ में इन द्वीपों में विशेष वन्य जीवन नहीं था। जंगली सूअर अधिकांश द्वीपों में पाया जाता है और आदिवासी जनजाति के लोग इसका मांस बड़े चाव से खाते हैं। अंग्रेजों के अधिपत्य के बाद इन द्वीपों में कुछ वन्य जीवन की अन्य जातियां भी छोड़ी गईं किन्तु हिरन के अतिरिक्त अन्य किस्में यहां के वातावरण में नहीं रह सकीं। हिरन के लिए यहां का वातावरण वास्तव में बहुत अनुकूल सिद्ध हुआ है और उनकी संख्या में बहुत वृद्धि हुई है। इनकी इस आशातीत वृद्धि के पीछे यहां की आदिम जनजातियों का इनके प्रति विशेष दया व प्रेम का भाव भी है। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि इन खूंखार तथा मांसाहारी जनजातियों ने हिरन का मांस अपने भोजन में सम्मिलित नहीं किया। हिरन को इन द्वीपों में बाद में लाने के कारण इनके पूर्वजों ने कभी इनके मांस का सेवन नहीं किया था इसलिए इन्होंने भी इसे खाने से मना कर दिया। हिरन इनके आवास स्थानों पर शरण लेते हैं तथा पालतू जानवर की तरह इनके पास रहते हैं। जरावाओं का बाहरी लोगों के प्रति नाराजी का एक कारण यह भी है कि बाहर के लोग हिरन मारने के लिए इनके इलाके में अनाधिकार प्रवेश करते हैं। एक बार यदि उन्होंने चोर शिकारी को पहचान लिया तो वे उसको नहीं छोड़ते।

इन द्वीपों में समुद्री चक्रवात अक्सर आते रहते हैं। ऐसे क्षणों में कभी-कभी जहाज चट्टानों से टकरा जाते हैं या बालू में धंस जाते हैं ऐसे समय में बचे हुए नाविक व यात्री कैसे अपने प्राणों की रक्षा करें ? यह प्रश्न समुद्री यात्रा करने वाले सभी राष्ट्रों के सम्मुख था। इसी उद्देश्य से परीक्षण के तौर पर अंग्रेजों ने एक निर्जन द्वीप बैरन में कुछ बकरियां छोड़ दी थीं। कालान्तर में इनकी संख्या में काफी वृद्धि हो गई है और ये अब पूर्णतया जंगली बन गयी हैं।

उत्तरी अंडमान में एक लकड़ी का कारखाना था। कंपनी ने जंगल से लकड़ी के ढुलान के लिए कुछ हाथी रखे थे। कंपनी का परिसमापन हो गया और हाथियों को यों ही निर्जन द्वीपों में छोड़ दिया गया था। कालान्तर में इन द्वीपों में लोग बस गए तथा हाथियों की संख्या में भी वृद्धि हो गई है तथा वे सब जंगली होकर फसल, उद्यानों आदि का नुकसान करते हैं तथा वहीं लोगों का जीवन भी संकटमय बन चुका है। कुछ लोग इन हाथियों द्वारा मार दिए गए हैं।

इन द्वीपों में विभिन्न प्रकार के पक्षी पाए जाते हैं। इनमें विश्व में दुर्लभ एक विशेष पक्षी, जो केवल इन्हीं द्वीपों में पाया जाता है, को देखने के लिए संसार भर से पक्षी प्रेमी यहां आते हैं। इस पक्षी का नाम मैगापौड है। यह निकोबार द्वीप समूह के ग्रेट निकोबार

द्वीप के पश्चिमी तट पर स्थित मैगापौड द्वीप में पाया जाता है। इस पक्षी की विशेषता है कि यह अपना रंग वातावरण के अनुकूल बदलता रहता है। नारकोंडम का धनेश (हार्नबिल) भी एक दुर्लभ पक्षी है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि इन द्वीपों में लगभग दो सं भकार के पक्षी हैं जिसमें विभिन्न प्रकार के कबूतर व तोते आदि सम्मिलित हैं।

इन द्वीपों में एक विशेष प्रकार का कबूतर पाया जाता है जिसे निकोबारी कबूतर कहते हैं। यह एक आलूचा के रंग की चिड़िया होती है जिसका गला व सिर भूरे रंग का, पूंछ बिल्कुल सफेद तथा बड़े व छोटे परों का रंग धात्विक हरा होता है। एक चितकबरा शाही कबूतर मलाई की तरह सफेद, किन्तु उसके उड़ने वाले पंख तथा पूंछ का आखिरी हिस्सा बिल्कुल काले होते हैं। एक अन्य चैती चिड़िया होती है जिसे अंडमान टील कहते हैं। यह एक प्रकार से बत्तख की उपजाति की है और देखने में बोलने वाली चैती चिड़िया सी लगती है। यह भूरे रंग की होती है, जिसके पंखों तथा गर्दन पर सफेद धब्बे होते हैं। अंडमान में चिड़ियों के घोंसले, जिनमें चीनी व्यापारी व्यापार किया करते थे, पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। ये घोंसले चट्टानी गुफाओं में समुद्र के ऊपर करीब बारह फुट की ऊँचाई पर पाए जाते हैं जहां जाने का रास्ता समुद्र की लहरों द्वारा तोड़ा हुआ रहता है।

यहां अनेक प्रकार के सांप पाए जाते हैं, किन्तु अधिकांश सांप विषैले नहीं होते। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि यहां पर सांप से अधिक लोग कनखजूरा से डरते हैं क्यों कि इसका काटना कहीं अधिक कष्टकर व खतरनाक होता है। हरी छिपकलियां इन द्वीपों की एक विशेषता हैं जो शायद विश्व में दुर्लभ हैं। इन द्वीपों में छिपकलियों की लगभग पन्द्रह किस्में मिलती हैं। उनमें से कुछ आदमी की तरह विचित्र आवाजें निकालती हैं विशेष रूप से रात्रि के समय। अनजान आवाज से नवागन्तुक को विशेष कौतूहल और कभी डर भी लगने लगता है।

इन द्वीपों में समुद्री सम्पदा के अक्षय भंडार हैं जिसके कारण अनेक विदेशी नावें चोरी से मछली के शिकार के लिए यहां आती रहती हैं। विशेषज्ञों के अनुसार इन द्वीपों के सीमांतर्गत जल क्षेत्र में करीब चौबीस प्रकार की मछलियां पायी जाती हैं जिसमें सार्डीन, अनकेंबी, त्यूना, मैकरिल, सिल्वर जेली, झींगा, पोमफ्रेट, अशल्क मीन (कैटफिश), हिल्सा, कारनेक इत्यादि। मीठे पानी में रोहू तथा कुछ अन्य किस्में भी थोड़ी मात्रा में उपलब्ध होती हैं।

इन द्वीपों के समुद्र में हमें कुछ विचित्र प्रकार के समुद्रीय जीव जन्तु मिलते हैं। सीपी के अन्दर का जीव जिसे शैलफिश कहते हैं, उसे आदिवासी जनजाति के लोग बड़े शौक से खाते हैं। यह यहां पर पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। खाली सीपी भी यहां पर एकत्रित की जाती हैं तथा उनकी अच्छी कीमत मिल जाती हैं। कुछ लोग सीपी एकत्रित करने के उद्देश्य से जनजाति सुरक्षित क्षेत्रों में चोरी छिपे घुस जाते हैं जिससे आदिवासियों को बहुत नाराजी

होती है। इन द्वीपों में अनेक प्रकार के केंकड़े भी पाए जाते हैं उनमें से एक को डाकू केंकड़ा कहते हैं। यह नारियल के पेड़ पर चढ़कर नारियल का सख्त छिलका काट कर अंदर की गिरी खा जाता है।

अंडमान व निकोबार द्वीप समूह के समीप के समुद्र में हांगर (शार्क) काफी मात्रा में पाए जाते हैं। स्थानीय लोग इसे "बदमाश मछली" कहते हैं क्योंकि यह आदमियों को काट खाती है। इसके शरीर की संरचना ऐसी होती है कि दूर से बिना देखे सतह पर तैरते हुए आदमी के संकेत इसे अज्ञात मानव किरणों से मिल जाते हैं जो एक प्रकार के रेडार के संदेशों की तरह होता है। यहां पर गहरे समुद्र के पास नहाने में सावधानी की आवश्यकता है अभी हाल में गहरे समुद्र में रहने वाले शार्क पोर्ट ब्लेयर के आस-पास पाए गए हैं। इनका व्यापारिक महत्व बहुत अधिक है, इससे तेल निकालकर विदेशों को भेजा जा सकता है। ग्रेट निकोबार के समीप के समुद्र के गरम पानी में त्यूना मछली की एक बहुत बड़ी पेटी है, जो संसार की मछली पेटियों में सर्वश्रेष्ठ समझी जाती है, किन्तु इसका उपयोग अभी कागजी योजनाओं तक ही सीमित है।

जब भी पानी का जहाज पोर्ट ब्लेयर के समीप पहुंचने को होता है तो मछली के आकार के सूस (डालफिन) का झुंड जहाज के आगे पीछे उछलता कूदता, कभी गायब हो जाता तथा कभी प्रकट हो कर बड़ा मनोरंजन करता है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि चक्रवात में फंसे तथा पथ भ्रष्ट जहाजों का ये मार्गदर्शन करते हैं तथा जहाज के तूफान में टूट जाने की दशा में आदमियों को डूबने से बचाते हैं। इस स्थानीय समुद्रीय जन्तु के मारने पर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिबन्ध है। संसार में बुरे व अच्छे दोनों होते हैं। यहां महासागर में हांगर(शार्क) व सूस (डालफिन) दोनों का होना इस बात की पुष्टि करता है। जहां एक ओर हांगर आदमी को अपनी आरीनुमा दांतों से काट खाने को लालायित रहती है वहां दूसरी ओर सूस आपातकाल में उसके प्राण रक्षा के लिए तत्पर रहती है।

इन द्वीपों में मगरमच्छ काफी संख्या में पाए जाते हैं विशेष रूप से उन संकरी खाड़ियों में जहां समुद्र का जल दूर तक अन्दर चला गया है। मध्य अंडमान में समुद्र तट पर मगरमच्छ के अंडे यत्र-तत्र बिखरे मिलते हैं। मगरमच्छ काफी खतरनाक होते हैं और अवसर मिलने पर आक्रमण कर देते हैं। एक बार मायाबन्दर से कालीघाट जाने वाली संकरी खाड़ी में मगरमच्छ ने एक छोटी नाव को उलटा दिया तथा एक यात्री को पकड़कर ले गया, दूसरा व्यक्ति बड़ी कठिनाई से जान बचाकर भागा।

बन्दरगाह से सेलूलर जेल तक

गरम मसालों तथा अन्य चीजों के व्यापार के सिलसिले में अंग्रेजों के जहाज अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह से होकर बराबर आते-जाते थे। मलय देश के समुद्री डाकू, जो यहां के अनेक छोटे-छोटे द्वीपों में छिपे रहते थे, उन्हें अक्सर लूट लेते थे। मानसून के दिनों में जब खराब मौसम के कारण समुद्र अशांत रहता, जहाजों की सुरक्षा कठिन समस्या बन जाती। अत: ईस्ट इंडिया कंपनी इस क्षेत्र में एक सुरक्षित बंदरगाह की तलाश में थी। सन् 1788 में कंपनी ने रायल नेवी के कप्तान आर्चिबाल्ड ब्लेयर को अंडमान द्वीप समूह के समुद्र तट के समीप विभिन्न स्थानों पर समुद्र की गहराई नापने का कार्य सौंपा। ब्लेयर 1789 में भारत से यहां बसने के इच्छुक 200 भारतीयों को लेकर पहुंचा। जहां आज पोर्ट ब्लेयर है, वहां उसने लंगर डाला, इस बंदरगाह का नाम "पोर्ट कार्नवैलिस" रखा गया। सन् 1790 में ऐडमिरल कार्नवैलिस ने, जो तत्कालीन गवर्नर-जनरल का भाई था, इस स्थान को नौसेना के मुख्यालय के लिए उपयुक्त समझा। स्वयं ब्लेयर ने इस बंदरगाह की तारीफ में टिप्पणी करते हुए कहा था कि यह इतना सुंदर, सुरक्षित एवं विशाल है कि अंग्रेजों का आधा जहाजी बेड़ा इसमें बड़ी आसानी से समा सकता है। कप्तान कीड को, जो सेना की इंजीनियरी शाखा से संबंधित था, सुपरिटेंडेंट के पद पर नियुक्त किया गया और स्वयं ब्लेयर निकोबार द्वीप-समूह की ओर चल दिया।

सन् 1793 में फ्रांस के साथ युद्ध छिड़ने से इस छोटे उपनिवेश की सुरक्षा का प्रश्न उठा। कप्तान कीड ईस्ट इंडिया कंपनी के तत्कालीन मुख्यालय कलकत्ता गया और किलाबंदी करने के लिए कुछ कैदियों को ले आया। परन्तु यहां की खराब जलवायु व मलेरिया के कारण लोग मरने लगे और स्थिति इतनी बिगड़ गयी कि मजबूर होकर 1796 में उन्हें यह उपनिवेश छोड़ ही देना पड़ा। बसने के लिए आये हुए लोग, तोपखाने के सैनिक तथा अन्य सैनिक सब मिलाकर यहां 500 लोग थे। उनके अतिरिक्त 270 कैदी थे। उपनिवेश की समाप्ति पर बंदियों को तो कैदी बस्ती पेनांग भेज दिया गया और बसने के लिए आये हुए लोग तथा गैरीजन के सैनिक वापस कलकत्ता लौट आये।

परन्तु अंग्रेज इन द्वीपों पर जैसे भी हो अपना अधिपत्य बनाये रखना चाहते थे। वे यहा पर एक कैदी बस्ती बनाने के प्रस्ताव पर विचार कर रहे थे। एक प्रस्ताव यह भी था

कि सबसे पहले यहां के खनिज पदार्थों का सर्वेक्षण किया जाये। परन्तु इसी बीच 1857 के महान विप्लव की लपटों से अंग्रेजों का सिंहासन झुलसने लगा।

जो क्रांति मई 1857 में चिनगारी के रूप में प्रकट हुई, वह अनुकूल वायु के वेग से शीघ्र ही भीषण ज्वाला बनकर सारे देश में फैलने लगी। उसके पश्चात यह आग देश के स्वतंत्र होने तक कभी बुझी नहीं वह अंदर ही अंदर सुलगती रही, हमारे शहीद अपने त्याग एवं बलिदानों से उसे बराबर ईंधन व हवा देते रहे। इसीलिए नेताजी सुभाषचंद्र बोस ने उसे "स्वतंत्रता का प्रथम युद्ध" कहा।

परन्तु अंग्रेजों की कूटनीति, दूरदर्शिता तथा योजनाबद्ध कार्यप्रणाली की बलिहारी 1857 की क्रांति के दिनों एक ओर तो वे जीवन मरण के कठिन संघर्ष में व्यस्त थे और क्रांति को दबाने के लिए जी-तोड़ मेहनत कर रहे थे, दूसरी ओर वे इस बारे में भी विचार कर रहे थे कि विजय प्राप्त करने पर हजारों क्रांतिकारी स्वतंत्रता-सेनानियों से किस प्रकार निपटा जाए, ताकि वे फिर सिर न उठा सकें। इन क्रांतिकारियों को रखने के लिए एक उपयुक्त स्थान की तलाश बहुत आवश्यक बन गयी थी अतः उनका ध्यान तुरन्त अंडमान के द्वीपों की ओर गया।

वैसे कुछ इतिहासकारों का मत है कि अंडमान में कैदी बस्ती बनाने का प्रस्ताव पहले ही विचाराधीन था और 1857 की क्रांति से उसका कोई संबंध नहीं था। परन्तु उनकी बात तथ्यसंगत नहीं है। निश्चित रूप से इस कैदी बस्ती की स्थापना 1857 के क्रांतिकारियो को रखने के लिए ही की गयी थी। इसकी पुष्टि स्वयं एफ. जे. माउंट ने की है। अपनी पुस्तक "द अंडमान आइलैंडर्स" में वह लिखता है कि तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड कैनिंग ने इस योजना में बहुत अधिक रुचि ली थी।

लार्ड कैनिंग ने क्रांतिकारियों के लिए अंडमान में कैदी बस्ती बनाने की दृष्टि से माउंट के तत्वावधान में एक आयोग की नियुक्ति की, जिसके अन्य दो सदस्य थे डा. जी. आर. प्लेफ्रेयर तथा नौसेना के लैफ्टिनेंट आई. एस. हीथकोट। आयोग के अंडमान को प्रस्थान करने के पूर्व लार्ड कैनिंग ने उन्हें रात्रि भोज के लिए आमंत्रित किया। क्रांति के कारण उस रात लार्ड कैनिंग की जो मानसिक स्थिति थी उसका भी चित्रण माउंट ने किया है। भोजन के उपरांत जब वे लोग वार्तालाप के लिए काफी कक्ष में पहुंचे, तो लार्ड कैनिंग बैठे-बैठे सो गये और लखनऊ की रेसीडेंसी में घिरे अंग्रेजों की स्थिति के बारे में एक आवश्यक संदेश के लिए मजबूरी में उन्हें जगाया गया। संदेश पढ़कर उनका चेहरा उदास हो गया। जब माउंट ने समाचार जानने की उत्सुकता प्रकट की, तो उन्होंने उसे बताया कि कोई खुशखबरी नहीं है। माउंट लिखता है कि लार्ड कैनिंग अंडमान में कैदी बस्ती की स्थापना के लिए बहुत आतुर थे और इस आयोग पर बहुत आशा लगाये हुए थे।

आयोग ने अंडमान द्वीपसमूह का भ्रमण किया। कुछ जनजातियों से उसकी मुठभेड़ भी हुई। आयोग ने कैदी बस्ती बनाने की सिफारिश की, जिसे कंपनी ने स्वीकार कर

लिया। संभवत: ईस्ट इंडिया कंपनी की यह अन्तिम कार्यवाही थी। कैप्टन ब्लेयर की महान सेवाओं के लिए अठाहरवीं सदी के अन्त में कार्नवैलिस बन्दरगाह का नाम बदलकर पोर्ट ब्लेयर रखा गया। कप्तान मान से, जो उस समय मौलमीन में एक्जीक्यूटिव इंजीनियर तथा जेल-सुपरिटेंडेंट था, कहा गया कि वह कैदी बस्ती की स्थापना के लिए तुरन्त पोर्ट ब्लेयर पहुंचे। मान ने 22 जनवरी 1858 को अंडमान में अंग्रेजी झंडा फहराया। परन्तु कैदी बस्ती की स्थापना की दिशा में असली काम डा. जैम्स पेटीशन वाकर ने किया। वह आगरा जेल में सुपरिटेंडेंट था और कठोर शासन के लिए बदनाम था। उसे माउंट की सिफारिश पर विशेष रूप से इस काम के लिए चुना गया था। वाकर कलकत्ता से 4 मार्च 1858 को एक भारतीय डाक्टर तथा एक ओवरसीयर की देखरेख में 500 कैदियों और 50 नौसैनिकों के साथ रवाना हुआ और 10 मार्च को पोर्ट ब्लेयर पहुंचा, पर वहां बंदियों के लिए न भोजन की व्यवस्था थी न आवास की। भोजन आदि सामान के साथ "सेमीरामी" जहाज 20 मार्च को पहुंचा। कप्तान वाकर ने चैथम के छोटे-से द्वीप की सफाई प्रारंभ की, जैसा कि 69 वर्ष पूर्व कप्तान ब्लेयर ने की थी परन्तु पेयजल की कमी के कारण अंततः एक अन्य द्वीप "रौस" में जंगल-कटान व सफाई का काम शुरू करना पड़ा।

विषुवत्-रेखा के समीप की ऊष्ण जलवायु, साल में लगभग नौ माह लगातार भीषण वर्षा, घने व बियाबान जंगलों में गगनचुंबी वृक्ष, जिन पर लिपटी असंख्य बेलें व अन्य पौधे सूर्य का प्रकाश प्राप्त करने की होड़ में उन्हें इस तरह जकड़े रहते हैं कि काटने पर भी पेड़ भूमि पर नहीं गिरते, दूसरे पेड़ों के साथ बंधी बेलें उन्हें ऊपर ही थाम लेती हैं। नीचे इतना अंधकार कि बिना मशाल लिये दिन में भी इन जंगलों के अंदर घुसना कठिन तिस पर विषैले सांपों, कनखजूरों, मच्छरों, कीड़े-मकौड़ों के कारण नाकों दम। ऐसे जंगलों की कटाई व सफाई के काम में 1857 के क्रांतिकारी स्वतंत्रता-सेनानियों को जोत दिया गया। वस्तुतः इनमें से अधिकांश बड़े-बड़े जमींदार, नवाब, विद्वान और कवि थे, जिनके घरों में अनेक नौकर-चाकर थे। इन्होंने जीवन में इस प्रकार काम कभी नहीं किया था।

मार्च में क्रांतिकारी यहां लाये गये। अप्रैल से यहां वर्षा प्रारंभ हो जाती है। छप्पर बनाने के लिए बांस व पत्तियों की आवश्यकता थी, जो केवल दक्षिण अंडमान के बड़े द्वीप में उपलब्ध हो सकते थे परन्तु वहां पर भयानक खूंखार "अंडमानी" व "जरावा" आदिवासी जनजातियां रहती थीं, जो मौका मिलते ही बंदियों को मार डालती थीं। अत: मजबूर होकर वाकर ने छप्पर बनाने के सामान के लिए 17 अप्रैल 1858 को एक बड़ी नाव "प्लूटो" टैवोय (बर्मा) भेजी।

टैवोय में सारा सामान एक पुरानी, सड़ी-गली चीनी नाव में रखकर उसे "प्लूटो" द्वारा समुद्र में खींचा गया। जैसे ही "प्लूटो" उस स्थान पर पहुंचा, जहां से अंडमान द्वीप की पहाड़ियां दृष्टिगोचर होने लगीं, एकाएक मौसम खराब हो गया। बहुत तेज मानसूनी हवाएं उलटी दिशा में बहने लगीं। समुद्र अशांत हो गया। "प्लूटो" को मजबूर होकर वापस टैवोय लौटना पड़ा।

इस असफल अभियान में ब्रिटिश सरकार को ढाई हजार रुपये का नुकसान हुआ। वाकर को चेतावनी दी गयी कि भविष्य में बड़ी नाव का प्रयोग इस प्रकार के कामों के लिए न करें तथा छप्परों के लिए पत्तियां स्थानीय रूप से प्राप्त की जायें। सरकार के लिए ढाई हजार रुपये क्रांतिकारियों के प्राणों से कहीं अधिक मूल्यवान थे।

अंडमान का महान इतिहासकार एम. वी. पोटमैन इस घटना के विषय में लिखता है, "इस पर परिषद् के अध्यक्ष ने अपनी टिप्पणी में लिखा कि उन्हें आशा है, भविष्य में दुबारा इसे पत्ती आदि के लिए तनासरीन के तट पर भेजने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी और उन्हें अंडमान में प्राप्त किया जाएगा। उन्होंने भविष्य में पत्ती आदि लाने के लिए स्टीमर के प्रयोग की निश्चित रूप से मनाही कर दी।"

ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के स्थानीय अधिकारियों ने अंडमान में राजनीतिक बंदी क्रांतिकारी स्वतंत्रता-सेनानियों के साथ जो बर्बरतापूर्ण दुर्व्यवहार किया, उसकी कालिमा शायद कभी धुल नहीं पायेगी। बंदियों से बड़ी विषम परिस्थितियों में जी-तोड़ मेहनत करायी जाती। बात-बात पर उन पर कोड़े बरसाये जाते। न तो उनके भोजन की उचित व्यवस्था थी न रहने की। उपचार की व्यवस्था के अभाव में वे मलेरिया, आंव-खून, न्यूमोनिया आदि बीमारियों से मरने लगे। उन्हें अकेले ऐसे द्वीप में छोड़ दिया गया, जहां हिंसक "जरावा" व "अंडमानी" तीरों की वर्षा से उनकी जीवन्-लीला समाप्त कर देते थे। उन्हें अपने बचाव के लिए बंदूकें नहीं दी गयीं, क्योंकि अंग्रेजों को भय था कि बंदूकें पाकर कहीं वे विद्रोह न कर दें। 7 मई 1858 को भारत सरकार के गृह सचिव ने वाकर को एक पत्र भेजा जिसमें उसने लिखा, "परिषद् के अध्यक्ष चाहते हैं कि मैं आपको सावधान कर दूं कि बंदियों द्वारा हमारी सत्ता के प्रतिरोध में कोई प्रत्यक्ष इरादा या इच्छा के अभाव में सुरक्षा के भ्रम में कदापि मत पड़ जाना। सन्तरी के अग्निशस्त्र सदैव भरे हुए रहने चाहिएं और चाहे बन्दियों की कितनी ही संख्या क्यों न हो, उनके लिए संभव नहीं होना चाहिए कि वे एकाएक झपट्टा मारकर इन्हें एक क्षण के लिए भी अपने हाथ में ले लें। सन्तरी को सबसे कम समय में तुरन्त गोली चलाने के लिए सदैव तैयार रहना चाहिए।"

क्रांतिकारी स्वतंत्रता-सेनानी इस नरक-तुल्य जीवन से मृत्यु को कहीं अधिक अच्छा समझते थे और अवसर पाकर वे निकल भागते थे। लेकिन चारों ओर अथाह समुद्र था, द्वीपों में हिंसक जनजातियां थीं, जाते भी तो वे किधर जाते। नारायण जो दीनापुर की छावनी में अंग्रेजों के विरुद्ध सैनिकों को भड़काने के आरोप में आजन्म कारावास की सजा पाकर आया था, यहां पहुंचने के चौथे दिन ही भाग गया। वाकर ने एक पत्र में लिखा है, - "वह जब अन्य कैदियों को भड़काने में सफल नहीं हुआ, तो चैयम द्वीप से अंडमान के बड़े द्वीप की ओर तैरते हुए भाग गया। वह अपने उद्देश्य में सफल भी हो गया होता, यदि बंदूकों की गोलियों की बौछार के कारण उसे अपना मार्ग न बदलना पड़ता।" आखिर में वह पकड़ा गया और उसे फांसी दे दी गयी।

उन्हीं दिनों वाकर के अत्याचारों से तंग आकर नारायण सिंह ने, जो नदिया से लाये गये थे, रौस द्वीप में गले में रस्सी का फंदा डालकर आत्महत्या कर ली।

18 मार्च को 21 क्रांतिकारी रौस द्वीप से भाग गए। 23 मार्च को इनमें से एक ने अपने को प्रशासन के हवाले कर दिया। वाकर का कहना था कि उसके शरीर का रोम-रोम एक प्रकार के बहुत छोटे कीड़ों से भरा हुआ था। यहां तक कि उसकी आंखों की पलकें व कान तक भी इनसे खाली नहीं थे। वाकर के अनुसार, बंदी ने उसे बताया कि उसके साथी कैदी ने कहा था कि मैंने जंगली जातियों के सरदार से बात कर ली है और वे हमें शरण देंगे। परन्तु जैसे ही वे लोग कुछ दूर जंगल में गये, लगभग एक सौ जंगली आदिवासियों ने उन पर हमला बोल दिया। उसका अगुआ मारा गया और वह स्वयं भागने में सफल हुआ।

वाकर के अत्याचार दिन-प्रतिदिन बढ़ते गये। दो-दो बंदियों को एक साथ एक ही हथकड़ी से बांधा जाता था। यह हथकड़ी कभी नहीं खोली जाती थी। भोजन, स्नान, शौचादि क्रियाओं में इससे कितनी अधिक दिक्कत और मानसिक वेदना होती होगी, इसकी कल्पना ही की जा सकती है। काम में थोड़ी भी कमी होने पर बंदियों को बड़ी सख्त सजा दी जाती थी। उन्हें टोलियों में समुद्र के किनारे ले जाकर बैठाया जाता और एक लंबी लोहे की छड़ उनके पांवों की बेड़ियों के बीच से होकर डाली जाती, जिसके दोनों सिरों को मजबूती से जमीन पर गाड़ दिया जाता। इसी हालत में उन्हें काम करना पड़ता।

जब यातनाएं सहन-शक्ति की सीमा को पार कर गयीं, तो "मरता क्या न करता" कहावत को चरितार्थ करते हुए बंदियों ने भागने की योजनाएं बनायीं। दक्षिणी अंडमान के बड़े द्वीप में स्थित फोनिक्स बे के बंदी जंगलों की ओर भाग सकते थे। रौस में स्थित बंदियों ने लकड़ी की बल्लियों को बेलों से बांध कर लट्ठों का बेड़ा बनाया और भाग निकले परन्तु चैथम द्वीप में इस प्रकार की कोई सुविधा नहीं थी। अतः फोनिक्स बे के क्रांतिकारियों ने उनके लिए भी एक बेड़ा बनाकर रात्रि में पूर्वनिश्चित स्थल पर पहुंचाया। इस प्रकार इन वीरों ने समुद्र की विकराल लहरों का आलिंगन करते हुए इन छोटे बेड़ों की सहायता से अनन्त, उन्मुक्त सागर की ओर प्रस्थान किया। संभव है उनमें से कुछ भाग्यवानों को अनुकूल हवा की सहायता से बर्मा, मलाया, श्रीलंका या भारत के किसी निर्जन तट पर शरण मिली हो पर जो लोग यहीं पर रहे, उनका जीवन निरंतर अधिक ही कष्टमय होता गया।

अंडमान के इतिहास विशेषज्ञ पोटमैन का कहना है, 15 अप्रैल 1858 को वाकर की पत्नी उनके पास आ गयी। जून 1858 के अंत तक 773 क्रांतिकारी स्वतंत्रता-सेनानी बंदी के रूप में पोर्ट ब्लेयर लाये गये थे। उनमें से 140 भाग निकले। वे या तो असीम सागर की उत्ताल तरंगों में विलीन हो गये, या हिंसक आदिवासियों के तीरों के निशाने बने। 87 क्रांतिकारियों को भागने के प्रयास के अपराध में फांसी दे दी गयी। 64 क्रांतिकारी बंदी प्रतिकूल जलवायु, मलेरिया, आंव-खून, न्यूमोनिया से मर गये। एक ने आत्महत्या

कर ली। इस प्रकार कुल 292 मर गये। शेष 481 में से 60 गंभीर रूप से बीमार थे परन्तु इस स्थिति से वाकर तनिक भी निराश नहीं हुआ। इसके विपरीत, वह भूखे शेर की तरह बंदियों पर पिला ही रहा। बहुत अभिमानपूर्वक वह तत्कालीन प्रशासन को लिखता है कि हम इस वर्ष 10,000 बंदियों को ले सकते हैं और लगातार पांच वर्ष तक प्रति वर्ष 10,000 कैदियों को यहां भेजा जा सकता है।

इधर गवर्नर-जनरल ने सैनिक अदालतों से गुप्त रूप से पता लगाया कि कितने क्रांतिकारियों को आजन्म कारावास दिये जाने की संभावना है। उसी बीच शासन ने यह घोषणा की कि जो क्रांतिकारी आत्मसमर्पण कर देंगे, उन्हें क्षमादान दिया जायेगा। इस नीति के परिणामस्वरूप वाकर को सूचना दी गयी कि भेजे जाने वाले बंदियों की संख्या संभवतः पूर्वानुमान से कम होगी। वाकर को यह भी लिखा गया कि भागने के अपराध में मृत्युदंड न दिया जाये। लेकिन कैदियों के भागने से वाकर बहुत असंतुष्ट था। उसने सुझाव दिया कि इसे रोकने के लिए बंदियों के परिवार पोर्ट ब्लेयर भेज दिये जायें परन्तु उचित व्यवस्था के अभाव में ऐसा करना संभव नहीं था। इस पर वाकर ने दूसरा सुझाव रखा कि बंदियों को जानवरों की भांति चिह्न कर दिया जाये ताकि भागने के बाद भी उन्हें पकड़ा जा सके परन्तु भारत सरकार ने इसे स्वीकार नहीं किया।

भागने के लिए मृत्युदंड देना वाकर का अमानुषिक अपराध था। बंदियों को भागने पर मृत्युदंड देने का विधान संसार की किसी भी दंड संहिता में नहीं है पर अंग्रेज लेखकों ने उसके इन काले कारनामों पर पर्दा डालने का असफल प्रयास किया है। पोटमैन ने दलील दी है कि जब से वाकर की पत्नी अंडमान पहुंची, वह अपने को असुरक्षित समझता था और उसने सोचा कि शायद सख्ती करने से विद्रोह रोका जा सकेगा, क्योंकि सुरक्षा के लिए जो पचास नौसैनिक नियुक्त थे, वे किसी भी प्रकार का अनुशासन नहीं मानते थे। पोटमैन बताता है कि वास्तव में ये लोग नौसेना के सैनिक नहीं थे। ये 1857 के सैनिक विद्रोह के दिनों में जल्दी में भरती किये गये थे और अधिकांशतः "मर्चेंट नेवी" के थे। अतः क्रांतिकारियों पर नियंत्रण रखने के लिए वे पूर्णतया अनुपयुक्त थे।

पोटमैन आगे कहता है - "कागजात के देखने से तथा बंदियों के बयानों से मुझे मालूम हुआ है कि उस समय बागी कैदी हरदम मारपीट करने के लिए तैयार रहते थे तथा कोई भी आज्ञा मानने को तैयार नहीं होते थे। विशेष रूप से, पांच सौ पंजाबियों के दल ने बहुत परेशान किया और वाकर को सख्ती के लिए मजबूर किया। डा. वाकर का एकमात्र उद्देश्य था कैदी बस्ती को पूर्ण अनुशासन में रखना, जैसा अनुशासन वे जेलर के रूप में आगरा में देख चुके थे परन्तु वे यह भूल गये कि यहां परिस्थितियां बिल्कुल भिन्न हैं।"

इसी प्रकार आर. एफ. लेविस ने 1911 में लिखा है - "डा. वाकर ने अनुशासन स्थापित करने के लिए जरूरत से ज्यादा सख्त व क्रूर कदम उठाये जिसके लिए उनकी भर्त्सना की गयी है परन्तु उनके बारे में कोई निर्णय देने के पूर्व उस समय की स्थिति तथा

उन्हें सौंपे गये महत्वपूर्ण तथा कठिन कार्य का भी ख्याल करना चाहिए । जिन लोगों के शासन की जिम्मेदारी उन्हें दी गयी थी, वे विद्रोही थे । अधिकांश को आजन्म कारावास की सजा दी गयी थी । आजकल के मुकाबले में तब यह सजा बहुत सख्त हुआ करती थी । ये मरने-मारने के लिए तैयार रहने वाले लोग थे, जिन्होंने सैनिक विद्रोह के दिनों में कड़ा संघर्ष देखा था । उन्हें इस आजन्म कारावास से मुक्ति की कोई आशा नहीं थी । अत: यहां से भागने का खतरा उठाने में उन्हें कोई हानि नजर नहीं आती थी बल्कि उन्हें आशा थी कि शायद इससे कुछ लाभ हो । किसी भी क्रांतिकारी के दिल में विद्रोह की आग बुझी नहीं थी । अत: ऐसे बागियों के विरुद्ध उठाये गये सख्त एवं क्रूर कदमों के पीछे आम जनता (अर्थात अंग्रेज जनता) की स्वीकृति है, भले ही तत्कालीन ब्रिटिश सरकार के विचार तथा नीतियां कुछ भी रही हों ।"

पोटमैन भी इसी प्रकार के विचार व्यक्त करते हुए लिखता है, "उन अधिकारियों से, जो गदर के दिनों जीवन-मरण की समस्या से जूझे थे, गदर के तुरंत बाद बागियों तथा विद्रोहियों के प्रति जरूरत से ज्यादा नरमी के रुख की आशा नहीं की जा सकती थी" ।

वैसे तो बंदियों को अंडमान भेजने के पूर्व ब्रिटिश सरकार ने अपनी टिप्पणी में स्पष्ट किया था, "इस बात को मान कर चलना चाहिए कि वे बागी तथा विद्रोही जो देश निकाले तथा आजन्म कारावास की सजा में विभिन्न सैनिक तथा असैनिक ट्राइब्युनलों द्वारा यहां भेजे जायेंगे, वे वास्तविक अर्थ में पेशेवर अपराधी नहीं होंगे और जिन अपराधियों का सामना स्थानीय प्रशासन को करना होगा उनमें वे लोग होंगे, जिन्हें अन्य लोग बहका कर ले गये थे, अत: वे लोग खतरनाक व नियंत्रण के बाहर नहीं होंगे, परन्तु इनमें राजनीतिक भावना अवश्य होगी" परन्तु वाकर ने अपने पागलपन में इन देशप्रेमियों को अकारण सताया तथा बिना अपराध के फांसी के तख्ते पर चढ़ाया—शायद इसलिए कि इनकी चीत्कार अथाह सागर को पार कर मातृभूमि तक नहीं पहुंच सकती थी ।

अब तो उन क्रांतिकारी स्वतंत्रता-सेनानियों के नाम का पता लगाना भी बहुत कठिन है, जो काले पानी की सजा देकर यहां भेजे गये थे । एक विशेष कारण है इसका द्वितीय महायुद्ध में 23 मार्च 1942 से 9 अक्टूबर 1945 तक इन द्वीपों पर जापान का अधिपत्य रहना । युद्ध के दिनों में कोई राष्ट्र कितना क्रूर व निर्दयी हो जाता है, इसका सबसे भयंकर उदाहरण उसने पेश किया । सारे अंग्रेजी कागजात भी जला दिए गए जिससे 1857 के स्वतंत्रता-सेनानियों के तथा बाद के बंदियों के सभी कागजात नष्ट हो गए ।

ऐसा अनुमान है कि प्रारंभ में लगभग 2,500 क्रांतिकारी स्वतंत्रता-सेनानी यहां भेजे गये । उनमें से निम्नलिखित नामों पर आमतौर पर सहमति है ।

फजलुल हक खैराबादी (सीतापुर, उत्तर प्रदेश) के मौलवी थे । वे क्रांति के समय दिल्ली रेजिडेंसी में सिरिश्तेदार थे । उन्होंने 1857 की क्रांति में दिल्ली की मुक्ति का विधान बनाया था । दिल्ली पर अंग्रेजों के कब्जे के बाद वे खैराबाद चले गये, जहां वे पकड़े गये ।

वे सुप्रसिद्ध उर्दू शायर मिर्जा गालिब के दोस्त थे। इलाहाबाद के मौलवी लियाक़त अली ने विद्रोही सेना का नेतृत्व किया था। बाद में वे हज के लिए भाग गये थे। रास्ते में पकड़े गये तथा वापस लाये गये। हिमनोहल सिंह तथा कूड़ासिंह दोनों बाप-बेटे मुजफ्फरनगर के बड़े जमींदार थे और उन्होंने अंग्रेजों का कड़ा मुकाबला किया था। हत्तेसिंह घेस (उड़ीसा) के बड़े जमींदार थे। भीमा नायक भीलों के मुखिया थे। गरबादास पटेल गुजरात में खेड़ा जिले में आणंद के मुखिया थे।

दूधनाथ तेवाड़ी 14 वीं रेजीमेंट का सिपाही था। झेलम में विद्रोह के लिए उसे आजन्म कारावास की सजा में अंडमान भेजा गया था। अंडमानी जनजातियों के आक्रमण में वह बुरी तरह घायल होकर बेहोश हो गया था। इस मरणावस्था में अंडमानी उसे अपने डेरे पर ले गये और उसका उपचार किया। अंडमान के इतिहास में यही ऐसा एकमात्र उदाहरण है कि कोई अंडमानियों के हाथ में पड़कर जीवित बचा हो। इतना ही नहीं उन्होंने दूधनाथ को अपने गिरोह में सम्मिलित कर लिया तथा एक अंडमानी लड़की से उसकी शादी भी कर दी।

एक बार इन आदिवासी जनजाति के लोगों ने अबरडीन की बस्ती पर विशाल आक्रमण की योजना बनायी। दूधनाथ को इस बात से बड़ी चिंता हुई कि उसके अनेक पुराने साथी बेकसूर मारे जायेंगे। उसने आगे आकर अंग्रेज अधिकारियों को इस बात की सूचना दे दी। जब मध्यरात्रि में हमला हुआ तो उसे विफल कर दिया गया। इस विशेष सेवा के लिए दूधनाथ को क्षमादान देकर छोड़ दिया गया। उसने मुख्यभूमि लौटकर एक अंग्रेज के पास नौकरी कर ली। बाद में एक बार उस अंग्रेज के साथ उसे पुनः अंडमान जाने का अवसर मिला। उसकी कहानी की सत्यता जानने के लिए अंग्रेज अधिकारी उसे अंडमानियों के डेरे पर ले गये। उसकी अंडमानी पत्नी उसके गले लग कर रोने लगी। वैसे अंग्रेजों ने स्वतंत्रता सेनानियों को यहां से किसी भी तरह बाहर नहीं जाने दिया। दूधनाथ तेवाड़ी के अतिरिक्त इसका केवल एक और उदाहरण मिलता है। सन् 1907 की प्रशासनिक रिपोर्ट में मुसई सिंह को 1857 के स्वतंत्रता युद्ध में भाग लेने के आरोप में सजा दी गयी थी। आज्ञाकारी आदर्श कैदी होने के कारण 1884 में उसे पोर्ट ब्लेयर में इस शर्त के साथ मुक्त कर दिया गया कि वह उस शहर से बाहर नहीं जायेगा। 48 वर्ष पोर्ट ब्लेयर में व्यतीत करने के पश्चात पुलिस की निगरानी में उसे इस शर्त पर रंगून में छोड़ा गया कि वह किसी भी प्रकार के राजनीतिक मामलों में भाग नहीं लेगा। इसके लिए भी वायसराय की सरकार ने इंग्लैंड से भारत सचिव की पूर्वानुमति प्राप्त की थी।

नौ महीनों तक स्वतंत्रता-सेनानियों को मानसून की घोर वर्षा में खुले आसमान के नीचे रखने के बाद 6 नवंबर 1858 को वाकर भारत सरकार को भेजी गयी अपनी रिपोर्ट में लिखता है कि रौस द्वीप में एक हजार कैदियों के लिए जमीन से चार फुट ऊँची झोपड़ियां तैयार कर दी गयी हैं और आशा है कि इससे बंदियों के स्वास्थ्य में सुधार होगा।

28 सितम्बर 1858 तक 1,333 बंदी यहां आ चुके थे। उनमें से 169 बंदी उपचार के अभाव में बीमारियों से मर चुके थे और 91 बंदी सख्त बीमार थे। 8 अक्तूबर 1858 को एक नये द्वीप "वाइपर" में कैदियों की चार टुकड़ियां भेजी गयीं।

स्वतंत्रता-सेनानियों पर अधिक सख्त नियंत्रण रखने तथा उनके मनोबल को गिराने की दृष्टि से उनकी गतिविधियों की पूर्ण सूचना प्राप्त करते रहने की व्यवस्था की गयी। अनेक पेशेवर अपराधी कैदी मुख्यभूमि से यहां पर स्थानांतरित किये गये। उन्हें क्रांतिकारियों के बीच मिला दिया गया तथा उनके बारे में गुप्त सूचनाएं देने के लिए इन नए कैदियों को प्रोत्साहित किया गया। उन्हें क्रांतिकारियों के नियंत्रण व शासन की जिम्मेदारी भी सौंपी गयी। क्रांतिकारियों के संगठन में जहर घुल गया। हर तरह की सूचनाएं मिलने लगीं और भागने वाले पहले ही पकडे जाने लगे। सभी एक दूसरे पर शक करने लगे।

अब स्वयं वाकर भी यहां की परिस्थितियों से बहुत परेशान हो चुका था। उसने सरकार से अनुरोध किया कि उसकी सहायता के लिए एक डिप्टी सुपरिटेंडेंट दिया जाये, जो उसकी बीमारी के समय में कार्य संभाल सके। 26 मार्च 1859 को वाकर को सेना में सर्जन के पद पर तरक्की मिल गयी और उसने जेल-सुपरिटेंडेंट के पद से इस्तीफा दे दिया। अब होटन ने कार्यभार संभाला। कैदी बस्ती में घी के दिये जल उठे।

स्वतंत्रता-सेनानियों को प्रतिदिन एक आना नौ पाई (लगभग 11 नये पैसे) के हिसाब से भत्ता दिया जाता था। इसमें उनके भोजन, कपड़े तथा अन्य सभी चीजों का खर्चा सम्मिलित था। उस सस्ते जमाने में भी इसमें वे मुश्किल से ही जी सकते थे। शायद अंग्रेजों का उद्देश्य भी यही था। इस तथ्य को 1874 की जेल मैन्युअल में कानूनी रूप से स्पष्ट किया गया है। काले पानी की सजा की परिभाषा उसमें इन शब्दों में की गयी है – "आजन्म देश निकाले की सजा का अर्थ है स्वास्थ्य कायम रखने के लिए नितांत आवश्यक भोजन मात्रा के साथ, कड़े अनुशासन में सख्त मेहनत। इस नियम में जरा भी रियायत केवल मेहरबानी मानी जायेगी, जो किसी भी समय अंशत: या पूर्णत: वापस ली जा सकती है।" विषम जलवायु, कठिन परिश्रम तथा पौष्टिक भोजन के अभाव में बंदियों का स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन क्षीण होता गया। राबर्ट नेपीयर ने 1863 में लिखा था - "इस बात का पता लगाना कठिन है कि कैसे ये लोग इतने कम पैसे में गुजारा करते हैं। इसका एक अवश्यंभावी परिणाम यह है कि ये लोग कपड़ों पर बहुत कम खर्च कर पाते हैं। कैदी बस्ती के निरीक्षण के दौरान कौंसिल के अध्यक्ष केमन पर इस बात की बड़ी छाप पड़ी कि काम करते हुए अधिकांश कैदियों के बदन पर केवल चिथड़े थे।"

कैदी बस्ती में कड़ा अनुशासन रखने के उद्देश्य से वाइपर द्वीप में एक चहार दीवारी-युक्त जेल का निर्माण शुरू किया गया जो 1867 में पूरा हुआ। कैदी बस्ती का अनुशासन भंग करने वालों को यहां बेड़ियों से जकड़ कर रखा जाता था तथा उस स्थिति में भी उनसे काम कराया जाता था। अत: यह वाइपर चेन-गैंग जेल कहलाया।

सन् 1868 में कर्नल मान, जो बाद में जनरल मान के नाम से विख्यात हुआ, सुपरिटेंडेंट के पद पर नियुक्त होकर यहां आया। इसके पूर्व जब वह कप्तान था, उसने जनवरी 1858 में प्रथम बार यहां पर अंग्रेजों का झंडा फहराया था। उसने स्टेटस कैदी बस्ती के नियम यहां पर भी लागू किये। इन नियमों के अंतर्गत महिला कैदी भी यहां पर लायी गयीं। सन् 1869 तक अंडमान की कैदी बस्ती में शादी-ब्याह करने तथा बसने के नियम बनाये गये। सन् 1869 तक अंडमान की कैदी बस्ती बर्मा के चीफ कमिश्नर के अधीन थी। उसके बाद यह सीधे भारत सरकार के अधीन कर दी गयी। गवर्नर जनरल लार्ड मेयो ने जेल-सुधार में व्यक्तिगत रुचि ली परन्तु 8 फरवरी 1872 को पोर्ट ब्लेयर में एक पठान कैदी शेर खां ने उनकी हत्या कर दी। तत्पश्चात प्रशासन का दर्जा ऊंचा किया गया और यहां पर चीफ कमिश्नर की नियुक्ति की गयी।

अंग्रेजों ने अपने निवास के लिए रौस द्वीप में विशाल सुंदर अट्टालिकाओं से सुसज्जित मुख्यालय बनाया। इसमें अनेक सुंदर बंगले, गिरजाघर, क्लब, क्रिकेट-टेनिस-गोल्फ के मैदान, तैरने के तालाब तथा खेलकूद, आमोद-प्रमोद के विविध साधन आदि की व्यवस्था की गयी चूंकि मुफ्त मजदूरों के रूप में सैकड़ों कैदियों की सेवाएं उपलब्ध थीं अतः इसे संवारने सजाने में कोई कसर नहीं रखी गयी। रौस द्वीप को अंगेज प्रशासकों ने अपने तथा गोरी पलटन के निवास के लिए सुरक्षित रखा।

जैसे-जैसे समय बीतता गया, कैदी बस्ती में क्रांतिकारी स्वतंत्रता-सेनानियों का स्वतंत्र अस्तित्व लगभग समाप्त हो गया। वे अन्य पेशेवर अपराधियों के साथ घुल-मिल गये। फिर भी प्रशासन उन पर कड़ी निगाह रखता था। उसमें से कुछ ने महिला बंदियों के साथ शादी करके इन द्वीपों में एक नये जाति व वर्ण-विहीन समाज का सृजन किया।

सन् 1874 में यहां कुल 7,820 पुरुष और 895 महिला आजन्म कैदी थे। 500 विवाहित जोड़ों व 578 बच्चों को मिला कर 1,167 कैदी छुट्टी की आज्ञा पर थे, जिनमें 367 महिला कैदी थीं। 824 एकड़ भूमि साफ की गयी थी तथा 405 एकड़ पर खेती होने लगी थी। कालांतर में बढ़ती जनसंख्या के कारण कानून व अपराध की समस्याएं बढ़ने लगीं। इन पर नियंत्रण पाने के लिए सेलूलर जेल का निर्माण-कार्य हाथ में लिया गया।

कमल के फूल की पंखुड़ियों की तरह सात भुजाओं वाली तिमंजिली अनूठी जेल भारत में पहली बार पोर्ट ब्लेयर (अंडमान) में निर्मित हुई। इसका निर्माण कार्य 1896 में प्रारंभ हुआ और 1906 में पूरा हुआ। इस कारागार की 698 कोठरियां मुख्यतया राजनीतिक बंदियों के एकांतवास के लिए बनायी गयी थीं। एकांत कोठरी को अंग्रेजी में सेल कहते हैं। इसीलिए इसे सेलूलर जेल कहा गया। भवन के मध्य सबसे ऊंची मीनार पर खड़े होकर केवल एक संतरी ही सातों भुजाओं पर सीधी निगरानी रख सकता था। दूसरी विशेषता यह थी कि एक भुजा से दूसरी भुजा में आने के लिए केंद्रीय मीनार पर आना आवश्यक था।

अंग्रेज बड़ी चतुराई व चालबाजी से संपूर्ण भारत पर अधिपत्य जमाने में सफल हो गए थे किन्तु 1857 की क्रांति के बाद अंग्रेजों का आत्मविश्वास हिल-सा गया था। पीली कमीशन ने, जो सैनिक विद्रोह की पृष्ठभूमि तथा भविष्य की नीतियों की रूपरेखा प्रस्तुत करने के लिए बनाया गया, दक्षिण अफ्रीका की तरह उपनिवेश बनाने से मना कर दिया और रिपोर्ट में सिफारिश की गई कि भारत पर सैनिक शक्ति से शासन किया जाये। भारत का पूरा आर्थिक शोषण करने के लिए कड़े शासन का अनुसरण ही उनका एकमात्र लक्ष्य रह गया था। उनकी मानसिक अवस्था का चित्रण उस समय प्रकाशित जहरीले लेखों में मिलता है। लार्ड एलगिन ने अपने एक लेख में लिखा – "इन नीच लोगों के बीच रहना एक बहुत भयानक काम है। जब से मैं पूरब में आया हूं, मैंने शायद ही किसी पुरुष या स्त्री से ऐसा शब्द सुना हो, जो ईसाई धर्म के इस संसार में आने का प्रतीक हो। जहां भी चीन या हिंदुस्तान का जिक्र आया, वहां घृणा, गुस्सा, बर्बरता प्रतिहिंसा सुनने को मिली।" जी. ट्रेविलियन ने 1866 के एक लेख में 1857 के दमन चक्र के बारे में लिखा --"इस बात को निर्विकल्प रूप में स्वीकार किया गया कि दया, दान, सम्मान, मानव जीवन की पवित्रता आदि महान सिद्धांत, जो सामान्य समय में एक नित्य सत्य के रूप में स्वीकार किए जाते हैं, इन सबको तब तक एक ओर ताक पर रख देना चाहिए, जब तक हमारा पूर्ण अधिपत्य पुन: स्थापित न हो जाये तथा पूरा बदला न ले लिया जाये।"

केवल इंग्लैंड में ही नहीं, भारत में स्थित अंग्रेजी प्रेस ने भी इस परंपरा को निभाया। "फ्रेंड आफ इंडिया" ने अपने लेख में लिखा – "यह निर्विवाद है कि हमारा शासन यहां के लोगों के लिए जरूरत से ज्यादा अच्छा है। इनमें और जंगली जानवरों में थोड़ा ही अंतर है। इनके ऊपर शासन का एक ही तरीका है, वह है कंपनी के संरक्षतापूर्ण रवैये को छोड़कर आगे से लोहे के डंडे द्वारा शासन करना।" इसी पत्र ने बाद में कर्नल इवनवेल की पुस्तक "लैटर्स रिटन डयूरिंग म्येटिनी" की टीका करते हुए लिखा कि कैसे एक ईसाई तथा मूर्तिपूजक, सैक्शन तथा एशियाई, प्रकाश तथा अंधकार साथ-साथ रह सकते हैं। वह अंग्रेजों को सलाह देते हुए लिखता है, कोई भी गलत नीति पर आधारित प्रशासनिक कार्यवाही गलत होती है। कम-से-कम कुछ समय के लिए सैनिक शक्ति के प्रदर्शन में कोई ढील नहीं होनी चाहिए दूसरे शब्दों में लोहे के हाथों को मखमल के दस्तानों से ढकने का प्रयास नहीं करना चाहिए। इस प्रकार के संकेत मिलते हैं कि यही नीति अंग्रेजी राज की आने वाले वर्षों में रही।

अंग्रेज अच्छी तरह जानते थे कि 1857 की प्रज्जवलित ज्वाला अंदर ही अंदर सुलग रही है। तत्कालीन गृह सचिव ए. ओ. ह्यूम ने, जिन्होंने सरकारी सेवा से अवकाश प्राप्त करने के बाद कांग्रेस का गठन किया, गुप्तचरों की रिपोर्टों के आधार पर क्रांतिकारियों द्वारा सशस्त्र क्रांति की योजना की एक मोटी फाइल तत्कालीन गवर्नर जनरल को दिखायी। सशस्त्र क्रांति की प्रथम चिनगारी वासुदेव बलवंत फड़के ने पुणे में प्रज्जवलित

की। प्रथम राजनीतिक संस्था का जन्म 1870 में पुणे में हुआ, जिसका नाम था "पुणे सार्वजनिक सभा"। उसी समय युवाओं ने "ऐक्यवर्धनी" संस्था पुणे में प्रारंभ की, जिसकी बैठक प्रति रविवार को विष्णु भगवान के मंदिर में होती थी, वासुदेव बलवंत भी इस सभा के सदस्य थे।

सर्वप्रथम 1873 में सार्वजनिक काका (गणेश वासुदेव जोशी) ने स्वदेशी के प्रोत्साहन के लिए मोटे खद्दर के वस्त्रों का प्रयोग किया और वासुदेव बलवंत अकाल पीड़ित ग्रामीणों की दयनीय स्थिति से इतने द्रवित हुए कि उन्होंने सेना में लेखाकार के पद पर रहते हुए भी भारत में एक गणतंत्र स्थापित करने का प्रण किया तथा शिवाजी की तरह सातारा की पहाडियों में छापामार युद्ध की तैयारी आरंभ कर दी। धन तथा जन दोनों जोड़ने के लिए ब्रिटिश सत्ता के संरक्षण में ग्रामीणों का शोषण करने वाले विलासी, संपन्न घरों तथा पुलिस चौकियों को लूटना शुरू कर दिया तथा रोहिल्ला सरदारों से विद्रोह के लिए बातें कीं। उनकी गतिविधियों से ब्रिटिश सरकार बहुत घबरा उठी। यहां तक कि ब्रिटिश पार्लियामेंट तथा लंदन से निकलने वाले अखबारों में भी इस विषय को लेकर चर्चा होती रही। अंत में एक बहुत बड़ा अभियान दल मेजर डैनियल की अध्यक्षता में वासुदेव बलवंत को पकड़ने में सफल हो गया। सरकार के विरुद्ध घृणा फैलाने तथा सरकार का तख्ता पलटने के षडयंत्र के अपराध में उन्हें काला पानी की सजा दी गयी। 17 नवंबर 1871 को वे पुणे से ठाणे के रास्ते अंडमान को जाने वाले थे। यद्यपि यह समाचार बहुत गुप्त रखा गया, परंतु किसी तरह लोगों को इस बात का पता लग गया। गाड़ी छूटने के एक घंटा पूर्व स्टेशन जाने वाली सड़क जनता की अपार भीड़ से भर गयी। उनकी अनन्य देशभक्ति, अदम्य उत्साह तथा तूफानी जीवन से न केवल स्थानीय जनता नतमस्तक हुई, अपितु उनके नाम का जादू यूरोप के लोगों पर भी छा गया और वे स्टेशन पर उन्हें देखने अपनी महिलाओं सहित पहुंचे।

जैसे ही सेना तथा पुलिस की हिरासत में वासुदेव बलवंत स्टेशन पर पहुंचे, अपार भीड़ की जयजयकार से आकाश गूंज उठा। भीड़ को चीर कर उनकी एक झलक पाने के लिए अनेक अंग्रेज महिलाएं अपने अस्त व्यस्त कपड़ों में आगे बढ़ीं। उनमें से एक महिला ने ताजे फूलों का एक गुलदस्ता इस देशभक्त को भेंट किया। अंग्रेजों को यह बहुत बुरा लगा और बाद में पूछताछ हुई कि वह महिला कौन थी। गवर्नर की एक्जीक्यूटिव कौंसिल के एक सदस्य ने शिनाख्त की कि वे मिसेज हीगिंस थीं। "बहादुर देशभक्त का सम्मान करना मेरी नैतिक शिक्षा का मूलमंत्र है" उनके इस उत्तर ने सभी को निरुत्तर कर दिया। वासुदेव बलवंत ने उनका उपहार श्रद्धापूर्वक स्वीकार किया और पुनः रेलगाड़ी में बैठ गये। जयजयकार के गगनभेदी नारों के बीच गाड़ी ने ठाणे की ओर प्रस्थान किया।

उनके ठाणे जाने की सूचना पहले ही आग की तरह फैल चुकी थी। प्रत्येक स्टेशन पर हजारों लोगों की भीड़ जमा थी। खिड़की से ही उन्होंने लोगों को संबोधित किया। ठाणे में बहुत बड़ी भीड़ को स्टेशन पर नहीं जाने दिया गया परंतु जेल की तरफ जाने वाली सभी

सड़कें हजारों लोगों से भरने लगीं । इस अकस्मात सामूहिक प्रदर्शन से सरकार घबरा उठी तथा गवर्नर ने इसे राजनीतिक प्रदर्शन की संज्ञा देकर प्रशासकों से जवाब तलब किया कि क्यों वासुदेव बलवंत को लोगों से बातचीत करने का अवसर दिया गया । जवाब में मुख्य सचिव ने स्वीकार किया कि पुणे से ठाणे तक की प्रस्थान व्यवस्था दोषपूर्ण थी । अंग्रेजों के अखबार ने भी इस प्रदर्शन की कटु आलोचना करते हुए लिखा - "सभी स्टेशनों पर रेल के डिब्बों से बाहर की ओर मुंह निकालकर उसे लोगों से बातचीत करने की इस प्रकार छूट दी गयी, जैसे कि वह काला पानी जाने वाला कैदी न होकर सरकार का कोई सम्मानित अतिथि हो । सरकार ने फांसी की सजा न देकर उसे शहीद नहीं बनने दिया, यह एक बुद्धिमानी का काम था । अब इस देश से चुपचाप बिना किसी का ध्यान आकर्षित किये उसे तुरंत बाहर निकाल देना चाहिए, ताकि लोग उसे शीघ्रातिशीघ्र भूल जायें ।"

अंग्रेजी सरकार फड़के को आजन्म कैद में अंडमान भेजने के निर्णय पर पुनर्विचार करने लगी क्योंकि उन्हें भय लगने लगा कहीं यह चमत्कारी नेता कैदी बस्ती के अन्य राजनीतिक बंदियों के साथ मिलकर कोई आंदोलन शुरू न कर दे । वहां पर बंदियों को एकांतवास में रखने की व्यवस्था नहीं थी इसलिए फड़के को उनसे अलग भी नहीं रखा जा सकता था । इस प्रकार फड़के की अग्रिम यात्रा स्थगित कर दी गई । 22 दिसंबर को गवर्नर की कौंसिल में इस विषय पर गंभीरता पूर्वक विचार करने के बाद तय किया गया कि उन्हें अंडमान के बजाय अदन भेजा जाये ।

तात्पर्य यह है कि अंडमान में एकांतवास की उचित व्यवस्था एक बड़ी समस्या बन गयी थी । यहां पर कैद अनेक प्रभावशाली क्रांतिकारी नेताओं का प्रभाव अन्य कैदियों पर दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा था । उधर देश में भी बाल गंगाधर तिलक के नेतृत्व में "केसरी" अखबार क्रांति का अमर संदेश फैला रहा था । जब पुणे में विजयदशमी का पर्व मनाया जाता था, तब सभी प्राप्त हथियारों की पूजा की जाती थी, उसके बाद भाषण होते थे, जिसमें 1857 की क्रांति के वीरों को श्रद्धांजलि दी जाती थी । धीरे धीरे यह आग बंगाल में भी फैल गयी थी । अब कांग्रेस की गतिविधियां भी दिन-प्रतिदिन बढ़ रही थीं । अस्तु राजनीतिक बंदियों पर कड़ी नजर रखने की विशेष आवश्यकता महसूस होने लगी ।सन् 1890 में सर चार्ल्स लायल और अल्फ्रेड लेथब्रिज की एक समिति अंडमान आयी और उसने अनुशासन को कड़ा बनाने की सिफारिश की और तब ही पोर्ट ब्लेयर में सेलूलर जेल का निर्माण किया गया ।

इस समय तक कैदी बस्ती का विस्तार भी काफी हो गया था । कैदी बस्ती की क्या व्यवस्था थी इसके बारे में तत्कालीन चीफ कमिश्नर आर. सी. टेंपल ने अंडमान आयोग के सामने एक बयान दिया, जो जुलाई 1897 के गजट में प्रकाशित हुआ । यद्यपि यह वक्तव्य अंग्रेजों के पक्ष में दिया गया है और इसमें अत्याचारों तथा यातनाओं का जिक्र नहीं है परंतु इससे कैदी बस्ती के कानूनी ढांचे का आभास मिलता है । अपने बयानों में वह कहता है -

"कैदी अंडमान में एक ऐसे जानवर की तरह आता है जो अपने कारनामों से मानव समाज के लिए अयोग्य बन गया है तथा जिसे आजन्म या जीवन के लंबे अरसे के लिए दूर फेंक दिया गया है। जब इस प्रकार उसे लाया जाता है, तो उसे पहले छह महीने अत्यंत कठोर अनुशासन, जो सख्त, कड़ा तथा बिना किसी प्रकार के ढील के हो, उसमें रखा जाता है। उसे सबक सिखाया जाता है कि उसकी उद्दंड प्रकृति को जबरदस्ती एक शासन के लोहे के जुए के नीचे झुकने में कैसा अनुभव होता है। सख्त मेहनत उतनी बुरी नहीं होती, जितना कि आत्मा को कुचलने वाला लगातार बिना किसी परिवर्तन के जी उकताने वाला एकाकी जीवन। इस जेल के कठोर शासन के बाद वह अन्य संबंधित जेलों में स्थानांतरित किया जाता है। काम उतना ही सख्त, परंतु अन्य दूसरे कैदियों के साथ। अनुशासन उतना ही कठोर, वह दूसरों के साथ काम करता व खाना खाता है और उसके काम में कुछ परिवर्तन होता है परंतु वह अब भी रात को अलग कोठरी में सोता है। यहां पर वह डेढ़ वर्ष तक रहता है और उसके पश्चात तीन वर्ष तक वह गुलाम है। गुलाम जो आम भाषा में समझा जाता है, दूसरे कैदियों के साथ रात को ताले के अंदर बंद रहता है, परंतु खुले में कैदी बस्ती की आवश्यकतानुसार अपनी भरपूर शक्ति से किसी भी तरह का काम करता है - बिना मजदूरी व बिना इनाम के मेहनत से।"

"उसके बाद के पांच वर्ष तक वह एक मजदूर कैदी है, परंतु सख्ती में थोड़ी ढील दी जाती है। अब वह सुपरवाइजर के छोटे पद पाने का उम्मीदवार बन सकता है और यदि वह मजदूर की तरह काम करता है, तो उसका काम उतना कष्टमय नहीं होता व गुलाम की स्थिति में थोड़ा सुधार हो जाता है। उसको बहुत थोड़ी धनराशि भी मिलने लगती है जिससे वह छोटी छोटी रोजमर्रा की आवश्यक चीजें खरीद सकता है या इस धनराशि को भविष्य की आवश्यकता के लिए बचत बैंक में डाल सकता है। इस प्रकार दस लंबे वर्ष संतोषजनक कार्य में बिताने के बाद, वह इस बात के योग्य बन जाता है कि यदि उसमें कोई शक्ति शेष रह गयी हो, तो वह छुट्टी का टिकट ले और आत्मनिर्भर बने। कैदी अब एक प्रकार से स्वतंत्र हो जाता है। वह अपने मन के अनुसार अपना जीवनयापन करता है। वह अब एक गांव में अपने मकान में रहता है। थोड़ी सी खेती करता है वह जानवर भी रखता है। अब बिना निगरानी के वह इधर उधर जा सकता है। वह अपनी पत्नी व बच्चे बुला सकता है या जैसा कि आमतौर पर होता है वह किसी कैदी स्त्री से, जिसको नियमानुसार शादी करने की इजाजत दे दी गयी हो, शादी भी कर सकता है। . .. . लेकिन वह उन सब वस्तुओं से वंचित रहता है, जिनको स्वतंत्र व्यक्ति मूल्यवान समझते हैं। आम कानून व्यवस्था के अंतर्गत उसे कोई नागरिक अधिकार नहीं हैं। उसके जीवन संबंधी सभी मामले प्रशासन द्वारा तय किये जाते हैं उसे वहीं रहना है, जहां उसे रहने के लिए कहा जाये और आमतौर पर जैसे जीवनयापन के लिए कहा जाये, उसे मानना पड़ता है। वह अपने गांव व खेतों के बाहर बिना आज्ञा के नहीं जा सकता। वह खाली भी नहीं बैठ सकता, क्योंकि यदि वह ऐसा करता है, तो उसे वापस कैदी मजदूर का जीवन बिताना पड़ेगा। इस प्रकार वह दस

या पंद्रह वर्ष तक अपनी सजा के अनुसार रहता है तब वह सुखमय बेला आती है, जब समस्त बंधनों से मुक्ति का घोषणापत्र उसे हाथ में दिया जाता है और वह एक स्वतंत्र नागरिक की भांति जैसा चाहे कर सकता है।"

"महिला कैदियों के साथ भी ऐसा ही बर्ताव किया जाता है, परंतु स्त्री होने के कारण उसमें अधिक नर्मी का रुख अपनाया जाता है। पहले तीन वर्ष तक वह महिलाओं की जेल में एक गुलाम की तरह काम करती है, यद्यपि उसे भोजन, कपड़ा व आवास की सुविधा है। उसके बाद दो वर्ष तक उसे भी उतनी ही ढील दी जाती है, जितनी कि पुरुषों को, और इस प्रकार कुल पांच वर्ष बाद वह शादी या घरेलू नौकरी की अधिकारी बन जाती है। यदि मान लिया जाये कि वह शादी करती है और गांव में अपने पति के पास चली जाती है, जहां वह एक साधारण गृहणी का आम जीवन बिताने लग जाती है, तो भी उसे अपने पति की तरह पंद्रह वर्ष पूरे करने पड़ते हैं जिसके पश्चात वह कहीं भी जाने को स्वतंत्र है।"

उपरोक्त व्यवस्था में चर्चित सुविधा खूनी, डाकू तथा अन्य संगीन जुर्मों के कैदियों को सुलभ थी परंतु स्वतंत्रता-सेनानियों के मुक्त होने का कोई प्रावधान नहीं था और बाद में तो उन्हें सदैव जेल के अंदर ही रखा गया।

शहीदों की जेलयात्रा

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध से देश में क्रांति का नेतृत्व बंगाल ने संभाल लिया था। सुरेंद्रनाथ बनर्जी ने 1877-78 में समस्त भारत का भ्रमण किया। स्वदेश प्रेम के लिए जनता को जगाया। बंगाल में समाचारपत्रों की बाढ़ सी आ गयी। सन् 1905 तक केवल बंगाली में 65 पत्र पत्रिकाएं प्रकाशित होने लगीं जिनमें अधिकांश राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत थीं। इसी समय स्वामी विवेकानंद ने भारतीय धर्म व संस्कृति की सार्वभौमिकता की कीर्ति पताका विश्व भर में फहरायी। बंगाल की राष्ट्रीय भावना से अंग्रेज शासक इतने अधिक घबरा उठे कि 1904 में लार्ड कर्जन ने "बंग-भंग" की योजना प्रकाशित की जिससे समस्त देश में रोष व्याप्त हो गया तथा बंगाल में एक नवजागरण आ गया। विद्यार्थियों तथा पत्रों के प्रकाशन पर अनेक प्रतिबंध लगाये गये परंतु जितना अधिक दबाने का प्रयत्न हुआ, जनभावना उतनी ही प्रबल होती गयी। जनवरी 1908 में अरविंद घोष ने कहा - "राष्ट्रीयता अब दबने वाली नहीं है वह अमर है। वह मरने वाली इसलिए नहीं है कि वह कोई मानवरचित वस्तु नहीं है। आज स्वयं भगवान बंगाल में राष्ट्रीयता के रूप में काम कर रहा है। ईश्वर को नहीं मारा जा सकता और न उसे जेल में बंद करके शांत ही किया जा सकता है।" समस्त बंगाल में सशस्त्र क्रांति की लहर सी दौड़ गयी। इस उग्र आंदोलन के मुख्य संगठक थे वीरेन्द्र घोष। उन्होंने सांस्कृतिक समाज के बहाने ढाका में 1905 में "अनुशीलन समिति" का गठन किया और उसकी एक शाखा कलकत्ता में खोली गयी। शीघ्र ही अधिकांश कस्बों व गांवों में पांच सौ शाखाएं खोल दी गयीं। इसके साथ काम कर रहा था "जुगांतर", जो यद्यपि कलकत्ता ही में काम कर रहा था परंतु इसकी शाखाएं विदेशों में भी फैल गयीं थीं। हिंसा के प्रति "जुगांतर" के आह्वान का एक नमूना - "यदि आप निश्चय पर दृढ़ रहें, तो आप केवल एक दिन में अंग्रेजी शासन को समाप्त कर सकते हो। अपना जीवन अर्पण कर दो परंतु इसके पहले एक को स्वयं मारो"। क्रांतिकारियों के एक दल के नेतृत्व में बम बनाये गये परंतु खुफिया पुलिस ने 1908 में मानिकतल्ला में बम बनाने का कारखाना पकड़ा। 34 क्रांतिकारियों पर जिनमें अरविंद घोष भी सम्मिलित थे, मुकदमा चलाया गया। यह मामला "अलीपुर षड्यंत्र" या "अलीपुर बम" के नाम से विख्यात हुआ। अरविंद घोष तो छोड़ दिये गये परंतु 15 क्रांतिकारियों को काला पानी की सजा दी गयी, जिनमें अरविंद बनर्जी, हेमचंद दास आदि 1909 में सेलूलर जेल में बंद किये गये।

बंगाल के साथ-साथ पंजाब में भी उग्रवादी बढ़ने लगे । राष्ट्रवादियों का प्रभाव कम करने की दृष्टि से अंग्रेज शासकों ने लाला लाजपतराय तथा सरदार अजीतसिंह को देश निकाले की सजा देकर मांडले जेल में भेजा । उन्हीं में एक क्रांतिकारी रासबिहारी बोस थे, जो 1912 में कलकत्ता के स्थान पर दिल्ली के नयी राजधानी बनने के समारोह में भाग लेने जाते हुए तत्कालीन वायसराय लार्ड हार्डिंग पर बम फेंकने में शामिल हुए थे । हार्डिंग बाल-बाल बच गये किन्तु उनके अंगरक्षक मारे गये । रासबिहारी बोस लापता हो गये और बांद में दक्षिण पूर्व एशिया में उन्होंने अपनी गतिविधियां फैलायीं ।

उधर महाराष्ट्र में क्रांति की हलचल लोकमान्य तिलक के नेतृत्व में चल रही थी । तिलक ने "केसरी" में बम बनाने का स्वागत करते हुए लिखा कि शायद बम का अवतार भारत के कल्याण के लिए हुआ है । उन पर मुकदमा चलाया गया और उन्हें मांडले जेल भेजा गया । उसी समय वीर सावरकर के बड़े भाई दामोदर सावरकर ने 1908 में "लघु अभिनव भारत मेला " नाम से कुछ देशभक्ति पूर्ण कविताएं प्रकाशित कीं, उन्हें आजीवन कारावास की सजा में काला पानी भेजा गया । 1 जनवरी 1910 को उन्हें सेलूलर जेल में बंद कर दिया गया । उस समय वीर विनायक सावरकर को इंग्लैंड से हथियार भेजने तथा डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट जैक्सन की हत्या की साजिश के आरोप में काला पानी की सजा दी गयी, जिसे "नासिक षडयंत्र" के नाम से जाना जाता है । 4 जुलाई 1911 को उन्हें भी सेलूलर जेल में बंद किया गया । जेल का शासन कितना सख्त था, उसका अंदाज इस बात से लगाया जा सकता है कि दोनों भाई एक ही जेल में रहते हुए भी नौ माह तक एक दूसरे की सूरत भी न देख सके । जब काम पूरा न करने की सजा में जेलर के सम्मुख दोनों की पेशी एक ही समय पर हुई तो वे अकस्मात मिल गये ।

उन्नीसवीं सदी के अंत में जनता में असंतोष का मुख्य कारण था - अंग्रेजों की आर्थिक शोषण की नीति के फलस्वरूप बढ़ती हुई गरीबी । किसान बड़ी संख्या में गांवों को छोड़कर जाने लगे । अनेक विदेशों में जाकर अपना नया जीवन प्रारंभ करना चाहते थे । अमरीका व कनाडा उन दिनों उपनिवेश के रूप में विकसित हो रहे थे । अतः वे आकर्षण के विशेष केंद्र बन गये । परंतु दुर्भाग्य से उसी समय जापान तथा चीन से भी बहुत बड़ी संख्या में लोग कनाडा के शहरों में भरने लगे । एशियाई लोगों के विरुद्ध भावनाएं बड़ी तेजी से उभरने लगीं । 1910 में कनाडा सरकार ने एशियाई लोगों के आने पर रोक लगा दी । अधिकांश लोग पंजाब के थे । कनाडा की भेदभावपूर्ण नीति, अपमान व अनुचित व्यवहार से वे अत्यंत दुखी थे । तब वे और भी क्षुब्ध हो गये, जब उनकी आर्तनाद पर दिल्ली व लंदन की सरकारों ने कानों में उंगली डाल ली । ठीक उसी समय लाला लाजपतराय भी वहां पहुंच गये । लाला जी ने जब स्थिति का विश्लेषण किया तो प्रवासी भारतीय अच्छी तरह समझ गये कि उनकी समस्त वेदनाओं व अपमान का मुख्य कारण उनकी गुलामी है । बहुत से लोगों को मजबूरी में स्वदेश लौटना पड़ा । गुलामी के कारण विदेशों में जो अपमान व

तिरस्कार उन्हें सहना पड़ा उसकी बातें भारत के कस्बे व गांव में फैलीं।

वे भारतीय, जो अमरीका में रह गये थे, उन्होंने संगठित होना शुरू किया। उनके नेता लाला हरदयाल असाधारण प्रतिभा के धनी व्यक्ति थे। उन्हें संस्था का अध्यक्ष चुना गया। उनके कार्य के लिए एक धनाढ्य सिख सरदार ज्वालासिंह ने धन प्रदान किया। सनफ्रांसिस्को में एक जगह खरीदी गयी जहां से संस्था के सदस्यों के लिए एक अखबार निकाला गया। अखबार का नाम "गदर" रखा गया। उसके मुखपृष्ठ पर "गदर" शीर्षक के नीचे लिखा गया था - "अंग्रेजी सरकार का दुश्मन"। जल्दी ही लाला हरदयाल का दल गदर पार्टी के नाम से विख्यात हो गया। पत्र के 1 नवंबर 1913 के प्रथम अंक में पार्टी के उद्देश्य पूर्णतया स्पष्ट किये गये - "तुम्हारा नाम क्या है ? गदर। तुम्हारा काम क्या है ? गदर। गदर कहां होगा ? हिन्दुस्तान में। जल्दी वक्त आयेगा, जब कलम-दवात की जगह लेंगे राइफल व खून।" "गदर" पत्र को आशातीत सफलता मिली और थोड़े ही समय में इसकी प्रतियां सारे संसार में फैल गयीं। उन्हीं दिनों क्रांतिकारी प्रवासी भारतीयों ने थाइलैंड में अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध गुप्त संगठन तैयार किया। उस समय लगभग तीन लाख भारतीय सिंगापुर-मलाया में थे, जिनमें नैनी बोस व भोलानाथ चटर्जी भी थे।

ठीक उसी समय कनाडा में एक बहुत बड़ी घटना घटी। "कामागाटामारू" नामक एक जापानी यात्री जहाज को सिंगापुर के एक धनाढ्य सिख व्यापारी सरदार गुरदीत सिंह ने कनाडा जाने के इच्छुक भारतीय प्रवासियों के लिए किराये पर लिया। जहाज ने 376 प्रवासियों को एकत्र किया जिनमें 346 सिख थे। यद्यपि सभी यात्री आप्रवासन के कड़े से कड़े नियमों की शर्तें पूरी करते थे फिर भी उनमें से केवल 22 आदमियों को जहाज से उतरने की अनुमति मिली। शेष आदमियों से कहा गया कि वे जहाज पर रहें और सरदार गुरदीत सिंह से कहा गया कि वे अपने जहाज के प्रस्थान का प्रबंध करें। उन्होंने ऐसा करने से मना कर दिया। एक ही रात में "कामागाटामारू" एक बहुत बड़ा अंतर्राष्ट्रीय प्रश्न बन गया। इस घटना की कहानी संसार के सभी समाचार पत्रों में प्रकाशित हो गयी, लेकिन कनाडा सरकार किसी तरह भी मानने को तैयार नहीं थी। जब जहाज पर गोली चलाने की धमकी दी गयी तो मजबूर होकर जहाज को वापस लौटना पड़ा। इन्हीं दिनों प्रथम विश्व युद्ध छिड़ जाने के कारण अंग्रेज उस जहाज में बैठे यात्रियों के प्रति और भी शक्की हो उठे और भारतीयों को, जहां से वे चले थे, यानी शंघाई, हांगकांग या सिंगापुर कहीं भी, उतरने नहीं दिया गया। जहाज के कलकत्ता पहुंचने पर पुलिस जहाज में घुस गयी, तलाशियां ली गयीं, जिसका कि उन्होंने प्रतिरोध किया। फलस्वरूप 18 सिख मारे गये तथा 35 घायल हुए। अपने 30 साथियों को साथ लेकर सरदार गुरदीत सिंह कलकत्ता की गलियों में विलीन हो गए। बाकी सब घेरकर पंजाब जाने वाली रेलगाड़ी में डाल दिये गये और पंजाब पहुंचने पर उन्हें हिरासत में ले लिया गया।

जैसे ही प्रथम विश्वयुद्ध का समाचार आग की तरह फैला, प्रवासी भारतीयों में मातृभूमि को स्वतंत्र कराने की आकांक्षा प्रबल होने लगी परंतु अमरीका तथा यूरोप के बीच इतने उग्रवादी दल बिखरे पड़े थे कि उनके बीच सहयोग व सामंजस्य असंभव-सा था। अमरीका में गदर पार्टी वाले शीघ्र ही आग में कूद पड़े। जहाजों में सीटों के किराये तथा अन्य खर्चे के लिए हजारों डालरों की वर्षा पार्टी के कोष में होने लगी। उन्हीं दिनों अंग्रेजों के आग्रह पर लाला हरदयाल को पकड़ने का यत्न किया गया किंतु वे स्विटजरलैंड भाग गये और रामचंद्र ने उनका कार्यभार संभाला। क्रांतिकारियों का पहला दल भारत की तरफ "कोरिया" नामक जहाज से अगस्त के अंत में चल पड़ा। रामचंद्र ने उनसे कहा - "देश के हर कोने में विद्रोह भड़काओ .....भारत पहुंचने पर तुम्हें हथियार दिये जाएंगे। अगर इसमें सफलता नहीं मिली तो तुम थानों से राइफलों को लूटो।" सनफ्रांसिस्को के बाद जहाज कैंटन रुका, जहां से गदर पार्टी के नये सदस्य इसमें सम्मिलित हुए। अंग्रेजों ने गुप्तचरों का जाल सा बिछा दिया था, जो गदर पार्टी की दिन प्रतिदिन की गतिविधियों का विवरण भेजते थे। जैसे ही जहाज कलकत्ता बंदरगाह पर पहुंचा, पुलिस जहाज पर चढ़ गयी और अधिकांश भावी छापामारों को हिरासत में ले लिया गया। इनमें से कुछ भागने में सफल हुए, कुछ बाद में पकड़े गये। यही हाल उन सब क्रांतिकारियों का हुआ, जो "तोसामारु", ‘‘मिसमामारु’’, और "आमसंग" जहाजों में आये।

"लाहौर षडयंत्र" के नाम से इनमें से अनेक क्रांतिकारियों के विरुद्ध मुकदमा चला तथा 24 क्रांतिकारियों को काला पानी की सजा दी गयी। अक्तूबर 1915 में वे सेलूलर जेल में बंद किये गये, जिनमें बाबा सोहनसिंह, बाबा पृथ्वीसिंह, भाई परमानंद आदि थे। इसी समय गदर पार्टी के सदस्यों तथा अन्य भारतीयों ने सैनिकों से स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए क्रांति का आह्वान किया। फलस्वरूप पहली जनवरी 1915 को पांचवीं भारतीय रेजिमेंट ने क्रांति का बिगुल बजा दिया। अनेक अधिकारियों को मार दिया गया। यदि उन्हें उचित नेतृत्व मिलता तो शायद सारा सिंगापुर उनके नियंत्रण में आ जाता परंतु विद्रोह दबा दिया गया। लगभग 47 क्रांतिकारी गोली से उड़ा दिये गये। 41 को काला पानी की सजा दी गयी और 48 आदमियों को बीस साल से लेकर पांच साल तक अलग अलग सजाएं दी गयीं। बर्मा में भी भारतीयों ने इसी प्रकार विद्रोह किया जो "बर्मा षडयंत्र" के नाम से जाना गया और मुज्तबा हुसैन, कपूरसिंह, पंडित परमानंद आदि को कालापानी की सजा हुई। उन्हें 1916 में सेलूलर जेल में बंद किया गया।

इलाहाबाद के "स्वराज्य" अखबार के एक के बाद एक सात संपादकों को राष्ट्रीय भावनाओं से प्रेरित लेखों के लिए सजा दी गयी जिनमें से कुछ व्यक्तियों को काला पानी की सजा दी गयी। अगस्त 1907 में शांतिनारायण इलाहाबाद पहुंचे और "स्वराज्य" प्रकाशित किया गया। लोकमान्य तिलक ने अपने संदेश में कहा - "भगवान करे "स्वराज्य" उत्तरप्रदेश में स्वतंत्रता संग्राम के जन्म में सहायक हो।" मोतीलाल घोष ने अपने संदेश में कहा

"भगवान करे "स्वराज्य" भारत के राजनीतिक उत्थान का अग्रदूत बने, लेकिन ऐसा करने में इस बात के लिए तैयार रहो कि तुम्हारा एक पैर जेल में है और अपना उत्तराधिकारी भी तैयार रखो।" कुछ ही महीने बाद उनकी यह भविष्यवाणी सच निकली।

शहीद खुदीराम बोस पर एक राष्ट्रीय कविता छापने के अपराध में मुकदमा चलाया गया। अपने सफाई के बयान में उन्होंने अंग्रेज मजिस्ट्रेट से कहा - "मैं अपने देश के हित में जो उचित समझता था, उसको मैंने किया। आप भी अपने देश के हित में जो ठीक समझें करें।" इस निर्भीक उत्तर पर उन्हें साढ़े तीन साल की कैद तथा एक हजार रुपया जुर्माना किया गया। जुर्माने की रकम न देने के कारण प्रेस नीलाम कर दिया गया। परंतु नये संपादक अमृतसर के स्वामी प्रकाशनंद के प्रयास से, जिनके विरुद्ध गिरफ्तारी का वारंट जारी था, एक नया प्रेस लगाया गया। हरियाणा के होती लाल वर्मा, जो इंग्लैंड से लौटकर अलीगढ़ में निवास कर रहे थे, अब "स्वराज्य" का संपादन करने लगे। उन्हें कुछ ही अंक प्रकाशित करने के बाद काला पानी की सजा में सेलूलर जेल में बंद कर दिया गया। उनके उत्तराधिकारी बने गुरुदासपुर के राम हरि जिन्हें केवल 11 अंक प्रकाशित करने के बाद काला पानी की सजा में सेलूलर जेल में बंद कर दिया गया। तत्पश्चात जब इस पद पर लाहौर के मुंशीराम सेवक की नियुक्ति हुई तो पुलिस वहीं से उनके साथ-साथ वारंट लेकर इलाहाबाद पहुँच गयी। वे डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट के सम्मुख घोषणापत्र भर ही रहे थे कि हिरासत में ले लिये गये और डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट मैकनारे ने बड़े उपालंभपूर्ण शब्दों में पूछा– "अब इस मुगल सल्तनत की गद्दी पर कौन बैठेगा ?" शायद उसे मालूम नहीं था कि इस देश में त्याग व बलिदान करने वालों में आगे बढ़ने के लिए होड़ लगी हुई थी।

नंदगोपाल ने यह कार्यभार संभाला। केवल बारह अंक वे निकाल पाये थे कि देशभक्तिपूर्ण लेखों के लिए उन्हें तीस साल की काला पानी की सजा हो गयी। वे भी सेलूलर जेल में बंद कर दिये गये। उनके स्थान पर आये नवयुवक लद्धराम कपूर जो अभी अतुल धन संपत्ति कमाकर दक्षिण पूर्व एशिया से लौटे थे उनका विवाह भी हाल ही में हुआ था। उन्हें बहुत रोका गया कि यह जोखिम भरा पद न लें। उन्होंने कहा - "मैं देश की पुकार को नहीं टाल सकता।" उन्हें उनके प्रत्येक लेख पर दस साल की सजा दी गयी। कुल तीन लेख "वफादारी, मुशायरा तथा बहार और हम" पर तीस साल की काला पानी की सजा दी गयी। इस महान देशभक्त का अनुपम देशप्रेम, त्याग व बलिदान का सेशन जज, इलाहाबाद पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। 26 मई 1910 के फैसले में वह लिखता है - "इन संपादकों पर लगातार इतनी सख्त सजाएं, वर्तमान अपराधी लद्धराम को अपने जिले गुजरात (पंजाब) से यहां आने तथा उसी प्रकार जहरीले लेखों द्वारा सरकार के ऊपर विष उगलने से नहीं रोक सकीं।" अपनी गिरफ्तारी से पहले उन्होंने यह विज्ञापन निकाला - "स्वराज्य" के लिए एक संपादक की आवश्यकता है। वेतन बिना घी की दो चपाती, एक गिलास ठंडा

पानी तथा प्रत्येक संपादकीय के लिए दस साल की कैद। लद्धराम बडे निडर व निर्भीक थे और बहादुरी के साथ अधिकारियों का मुकाबला करते थे। जेल के अमानुषिक नियम तोड़ने के लिए उन्हें छह माह की और सजा दी गयी। सेलूलर जेल में वे "फील्ड मार्शल" के नाम से जाने जाते थे।

जेल की यातनाओं का हृदय विदारक चित्रण बाबा पृथ्वीसिंह ने, जिन्होंने स्वयं भी बहुत लंबी भूख हड़ताल की, अपनी पुस्तक "क्रांति पथ के पथिक" में किया है। वीर सावरकर, जो बहुत लम्बी अवधि तक सेलूलर जेल में रहे, लिखते हैं "राजनीतिक बंदियों से साधारण अपराधियों जैसा कठिनतम काम लिया जाता था। कोल्हू पर जोत देते थे। विश्राम नहीं दिया जाता था। जेल में पीने के पानी की कमी थी। दो कप से अधिक पानी किसी को नहीं मिलता था। नहाने को खारा पानी या बारिश में भीगने की सुविधा थी। निश्चित काम न करने पर मार पड़ती थी। डाक्टर के कहने पर भी बंदियों को अस्पताल नहीं भेजा जाता था। बंदियों के साथ गाली-गलौच तथा अपमानजनक व्यवहार करना हर रोज की बात थी। निश्चित तीन समय छोड़कर आवश्यकता पड़ने पर पेशाब या मलत्याग करने नहीं जाने दिया जाता था। अखबार, किताबें, पेंसिल, कागज आदि रखने की अनुमति नहीं थी। खाने में कीड़े, कंकड़ आदि हुआ करते थे। इसमें संदेह नहीं कि राजनीतिक बंदियों से साधारण अपराधियों से भी अधिक बुरा व्यवहार किया जाता था।"

वाकर के बाद राजनीतिक बंदियों को बहुत यातनाएं देने वाला दूसरा अत्याचारी, बदनाम जेलर बारी था। जब भी स्वतंत्रता-सेनानी सेलूलर जेल में लाए जाते, वह बड़े अभिमान से कहता, "केवल दो खुदा हैं। एक ऊपर वाला और दूसरा मैं। ऊपर वाले को तो किसी ने नहीं देखा परंतु मैं तुम्हारे सामने खड़ा हूं। यदि तुम मेरी मर्जी के खिलाफ चलोगे तो जिंदा नहीं रह सकते।" सेलूलर जेल की तरफ इशारा करते हुए वह उन्हें बताता - "यहां हम शेरों को पालतू जानवर बनाते हैं।" किंतु उसका भ्रम बहुत जल्दी टूट गया। पूरा काम न करने के लिए जब वह झांसीवाले पंडित परमानंद को बुरी गाली देने लगा तो उन्होंने उसके पेट में इतनी जोर से लात मारी कि वह धराशायी हो गया। इस घटना से सारी जेल में एक बिजली सी दौड़ गयी और सभी कैदियों में स्वाभिमान की नवचेतना जागृत हो गयी। यद्यपि बाद में पंडित परमानंद को इतना पीटा गया कि वे बेहोश हो गये।

क्रांतिकारियों ने शासकों के अमानुषिक एवं बर्बरतापूर्ण व्यवहार के विरुद्ध मानवोचित अधिकारों के लिए आंदोलन छेड़ दिया। हड़ताल तथा भूख हड़ताल की गयी। अत्याचार और यातनाएं बढ़ने लगीं। जिसके फलस्वरूप शहीद इंद्रभूषण राय, रामरखा, केहरसिंह आदि को अपने जीवन की आहुति देनी पड़ी और अन्य कई अपना मानसिक संतुलन व स्वास्थ्य खो बैठे। शायद अंग्रेज सरकार समझती थी कि इनकी चीत्कार केवल सेलूलर जेल की दीवारों से टकराकर रह जायेगी या सागर की लहरों के गर्जन में विलीन हो जायेगी

परंतु उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा, जब स्वतंत्रता-सेनानी उनकी सख्त निगरानी के बावजूद यातनाओं, अत्याचारों व रोमांचपूर्ण करूण गाथाओं का पूर्ण विवरण मुख्य भूमि भेजने में सफल हो गये, जो सर्वप्रथम सुरेन्द्रनाथ बनर्जी द्वारा संपादित "बंगाली" में प्रकाशित हुआ। सारे देश में आक्रोश की लहर दौड़ गयी और मजबूर होकर सरकार को जेल आयोग का गठन करना पड़ा। जेल आयोग की सिफारिश पर इस जेल को राजनीतिक बंदियों के लिए बंद कर दिया गया और 1921 में राजनीतिक बंदियों को मुख्य भूमि की जेलों में भेज दिया गया।

अंग्रेज सरकार ने भविष्य में अपना यह वादा पूरा नहीं किया तथा स्वतंत्रता-सेनानी कैदी बनकर अंडमान आते रहे। 1922-24 में आंध्र प्रदेश में सीताराम राजू के नेतृत्व में क्रांतिकारी दल ने अंग्रेजी सत्ता से टक्कर ली, जो "रंपा विद्रोह" के नाम से प्रसिद्ध हुआ। सीताराम राजू को गोली से उड़ा दिया गया। उनके साथियों को सेलूलर जेल में बंद किया गया। इसी समय मोपलाओं का विद्रोह हुआ। उन्हें भी काला पानी की सजा दी गयी। अब सारे देश में, विशेष रूप से बंगाल में, बम विस्फोट तथा हिंसा की ज्वाला भड़क उठी थी, जिसमें सरकारी खजानों की लूट, अत्याचारी कर्मचारियों की हत्या, संगठित सशस्त्र मुठभेड़ आदि शामिल थी। सरकार ने राजनीतिक बंदियों को काला पानी न भेजने के वचन को तोड़ दिया और 1932 में इस नीति में परिवर्तन कर स्वतंत्रता-सेनानियों को पुनः बड़ी संख्या में सेलूलर जेल भेजना शुरू कर दिया। काकोरी के पास सरकारी खजाना लूटने के अपराध में क्रांतिकारी शचींद्रनाथ सन्याल को, जो पहले एक बार काला पानी की सजा भुगत चुके थे, पुनः सेलूलर जेल में भेज दिया गया। केंद्रीय असेंबली में बम फेंकने वाले सरदार भगतसिंह के साथी बटुकेश्वर दत्त को काला पानी की सजा दी गयी व सेलूलर जेल में बंद कर दिया गया। लगभग 381 स्वतंत्रता-सेनानी सेलूलर जेल में भेजे गये जिनमें अकेले बंगाल के 339 स्वतंत्रता-सेनानी थे। शेष बिहार (19), उत्तर प्रदेश (11), असम (5), पंजाब (3), दिल्ली (2) तथा मद्रास के (1) थे। इनमें प्रमुख थे बटुकेश्वरदत्त, जयदेव कपूर, लोकनाथ बाल, शंभूनाथ आजाद, महावीर सिंह, मोहित मोहन माइत्र, मोहनकिशोर, मानकृष्ण दास, बी. के. सिन्हा, बगेश्वर राय इत्यादि।

इन स्वतंत्रता-सेनानियों का जीवन इन काल कोठरियों में अत्यंत कष्टमय व अमानुषिक यातनाओं से भरा था जो सुविधाएं संगीन जुर्म वाले कैदियों को सुलभ थीं, उनसे भी इन्हें वंचित रखा गया। जैसे जेल आयोग की संस्तुति के अनुसार कैदियों के अंडमान पहुंचते ही सजा के एक तिहाई भाग की क्षमा की सुविधा थी, वो भी राजनीतिक कैदियों को नहीं दी गयी। तेल के कोल्हू में बैलों के स्थान पर स्वतंत्रता-सेनानी कोल्हू खींचते थे। थकान से बेहोश हो जाने पर भी उन्हें वहां से नहीं हटाया जाता। उनके चेहरे पर पानी के छींटे मारकर उन्हें होश में लाया जाता और फिर कोल्हू में जोत दिया जाता। नये कैदी तो प्रातः ही दस बार बेहोश हो जाते और हर बार उन्हें होश में लाकर पुनः कोल्हू पर जोता

जाता । चाहे कुछ भी हो, उसे निश्चित मात्रा में तेल पेरना होता । एक भी बूंद कम होने पर सजा दी जाती । तेल के कोल्हू के नाम से कड़े से कड़ा अपराधी भी कांप उठता था । इसके अतिरिक्त नारियल तोड़ना, सरसों का तेल निकालना, हुक्के के खोल बनाना, नारियल की रस्सी बटना, पहाड़ काटना, दलदली जमीन पाटना आदि ऐसे काम थे, जिनमें अत्यंत परिश्रम करना पड़ता था । स्वतंत्रता-सेनानी पूरा काम नहीं कर पाते थे; जिसके कारण उन्हें कोड़े खाने पड़ते थे । कभी-कभी तो यातनाएं बर्दाश्त के बाहर हो जातीं । जिन नौजवानों ने हंसते हुए सीना तानकर गोलियों का सामना किया था, उनका भी संयम टूट पड़ता और कई स्वतंत्रता-सेनानियों ने तो इस जीवन से तंग आकर आत्महत्या कर डाली । इन अत्याचारों के विरुद्ध 1933 में भूख हड़ताल हुई, जो 46 दिन तक चली, जिसमें महावीर, मोहित मोहन मोइत्र तथा मोहनकृष्ण दास वीरगति को प्राप्त हुए ।

सन् 1937 में जब विभिन्न प्रांतों में कांग्रेसी सरकारें बनीं, तो स्वतंत्रता-सेनानियों ने अपने अपने प्रांतों में जाने की मांग को दोहराया और 25 जुलाई, 1937 को 183 स्वतंत्रता-सेनानियों ने भूख हड़ताल आरंभ कर दी, इस समाचार ने समस्त देश में खलबली पैदा कर दी । बंदियों की मांगों के समर्थन एवं सहानुभूति में देश के विभिन्न जेलों में कैद राजनीतिक बंदियों ने भी भूख हड़ताल प्रारंभ कर दी । महात्मा गांधी एवं गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर की मध्यस्थता के फलस्वरूप भूख हड़ताल समाप्त हुई । 22 सितंबर 1937 को राजनीतिक बंदियों का प्रथम दल अंडमान से मुख्य भूमि की जेलों के लिए रवाना हुआ । तत्पश्चात अन्य राजनीतिक बंदी भी वापस लौटे ।

स्वतंत्रता-सेनानियों ने अपने जीवन का प्रभात देश को अर्पण किया । स्वदेश, घर परिवार से दूर, मां, बहन, पत्नी के प्यार से वंचित काला पानी की काल कोठरियों में पीड़ित, अपमानित इन क्रांतिकारियों की केवल एक ही अभिलाषा थी कि भारत मां के बंधन टूटें । स्वतंत्रता संग्राम की स्मृति को संजोये रखने तथा भावी पीढ़ी को प्रेरणा देने के लिए स्वतंत्रता-सेनानियों की मांग थी कि इस जेल को "राष्ट्रीय स्मारक" का रूप दिया जाये, जिसको सिद्धांत रूप में 1969 में स्वीकार किया गया । आज पर्यटकों के स्वर्ग अंडमान में आने वाला प्रत्येक भारतीय इस "राष्ट्रीय स्मारक" को क्षण भर के लिए नतमस्तक हो मौन श्रद्धांजलि अर्पित करता है और यहां की प्राचीरों पर प्रतिध्वनित अमर शहीदों के बलिदान की मूक आवाज उससे पूछती है - "तुम कौन हो ? किधर जा रहे हो ?" इसका उत्तर आज हर देशवासी को देना है ।

जापान के अधिपत्य में

सीमित भूमि व अपार जनसंख्या से दबा जापान सदैव अतिरिक्त भूमि अधिग्रहण के लिए लालायित रहा है। द्वितीय विश्व युद्ध के दिनों प्रशान्त महासागर में मित्र राष्ट्रों की अपार समुद्रीय शक्ति की अभेद्य दीवार को पार कर "आस्ट्रेलिया" की तरफ जाना दुष्कर कार्य था और दक्षिण पूर्व एशिया के देशों की अपनी स्वयं की अनेक समस्यायें थीं। लगभग खाली पड़ा हुआ सुन्दर, प्रकृति के अक्षय भंडार से परिपूर्ण तथा भविष्य के विकास की असीम संभावनाओं से ओत-प्रोत अंडमान व निकोबार द्वीप समूह जापान की भावी रणनीति का एक महत्वपूर्ण एवं अभिन्न अंग बन गया।

ऐसा प्रतीत होता है कि द्वितीय विश्वयुद्ध के प्रारम्भ से बहुत पूर्व जापान ने इन द्वीपों पर अपनी गिद्ध दृष्टि जमा ली थी। जापान ने इन द्वीपों का तथा इसके चारों ओर फैले समुद्र का विस्तृत सर्वेक्षण कर लिया था। प्रारम्भ में उसके दक्ष नौसैनिक सीप निकालने वाले मछुआरों के वेष में आए और किसी ने भी उन पर कोई शक नहीं किया। किन्तु जब उनकी संख्या में निरन्तर वृद्धि होती गई तब अंग्रेजी शासन ने उनसे अनुज्ञा पत्र लेने को कहा, जिसे उन्होंने तुरन्त मान लिया। वे लोग अपनी नावों में पोर्ट ब्लेयर आते, अनुज्ञा पत्र लेकर मछली व सीप पकड़ने चले जाते, लौटने पर माल को "मैरीन डाकयार्ड" में निरीक्षण के लिए प्रस्तुत करते तथा निर्धारित चुंगी देकर अपने गन्तव्य की ओर जो अक्सर मलाया में हुआ करता, चल पड़ते।

जापान को इन द्वीपों का न केवल विस्तृत भौगोलिक ज्ञान था, वरन् उसने इन द्वीप वासियों के विषय में भी पूर्ण जानकारी जमा कर ली थी यहां तक कि यहां के प्रमुख व महत्वपूर्ण व्यक्तियों का उन्होंने लेखा-जोखा बना लिया था। यह लगातार कई वर्षों की गुप्त मेहनत का परिणाम था। शान्ति के समय कुछ ही जापानी पोर्ट ब्लेयर में रहते थे उनमें से एक फोटोग्राफर व एक दन्त विशेषज्ञ दम्पत्ति भी थे जो बिना किसी का ध्यान आकर्षित किए ये सब गुप्त सूचनाएं लगभग दस वर्ष पूर्व से एकत्रित कर रहे थे। यह सही कहा गया है कि जब जापानी इन द्वीपों में युद्ध के समय दल बल के साथ पहुँचे तो वे इन द्वीपों के लिए नए थे परन्तु द्वीप उनके लिए नए नहीं थे।

दूसरे विश्वयुद्ध के दिनों में जापान के युद्ध में कूदते ही प्रशान्त व हिन्द महासागर युद्ध पोतों की हलचल से गर्माने लगे चूंकि बड़ी शक्तियां अपना घर बचाने की घबराहट में यूरोप में व्यस्त थीं। अतः जापान ने दक्षिण पूर्व एशिया में घात लगाना शुरू कर दिया तथा एक के बाद एक अनेक देशों को निगल गया। फिलीपाइन्स, बार्नियो, सुमात्रा, जावा, मलाया तथा सिंगापुर के पतन के पश्चात बर्मा पर आक्रमण निश्चित सा हो गया था। एस. वुडवर्न अपनी पुस्तक "हिस्टरी आफ दि सेकन्ड वर्ल्ड वार" में लिखता है कि - "रंगून के पतन का एक अवश्यम्भावी परिणाम यह हुआ कि अंडमान द्वीप समूह को खाली करना पड़ा क्योंकि रंगून के रास्ते के दोनों ओर वे पड़ते थे।" जापान की दक्षिण पूर्व एशिया की अभूतपूर्व सफलता से अंग्रेज हतप्रभ रह गए। अंडमान व निकोबार द्वीप समूह में कोई रक्षा पंक्ति नहीं थी। पोर्ट ब्लेयर की कैदी बस्ती के कानून व शान्ति व्यवस्था के लिए केवल एक अंग्रेजी कंपनी थी। जब जापानी आक्रमण की आशंका बढ़ गई तब अंग्रेजों ने जल्दबाजी में एक गुरखा पलटन को इस आशय से भेज दिया कि शायद इससे जापान को अंग्रेजों द्वारा द्वीपों की रक्षा की कटिबद्धता का आभास मिले और वह अपना इरादा बदल ले। किन्तु जापान इन गीदड़ भभकियों में आने वाला नहीं था क्योंकि उसे भलीभांति मालूम था कि मित्र राष्ट्रों के पास प्रशान्त व हिन्द महासागर में इतनी नौसेना शक्ति नहीं है कि वे युद्ध की आवश्यक सामग्री इन द्वीपों के बचाव में लड़ी जाने वाली लड़ाई के लिए उपलब्ध कर सकें।

अंग्रेजों के लिए द्वीपों को खाली करने के अलावा कोई और रास्ता नहीं था। अलग अलग टुकड़ियों में इन द्वीपों से वापसी प्रारम्भ हुई ओर अन्त में गोरखा पलटन तथा अंग्रेजी कंपनी ने भी इन द्वीपों से कूच कर लिया। केवल कैदियों को तथा स्थानीय लोगों को उनके भाग्य पर छोड़ दिया गया। प्रशासन में भी एक बड़ा खालीपन आ गया क्योंकि केवल नाममात्र के लिए कुछ लोग रह गये थे। सन् 1942 के प्रारम्भ में कानून व शान्ति व्यवस्था का काम चार सौ सैनिकों के हाथ में रह गया था। चार गोरे अधिकारी, डिप्टी कमिश्नर, सुपरिटेंडेंट पुलिस, हारबर मास्टर तथा जेलर की प्रशासन पर पकड़ बिल्कुल शिथिल पड़ गई थी और एक दिन ये चारों भी चुपचाप एक मोटर नाव में भाग निकले। लेकिन ग्रामवासी पूर्णतया शान्त से रहे यद्यपि कुछ कैदी बैरकों से निकल भागे जो अंग्रेजी राज्य के अन्त का सूचक था।

22 मार्च 1942 की शाम के समय बहुप्रतीक्षित जापानी नौसैनिक बेड़ा पूर्वी समुद्री तट पर दृष्टिगोचर हुआ तथा 23 की प्रातः को पौ फटते ही सेना ने अंडमान द्वीप में उतरना शुरू कर दिया। एक दस्ता पोर्ट ब्लेयर में "गाराचरामा" के रास्ते आया। एक दस्ता "कारविन कौव" के रास्ते तथा एक अन्य दस्ता स्वयं पोर्ट ब्लेयर में उतरा। जापानियों को अच्छी तरह मालूम था कि उनके मुकाबले के लिए वहां कोई नहीं है फिर भी पूर्व निर्धारित युद्ध योजना के अन्तर्गत कार्य हुआ। पोर्ट ब्लेयर वाला दस्ता तीन दलों में विभाजित किया

गया। मुख्य दल ने प्रमुख बाजार "अवरडीन" की ओर प्रस्थान किया तथा हर एक सौ गज पर एक सन्तरी छोड़ता हुआ बढ़ता गया तथा दल ने पुलिस के सभी हथियारों पर कब्जा किया और सभी अंग्रेजों को, जिसमें मुख्य आयुक्त "वाटरफौल" भी सम्मिलित था, अपनी हिरासत में ले लिया। दूसरा दल साउथ पाइन्ट गया जो कि तार का मुख्यालय था और एंग्लो इंडियन तार बाबूओं को हिरासत में ले लिया। तीसरा दल जेल की ओर बढ़ा और उन्होंने जेल के द्वार खोल कर सब कैदियों को मुक्त कर दिया। यह दल फिर फोनिक्स बे की ओर बढ़ा तथा मेरीन डाक्यार्ड मय वर्कशाप के तथा अन्य नावों को कब्जे में ले लिया। चौथे दस्ते ने चैथम द्वीप के लिए समुद्री मार्ग अपनाया तथा चैथम आरा मिल को लकड़ी के गोदाम समेत अपने कब्जे में लिया फिर आगे डंडास पाइन्ट तक जाकर मुख्य भंडार को भी अपने अधीन कर लिया।

इस प्रकार उतरने के केवल बारह घंटे के अन्दर बिना एक गोली चलाए पूर्ण अधिपत्य स्थापित कर दिया गया। उतरने वालों में दोनों सेना व नौसेना के लोग सम्मिलित थे। नौसेना ने अपना मुख्यालय अवरडीन तथा सेना ने हेडों को मुख्यालय बनाया। जापान ने इन द्वीपों में सैनिक शासन स्थापित किया तथा सेनापति ने नागरिकों के गवर्नर का पद संभाला। जापानी संभवतः नागरिकों की सम्मति से कुछ स्थानीय लोगों को अधिकारी नियुक्त करना चाहते थे। उन्होंने इस कार्य के लिए संभ्रात नागरिकों को बुलाने का काम एक भूतपूर्व पुलिस सब इंस्पेक्टर को सौंपा, जो चापलूसी से जापानियों का सुपरिटेंडेंट बन गया था। किन्तु वह केवल अपने चमचों को ही वहां पर लाया। जापानियों ने उसकी चाल समझ ली। उन्होंने इस चयन को स्थगित कर दिया तथा तीन दिन के अन्दर मनमानी ढंग से नियुक्तियां कर डालीं। पंचायत पद्धति पर गैर फौजदारी मामलों को तय करने के लिए एक शान्ति कमेटी का गठन किया गया।

प्रारंभ में द्वीपवासियों ने जापान के अधिपत्य का स्वागत किया और इसे ईश्वर का वरदान समझा। किसानों ने धान की फसल अभी-अभी खलिहानों से बटोर कर घर में रखी थी। सभी कैदी मुक्त कर दिए गए थे। अस्थाई तौर पर जिन लोगों की नौकरी छूट गई थी, वरिष्ठ अधिकारियों के छोड़ जाने के परिणाम स्वरूप उनकी नियुक्ति अब इन उच्च्व पदों पर हो गई। दुकानें तथा लेन देन की सम्पूर्ण प्रक्रिया पूर्ववत चल रही थी। शुरू में जापानियों ने अच्छी कीमत देकर वस्तुएं खरीदीं। जापानी युद्ध कालीन मुद्रा तथा ब्रिटिश मुद्रा दोनों विनिमय के लिए स्वीकृत थीं। विभिन्न स्त्रोतों से आय बढ़ने लगी, किन्तु धन खर्च करने के मार्ग अवरुद्ध थे। धीरे-धीरे दुकानें बन्द होने लगीं क्योंकि जापानी उपभोक्ता भंडारों से राशन, कपड़ा आदि सस्ते कीमत पर उपलब्ध था। राशन की कमी हो सकती है, स्वप्न में भी इस तथ्य का आभास जापानियों तथा स्थानीय जनता को नहीं था। जापानियों ने अनेक जहाजों को माल समेत कब्जे में कर लिया था जिन्हें वे सम्पूर्ण अधिपत्य क्षेत्र में घुमाकर उपभोक्ता वस्तुएं द्वीपवासियों में बांट रहे थे।

जापानियों का व्यवहार बहुत शिष्ट व मृदुल था जैसा कि कोम्पटन मैकेन्जी लिखता है - "जापानियों ने इस भू-भाग पर कब्जा करने पर महान जापानी प्रभुसत्ता के विषय में आडम्बरपूर्ण घोषणायें कीं। जिसमें उन्होंने स्थानीय लोगों को परोपकारी राज्य का एक उदाहरण देने का वादा किया। अपनी बातों में वे बार-बार इस बात पर जोर देते थे कि उनका इतनी दूर आने का एकमात्र कारण है अपने एशियाई भाइयों को विदेशी कुशासन से मुक्ति दिलाना। इस घोषणा की पुष्टि में वे फिलिपाइन, ईस्ट इंडीज, बर्मा व मलाया का उदाहरण प्रस्तुत करते, जहां पर कि स्वायत्तशासन दिया गया और कहते हैं कि इसे वे अंडमान द्वीप समूह में भी लागू कर अपना दक्षिण पूर्व एशिया में सहसम्पन्नता का क्षेत्र स्थापित करने के अपने अन्तिम लक्ष्य की प्राप्ति के स्वप्न को साकार करना चाहते थे। द्वीपवासियों के प्रति अपनी सद्भावना प्रदर्शित करने की दृष्टि से जासूसी के अभियोग में पकड़े गये दो अभियुक्तों में अंग्रेज पूर्ति अधिकारी ए. जे. वर्ड का सार्वजनिक रूप से सिर काट लिया गया तथा संयुक्त अभियुक्त सरूप राम को स्थानीय होने के नाते छोड़ दिया गया।"

स्थानीय लोगों में इस विश्वास को भरने के लिए कि वे भारतीय स्वतंत्रता के मुख्य प्रवर्तक हैं, जापानियों ने फरवरी 1943 में "अंडमान मिसीव" की स्थापना की। इसका उद्देश्य जैसा कि अंडमान में शासन के विषय में जापानी इतिहास में लिखा गया- "स्थानीय लोगों की सुरक्षा करना, उनकी प्रगति बढ़ाना, न्याय, कानून व शान्ति स्थापित करना, उद्योगों की प्रगति, सड़कों की मरम्मत व द्वीपों में महामारी की रोकथाम करना था। किन्तु इनका मुख्य काम था यहां पर आत्मनिर्भर प्रणाली द्वारा खाद्य सामग्रियों के उत्पादन को बढ़ाना। दूसरी ओर उनकी धार्मिक स्वतंत्रता को स्वीकारते हुए शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया गया तथा उनमें आमोद प्रमोद के प्रसाधनों को बढ़ाकर स्थानीय लोगों को प्रसन्न रखने की चेष्टा भी की गई।"

अंग्रेज पोर्ट ब्लेयर में धान के खेतों में एक अस्थाई हवाई अड्डा बनाने की योजना अधूरी छोड़कर चले गये थे। जापानियों ने इसे पूर्ण करने का निश्चय किया, ताकि उन्हें इसका लाभ मिल सके। सभी कैदियों को, जिन्हें पहले मुक्त किया गया था घेर लिया गया और जो भी उनके हाथ लगा उन सभी को इस काम में जोत दिया गया। तीन महीने के अन्दर वह मैदान हवाई जहाजों के उड़ने व उतरने के प्रयोग में लाया जाने लगा तथा बर्मा व सिंगापुर के लिए नियमित उड़ानें होने लगीं।

अंग्रेजों द्वारा स्थापित गवर्नमेंट हाई स्कूल पुनः खोल दिया गया तथा इसके अतिरिक्त एक अन्य "खाहो शियोन हिकू" नामक जापानी स्कूल खोल दिया गया। नवयुवकों के दल, जापानी भाषा का काम चलाऊ ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात दुभाषिये के रूप में भेज दिए गये और उनमें से कुछ जासूसी के लिए नियुक्त किए गए तथा उन्हें अच्छा वेतन दिया गया। यह आश्चर्यजनक है कि यद्यपि जापानियों का अधिपत्य केवल अल्प समय रहा, किन्तु

इसने यहां के लोगों पर एक अमिट छाप छोड़ दी । अब भी कई लोग हैं जो जापानी भाषा का ज्ञान रखते हैं तथा स्कूल की प्रार्थना सभा में सीखी प्रार्थना को सस्वर गा सकते हैं ।

अधिकांश सड़कें जापानी अधिपत्य के दिनों में बनाई गईं । समुद्र के चारों ओर किलेबन्दी व विशेष रूप से अभेद्य मोर्चा एक प्रगतिशील देश की दृढ़ निष्ठा के रूप में आज भी मौजूद हैं । यह सच है कि इन सब कामों में लगे अधिकांश मजदूरों को उनकी इच्छा के विपरीत जबर्दस्ती काम पर लगाया गया किन्तु इस बात को भी स्मरण रखना चाहिए कि स्वयं जापानी भी इस काम में पीछे नहीं रहे । जापानी सिपाही केवल अपने बैरकों तक सीमित नहीं रहे, वे भी अन्य साधारण लोगों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम करते रहे । दूसरी विशेष बात जिसने सबको प्रभावित किया वह था सबका एक साथ मिलकर समान भोजन करना ।

जापान की सफलता का राज उनका कड़ा परिश्रम व निष्ठा है । जहां तक खेतीबाड़ी का सम्बन्ध है ये द्वीप बहुत पिछड़े हुए थे और बड़ी मुश्किल से दो-तीन महीने के गुजारे के लिए अन्न पैदा करते थे । अंग्रेजों ने द्वीपों को छोड़ते समय भविष्यवाणी की थी कि कुछ ही महीने में भुखमरी से सम्पूर्ण आबादी समाप्त हो जाएगी किन्तु जापानियों ने स्थानीय किसानों के साथ मिलजुल कर काफी अनाज उगाया । इसी कारण आत्म समर्पण के तुरन्त पूर्व भुखमरी का कोई मामला नहीं मिला ।

संभवतः इस महान, कठिन व श्रमशील तनावपूर्ण जीवन को राहत देने के लिए उन्होंने कुछ विधवायें, आया व अन्य व्यवसायिक स्त्रियों को अपने क्लबों में रखा तथा सिंगापुर से भी कुछ लड़कियों को इन द्वीपों में मनोरंजन के लिए लाया गया ।

एक के बाद एक मलाया, सिंगापुर, रंगून तथा अंडमान के पतन से अंग्रेजों को गहरा धक्का लगा तथा मित्र राष्ट्रों में उनकी साख बहुत गिर गई । व्यक्तिगत रूप से चर्चिल को इसका बहुत बड़ा आघात लगा क्योंकि उसको स्वप्न में भी यह कल्पना नहीं थी कि एशियाई शक्ति इतनी बलवान हो सकती है । स्वयं जापान भी इस आशातीत सफलता पर चकित था, क्योंकि उसे इस तरह आसान विजय की आशा नहीं थी । स्थिति इतनी नाजुक थी कि स्वयं भारत पर जापान का कब्जा किसी भी समय हो सकता था क्यों कि अधिकांश भारतीय सेना विदेशों में लड़ रही थी । यही एक ऐसा अवसर था जिसे सुभाषचंद्र बोस गुलामी की जंजीरों से देश को मुक्त कराने के लिए इस्तेमाल करना चाहते थे और उन्होंने समस्त देशवासियों से देश के लिए महान त्याग व बलिदान का आह्वान किया । सुभाषचंद्र बोस देश के सर्वश्रेष्ठ देशभक्त व महान पुरुष थे । एन. जी. जोग अपनी पुस्तक "इन फ्रीडम् क्वेस्ट" में उनको अंग्रेजों द्वारा दी गई यातनाओं का जिक्र करते हुए लिखता है - "बोस को ग्यारह बार जेल भेजा गया और लगभग आठ वर्ष तक वे "हिज मेजेस्टी" के मेहमान रहे जिसमें वे तीन वर्ष भी शामिल हैं जब उन्हें देश निकाले की सजा में बर्मा भेजा गया । दूसरे तीन

वर्ष के देश निकाले की सजा में वे यूरोप में रहे। उनके समय के देश भक्तों का यह भाग्य क्रम एक असाधारण बात नहीं थी किन्तु सिवाय बोस के किसी भी अन्य चोटी के नेता पर अंग्रेज शासकों के रोष का प्रहार बार-बार तथा लगातार नहीं पड़ा। उनकी जेल यात्राओं तथा उनके समकक्ष अन्य नेताओं के जेल जाने में मुख्य अन्तर यह था कि उन्हें दो बार भूख हड़ताल की यंत्रणा भोगनी पड़ी तथा एक बार उनके ऊपर लाठी का कठोर प्रहार भी किया गया। यह उसके अतिरिक्त है जो उन्होंने स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में झेला। जेल की यातनाओं ने उनका स्वास्थ्य निचोड़ डाला और बम्बई से लौटने पर इस बात की शंका हो गई थी कि उन्हें क्षय रोग हो गया है।" सुभाषचंद्र बोस एक महान भविष्य दृष्टा थे तथा दूसरे विश्वयुद्ध में उन्हें स्पष्ट दिखाई देने लगा था कि ब्रिटेन पूर्णतया तहस नहस हो जाएगा, यदि किसी कारणवश राजनीतिक धरातल पर ऐसा नहीं भी हुआ तो आर्थिक रूप से वह बिलकुल खत्म हो जाएगा और भारत के ऊपर अपना उपनिवेशीय शिकंजा जमाने में सफल नहीं होगा।

जापान एक आंधी की तरह दक्षिण पूर्व एशिया में फैल गया। इस क्षेत्र में भारतीय मूल के अनेक निवासी थे जिन्हें वह नाराज नहीं करना चाहता था। अंग्रेजी सेना के आत्म समर्पण के फलस्वरूप भारतीय सैनिकों की एक बड़ी संख्या बन्दी बन गई थी। जिन्हें जापान जिनेवा संधि के प्रावधान को तोड़े बिना प्रयोग में लाना चाहता था। कैप्टन मोहनसिंह के तत्वाधान में युद्ध बन्दियों की आई. एन. ए. गठित की गई थी। जिसके लिए मोहनसिंह ने सैनिक दर्जा देने की मांग की। किन्तु जापानी जनरल यामाशिता इसके लिए राजी नहीं था। इसके पूर्व कैप्टन मोहनसिंह सेना के उन कतिपय लोगों में थे जिनके अन्दर अपार देश भक्ति भरी थी और उन्हें यह बिल्कुल पसन्द नहीं था कि भारतीय सेना विदेशी भूमि पर सांम्राज्यवादी ब्रिटेन जैसे देशों की रक्षा के लिए लड़े। इस प्रकार की आवाजें अन्य स्थानों से भी गूंजीं। विशेष रूप से सिखों ने सिकन्दराबाद तथा अन्य दूसरे स्थानों पर बगावत कर दी तथा सेना से भाग गए। इससे बड़ी घटना बम्बई में घटी जहां "सेंट्रल इंडिया होर्स" के सिख "स्क्वाइड्रन" ने देश से बाहर जाने से इन्कार कर दिया। उनके लीडरों को सैनिक अदालतों ने उम्र कैद की सजा देकर अंडमान की सेलूलर जेल में भेज दिया जहां पर जापानियों के 1942 में कब्जे के फलस्वरूप जेल के गेट खोलने से वे भी छूट गए। उत्तरी अफ्रीका में भी घपला हुआ। "इंडियन आर्मी सर्विस" के सिखों ने अंग्रेज सैनिकों का बिस्तर आदि सामान उतारने से यह कह कर इन्कार कर दिया कि वे "कुली" नहीं हैं और उन्होंने हड़ताल कर दी।

कैप्टन मोहनसिंह उन अंग्रेजी सैनिक अधिकारियों के बर्ताव से खिन्न था जो अक्सर हिन्दुस्तानियों को गाली गलौच किया करते थे। विदेशों में भारतीय सैनिक अधिकारी किस हेय दृष्टि से देखे जाते थे उसका एक उदाहरण सिंगापुर के "तंगलिन" क्लब के सदस्यों की पत्नियों द्वारा क्लब की कमेटी के समक्ष भारतीय सैनिक अधिकारियों द्वारा तैरने के तालाब

के प्रयोग पर आपत्ति उठाने में मिलता है। उनके इस अशोभनीय कारनामे पर टिप्पणी करते हुए सिंगापुर के अखबार ने लिखा कि शिष्टाचार तथा नैतिकता दोनों ही दृष्टि से उनका यह कदम अनुपयुक्त था कि आप उन्हीं की बेइज्जती कर रहे हैं जो आपकी सुरक्षा के लिए आए हुए हैं।

इस काल में दक्षिण पूर्व एशियाई देशों में बसे भारतीयों में देश की आजादी के लिए एक अदम्य उत्साह व नवीन चेतना थी। वे भारत की आजादी के लिए सब कुछ अर्पण करने को उद्यत थे। भारतीयों से सम्पर्क करने के लिए जापानी सरकार ने फूजीवाड़ा को नियुक्त किया था जिसने बातचीत की महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कैप्टन मोहनसिंह ने फूजीवाड़ा को साफ साफ बता दिया था कि केवल सुभाषचंद्र बोस ही मुक्ति वाहिनी का नेतृत्व संभाल सकते हैं।

द्वितीय युद्ध के प्रारम्भ से ही अंग्रेज अपने प्रभुत्व अधिकृत केन्द्रों को हारते जा रहे थे और चारों ओर सारी व्यवस्था अस्तव्यस्त थी। 27 दिसम्बर 1940 को जापान ने इपोह पर कब्जा किया और 11 फरवरी 1941 को जापान ने मलाया की राजधानी कुआलालम्पुर पर कब्जा कर लिया तथा 4000 भारतीय युद्धबन्दी बनाए गए जिसमें कैप्टन मोहनसिंह व कैप्टन अक्रम भी सम्मिलित थे। अंग्रेज इस आकस्मिक हमले से इस कदर स्तम्भित रह गए कि पेनांग के रेडियो स्टेशन को चालू हालत में छोड़ गए, जिसका कैप्टन मोहनसिंह तथा महान सिख नेता प्यारा सिंह ने भारतीय जनता को समझाने के लिए प्रयोग किया कि अंग्रेज बहुत स्वार्थी हैं तथा भारतीयों को जापान के हवाले कर स्वयं भाग गए हैं। बाद में जापान ने भी इसी तरह का प्रचार सिंगापुर के कब्जे के पूर्व किया।

रासबिहारी बोस जिन्होंने तत्कालीन वायसराय हार्डिंग पर ग्रामोफोन की सुइयों से बनाया बम फेंका था बाद में वे फरार होकर जापान में बस गए। किन्तु इस भूमि से भी यह महान देशभक्त स्वतंत्रता संग्राम की गतिविधियां अनवरत चलाता रहा। जापान के उच्चस्तरीय वर्ग में उनका विशेष सम्मान था। रेडियो टोकियो से उनकी अनेक वार्ताएं प्रसारित हुई जिनका मुख्य विषय था कि दुश्मन का दुश्मन अपना दोस्त होता है। उन्होंने गदर पार्टी के सिद्धांतों का प्रतिपादन किया। उनके भाषणों का जापान के प्रधानमंत्री पर बहुत प्रभाव पड़ा वे इंडिया इन्डिपेन्डेंस लीग के अध्यक्ष थे। उन्होंने इसकी टोकियो में एक बैठक बुलाई। जिसमें दक्षिण पूर्व एशिया के उन समस्त संस्थाओं के प्रतिनिधियों को बुलाया, जिसमें आई. एन. ए. की तरफ से कैप्टन मोहनसिंह ने भाग लिया। इस बात का निर्णय लिया गया कि यदि भारत पर कभी युद्ध करने की आवश्यकता हुई तो वह आई. एन. ए. के तत्वावधान में होगा। आई. एन. ए. की संख्या 50,000 तक पहुंच गई थी। तत्कालीन अंग्रेज सेनाध्यक्ष औचिनलेक के ऊपर इस बात का बहुत बड़ा सदमा था कि किस प्रकार वर्षों का रेजीमेंट के प्रति वफादारी का प्रशिक्षण एकाएक देश के प्रति वफादारी में परिणित हो गया और अंग्रेजी सरकार का भारतीय सेना से विश्वास एकदम उठ गया। शायद यही

एकमात्र कारण था उनके भारत छोड़ने के निर्णय के पीछे, और जिसके लिए पूरा श्रेय सुभाषचंद्र बोस को जाता है। जिन्होंने "दिल्ली चलो" के नारे से समस्त आई. एन. ए. को मंत्र मुग्ध कर दिया। जिराड ए. कोरे अपनी पुस्तक "द वार आफ द स्प्रिगिंग टाइगरस" में लिखते हैं - "आई. एन. ए. का स्वराज्य के लिए सैनिक आक्रमण एक घोर बरबादी थी लेकिन फिर भी अपने देश को स्वतंत्र कराने में उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वे दिल्ली की ओर एक देशभक्त सिपाही के रूप में बढ़े और एक बंदी के रूप में पहुंचे। किन्तु यह कितनी बड़ी विडम्बना है कि बंदी के रूप में ही उन्होंने भारतीय जनता एवं तत्कालीन भारत सरकार पर सबसे बड़ा प्रभाव डाला। बहुत कम ऐसा हुआ कि पराजित इतनी बड़ी जीत में सहायक बना हो।"

प्रारम्भ में जापानी सैनिक अधिकारियों ने आई. एन. ए. को विशेष महत्व नहीं दिया, जो कैप्टन मोहनसिंह तथा जापानी अधिकारियों के बीच एक तनाव का विषय बना रहा। कैप्टन मोहनसिंह को दूसरा "डिवीजन" खोलने की अनुमति नहीं दी गई तथा जो डिवीजन था उसे भी पूर्ण युद्ध सामग्री नहीं दी गई। कैप्टन मोहनसिंह तथा रासबिहारी बोस के बीच भी संबंध अच्छे नहीं थे। सैनिक अधिकारी मोहनसिंह की गतिविधियों को शक की निगाह से देखने लगे, उन्होंने उसे जी. ओ. सी. के पद से हटा दिया तथा बाद में हिरासत में ले लिया। इसका आई. एन. ए. के ऊपर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा तथा उनकी संख्या निरन्तर घटने लगी। क्योंकि कुछ लोगों ने युद्धबन्दी ही बने रहना श्रेयस्कर समझा और कुछ को स्वयं जापानियों ने वहां भेज दिया। रासबिहारी बोस उनके अन्दर विश्वास उत्पन्न कराने में असफल रहा। इतने बड़े दल का असन्तुष्ट रहना जापान के लिए एक बहुत बड़ी समस्या थी और इसका बुरा प्रभाव प्रवासी भारतीयों पर भी पड़ सकता था। कर्नल ईवाकरा द्वारा एकत्रित गुप्त रिपोर्टो से पता चला कि केवल सुभाषचंद्र बोस ही स्थिति को संभाल सकते थे। परन्तु जापानियों को इस बात का विश्वास नहीं था कि रासबिहारी अपनी समस्त संस्था आदि सुभाषचंद्र बोस को सौंपकर नम्बर दो का स्थान ग्रहण करने को सहमत होगा। उनकी खुशी का ठिकाना न रहा जब रासबिहारी बोस ने न केवल पदच्युत होने की सहमति दी वरन् सब कुछ सुभाषचंद्र बोस को अर्पण करने की घोषणा भी की।

उपरोक्त कारणों से सुभाषचंद्र बोस को शीघ्र दक्षिण पूर्व एशिया में आने का बुलावा भेजा गया। किन्तु जर्मनी से उनको निकालना आसान नहीं था क्योंकि नाजी नेता बोस की उपादेयता अंग्रेजों के खिलाफ प्रचार में अच्छी तरह से जानते थे। जीराड एच. कोरे के अनुसार नाजी नेता उन्हें हार की दशा में एक मोहरे के रूप में प्रयोग करना चाहते थे। स्वर्गीय माउन्टबेटन जो उन दिनों दक्षिण पूर्व एशिया स्थित मित्र राष्ट्रों की सेना के "सुप्रीम कमान्डर" थे, वे ही केवल इस तथ्य पर प्रकाश डाल सकते थे कि क्या जापान के आत्मसमर्पण पर सुभाषचन्द्र बोस को भी लेनदेन का मोहरा तो नहीं बनाया गया। दूसरी समस्या थी सुभाषचंद्र बोस को बर्लिन से सिंगापुर तक सुरक्षित पहुँचाना। जापान के राजदूत ले. ज.

औशिमा हीरोशी ने सुभाषचंद्र बोस को दक्षिण पूर्व एशिया में भेजने के लिए विदेशमंत्री रिबनट्रोप से बात की और उन्होंने इस प्रस्ताव पर विचार करने का आश्वासन दिया, किन्तु हीरोशी ने उनके उत्तर का इन्तजार नहीं किया और उन्होंने सीधे हिटलर से बात कर उसकी सहमति प्राप्त कर ली। सुभाषचंद्र बोस को हवाई जहाज तथा पानी के जहाज से भेजना संभव नहीं था, क्योंकि लड़ाई जोरों पर थी। उन्हें एकमात्र पनडुब्बी द्वारा ही भेजा जा सकता था किन्तु जर्मनी व जापान दोनों में से कोई भी अपनी पनडुब्बी को खतरे में डालने को उद्यत नहीं था। अन्त में निश्चय हुआ कि आधे रास्ते तक उन्हें जर्मन पनडुब्बी ले जाएगी तथा शेष आधा रास्ता जापान की पनडुब्बी तय करेगी। दुश्मनों को गुमराह करने के लिए इस बात की घोषणा की गई कि बोस कुछ दिनों के लिए "वियना" जाएंगे जबकि वे सिंगापुर के लिए रवाना हो गए थे। बड़ी कठिन यात्रा के बाद खराब मौसम में जीवन व मृत्यु के बीच संघर्ष करते हुए पूर्व निश्चित मलका स्टेट में समुद्र के बीच जर्मन पनडुब्बी से सुभाषचंद्र बोस जापानी पनडुब्बी पर आए तथा बाद में सुमात्रा के निकट सवांग में उतरे। उन्हें तुरन्त टोकियो ले जाया गया। बोस जापानी प्रधानमंत्री टोजो से मिलने को बहुत उत्सुक थे किन्तु वह उनसे मिलने से कतराता रहा शायद वह उनके इस क्षेत्र में आने से अधिक खुश नहीं था। उसने उनको बहुत समय बाद 10 जून 1943 को मिलने का समय देकर उनका अपमान सा किया। किन्तु पहली ही मुलाकात में बोस ने इस छोटे से खतरनाक आदमी के ऊपर ऐसा जादू सा डाला कि वह ऐसे कौंध उठा मानो बिजली छू गई हो। बोस द्वारा घटनाओं की समीक्षा से वह इतना प्रभावित हुआ कि बोस के सुझावों पर विचार करने के लिए वह अब बोस से समय मांगने लगा। सुभाष बोस द्वारा भारत को स्वतंत्र करने की योजना से पूर्णतया सहमत हो गया तथा इतना प्रभावित हुआ कि दूसरे ही दिन भागा-भागा "डाइट" के पास जाकर बड़े जोश व उत्साह के साथ जापान की दृढ़ प्रतिज्ञा की घोषणा की कि वह भारतीय प्रायद्वीप से अंग्रेजी राज्य को उखाड़ फेंकेगा तथा एंग्लो-सैक्शन प्रभाव को समूल नष्ट कर देगा ताकि भारत वास्तविक स्वतंत्रता प्राप्त कर सके और जापान इस नीति का पूरी शक्ति से अनुसरण करेगा।

सुभाषचंद्र बोस 2 जुलाई, 1943 को सिंगापुर पहुंचे, हजारों की संख्या में लोग मालाएं लेकर उनके स्वागत में हवाई अड्डे पर पहुँच गए। इस अदम्य, अभूतपूर्व, जोशपूर्ण जनसमूह को उमड़ते देख लगता था वह शेर-शहर (सिंगापुर) पागल हो गया। दो सप्ताह तक समारोह ही होते रहे मानो कि वह कोई त्यौहार हो। सुभाषचंद्र बोस इस प्रेम, सद्भाव व उनके प्रति लोगों की आस्था से विभोर हो उठे। आजाद हिन्द फौज द्वारा उनके स्वागत से उनका हृदय पिघल उठा। सिपाही भी उतने ही भावुक हो उठे तथा बोस के आकर्षक व्यक्तित्व की तरफ चुम्बक की तरह खिंचते ही गए। परस्पर प्रेम व सद्भाव का पवित्र बन्धन जीवन पर्यन्त कठिनतम क्षणों व आत्मोत्सर्ग की पावन बेला में भी बना रहा।

एक आम जनसभा में रासबिहारी बोस ने समस्त संस्थाओं की बागडोर सुभाषचंद्र को सौंप दी और तत्पश्चात् सुभाषचंद्र बोस "नेताजी" कहलाने लगे । "जयहिन्द" अभिवादन का आम शब्द बन गया । कांग्रेस का तिरंगा झंडा थोड़े परिवर्तन के साथ अपना लिया गया । चर्खे के स्थान पर झपटता हुआ शेर रखा गया । जैसा कि पहले कहा गया है वे एक महान देश भक्त थे जिन्होंने सदैव देश का माथा ऊंचा रखा । जैसा कि अपने 26 अगस्त 1943 के पत्र में जो उन्होंने हिकारी किकन को लिखा, जिसके कुछ अंश इस प्रकार हैं – "हमें समय समय पर जो भी विशेष सहायता नकद व सामान के रूप में मिली, तथा जो हमें भविष्य में इम्पीरियल जापानी सेना अधिकारियों से हिकारी किकन द्वारा मिलेगी उस सबके लिए हम आभारी हैं । हमारी यह तीव्र इच्छा है कि यह उपरोक्त सहायता एक मित्र राष्ट्र से कर्ज के रूप में समझी जाये जिसको आजाद भारत सरकार चुकाने के लिए बाध्य होगी । अत: मैं आभारी रहूंगा यदि उपरोक्त विशेष सहायता एक अलग लेखापद में जिसको "इंडियन एकाउंट" कहा जाये रख दिया जाये तथा उस पर ब्याज भी जोड़ा जाये । जब आजाद भारत की अस्थाई सरकार बन जाएगी और जापान सरकार उसे मान्यता देगी तो उपरोक्त विशेष सहायता जो इंडिया इन्डिपेन्डेंस लीग ईस्ट एशिया को दी गई है वह अस्थाई सरकार के खाते में बतौर कर्जा, जो खर्च किया गया अंकित किया जाएगा, जिसको कि आजाद भारत सरकार स्वीकार करेगी एवं भुगतान करेगी । मैं आपका धन्यवादी हूंगा यदि यह व्यवस्था स्वीकार कर दी जाये ।"

21 अक्तूबर, 1943 को नेताजी कैथे हाल, सिंगापुर में आजाद हिन्द सरकार के उद्घाटन के लिए पधारे । यह महान ऐतिहासिक दिन था, हाल अपार जन समूह से ठसाठस भरा हुआ था । भावातिरेक भीड़ नेता जी के हर शब्द का तालियों की गड़गड़ाहट से स्वागत कर रही थी । भावुक नेताजी का हृदय भर आया । जब उन्होंने अपने कैबिनेट की तरफ से घोषणा पत्र पढ़ा, शब्द गले में अटक गए वे बार-बार अपना चश्मा उतार कर आंसू पोंछते रहे, उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम की भूमिका पर प्रकाश डालते हुए 1757 में प्लासी के युद्ध की चर्चा की तथा समस्त पूर्व महान शहीदों को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए घोषणा पत्र पढ़ा ... " वर्तमान इतिहास में पहली बार प्रवासी भारतीय भी राजनीतिक रूप से आन्दोलित तथा एक संस्था में संगठित हुए हैं । वे न केवल अपने स्वदेशवासियों की भांति सोच रहे हैं व अनुभव कर रहे हैं वरन् उनके साथ स्वतंत्रता के मार्ग पर कदम से कदम मिलाकर उनके साथ चल रहे हैं । विशेष रूप से पूर्व एशिया में बीस लाख भारतीय "सम्पूर्ण समर्पण" के नारे से प्रेरित होकर एक ठोस चट्टान के रूप में संगठित हैं और उनके सामने खड़ी है भारत की मुक्ति वाहिनी जिसके होंठों पर "दिल्ली चलो" का नारा है ।"

"अपनी हठता से भारतीयों को नैराश्य की ओर तथा लूट खसोट से उन्हें भुखमरी और मृत्यु की ओर ढकेल कर अंग्रेजी शासन ने भारतीय लोगों की सद्भावना पूर्ण रूप से खो दी है । अब वह मौत की अन्तिम घड़ी में है । इस दुखदायी शासन के अन्तिम अवशेष

समाप्त करने के लिए केवल एक चिनगारी की आवश्यकता है । इस चिनगारी को प्रज्वलित करने का भार भारतीय मुक्ति वाहिनी पर है, जिसे स्वदेश में आम जनता का तथा अधिकांश ब्रिटिश सेना के भारतीय सैनिकों का उत्साहपूर्ण सहयोग उपलब्ध है तथा जिसके पीछे बहादुर व अभेद्य धुरी राष्ट्र की रक्षा पंक्ति है किन्तु सर्वप्रथम अपनी ही शक्ति में विश्वास रखने वाली भारत की मुक्ति वाहिनी को विश्वास है कि वह अपनी ऐतिहासिक भूमिका अदा करेगी ।"

"अब चूंकि स्वतंत्रता का प्रभात होने ही वाला है, ऐसे में भारत के लोगों का यह कर्तव्य बन जाता है कि वे अपनी स्वयं की अस्थायी सरकार बनायें तथा अन्तिम संघर्ष उसी के झंडे के नीचे छेड़ें । किन्तु सभी भारतीय नेताओं के जेल में होने और स्वदेश में लोगों के तितर बितर होने के कारण, यह सम्भव नहीं है कि देश के अन्दर यह अस्थाई सरकार स्थापित हो सके या उस सरकार के तत्वाधान में एक सशस्त्र संघर्ष छेड़ सकें । अतः ईस्ट एशिया इंडियन लीग का कर्तव्य बन जाता है कि वह इस कार्य में मदद करे यानी आजाद हिन्द की अस्थाई सरकार बनाने तथा लोगों द्वारा स्थापित भारतीय मुक्ति वाहिनी- आजाद हिन्द फौज की मदद से स्वतंत्रता की अन्तिम लड़ाई का संचालन करे ।"

इस घोषणा पर सुभाषचंद्र बोस ने बतौर राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, युद्धमंत्री, विदेशमंत्री एवं आजाद हिन्द फौज के सर्वोच्च सेनापति के रूप में हस्ताक्षर किए ।

नेता जी ने इस महान दिवस का वर्णन करते हुए स्वयं लिखा - "घोषणा सिंगापुर के केथे हाल में उपस्थित अत्यन्त उत्तेजित, उत्साही तथा भाव-विह्वल भीड़ के मध्य की गई । मैंने घोषणा पत्र पढ़ना शुरू किया । जिसकी समाप्ति पर भारत के प्रति पूर्ण निष्ठा प्रकट करते हुए शपथ ली गई कि हम खून की अन्तिम बूंद रहने तक भारत माता की सेवा करते रहेंगे तथा अड़तीस करोड़ देशवासियों को दासता से मुक्ति दिलाने के लिए लड़ेंगे । जब मैं इस पवित्र शपथ को जोर से पढ़ने लगा तो मैं स्वयं भाव विभोर हो उठा और मेरे आंसू उमड़ पड़े । उस सभा में शायद ही कोई सूखी आंख रही हो । सन्नाटा केवल रोने की आहों से टूटता था । वास्तव में यह दृश्य हृदयग्राही था तथा संपूर्ण वातावरण भावनाओं में बह गया था । तब एकाएक किसी मनचले के मन में एक नया विचार कौंधा और उसने राष्ट्रीय नारे लगाए जिसमें अपार जनसमूह ने साथ दिया । मैंने अपना संतुलन संभाला और मजबूत आवाज में घोषणा पत्र का पढ़ना समाप्त किया ।"

जापान ने तुरन्त ही अस्थाई सरकार को मान्यता दे दी, तत्पश्चात जर्मनी, इटली, कोर्सिया, मंचूको, तथा नानकिंग ने भी मान्यता दे दी । नेताजी को आइरिश फ्री स्टेट के अध्यक्ष इमौन डि बलेरा का बधाई संदेश भी मिला ।

24 अक्तूबर को आजाद हिन्द सरकार ने सिंगापुर में पचास हजार की अपार भीड़ के मध्य ब्रिटेन व अमरीका के विरुद्ध लड़ाई की घोषणा की । जन समूह में उनके भाषण ने जादू सा कर दिया और "दिल्ली चलो" के गगनभेदी नारों से सारा वातावरण गूंज उठा,

विशेष रूप से जब आजाद हिन्द फौज के सिपाही अपनी रायफलों को हवा में ऊंचा उठाकर नारे लगाते तो उसकी प्रतिध्वनि दूर-दूर तक सुनाई पड़ती। डालरों की वर्षा होने लगी, देखते ही देखते दस लाख डालर जमा हो गये।

नवम्बर के महीने में नेता जी "ग्रेटर ईस्ट एशिया" सम्मेलन में एक दर्शक के रूप में गये किन्तु उनके जाने का असली प्रयोजन अंडमान व निकोबार द्वीप समूह की प्रभुसत्ता आजाद हिन्द सरकार को हस्तान्तरण कराना था, क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अनुसार मान्यता के लिए नई सरकार के पास अपनी भूमि होनी चाहिए और इस दृष्टि से अंडमान व निकोबार द्वीप समूह अत्यन्त उपयुक्त थे। नेता जी 1 नवम्बर 1943 को टोजो से मिले और उन्होंने उसे समझाया कि यदि जापान इन द्वीपों को आजाद हिन्द सरकार को सौंपता है तो देश की मुक्ति के लिए युद्ध का महत्व बहुत बढ़ जाएगा, लोगों का मनोबल बढ़ेगा तथा जापान की भारत के प्रति निष्ठा पूर्ण रूप से स्थापित हो जायेगी। किन्तु टोजो को यह विचार पसन्द नहीं आया। यदि उन्होंने इन द्वीपों का अधिकार नेताजी को सौंप दिया होता और स्वयं अपनी सैनिक शक्ति बर्मा में केन्द्रित करते तो शायद घटनाक्रम नया मोड़ लेता। द्वीपों पर काबिज जापानी सैनिक अधिकारी इन द्वीपों का हस्तान्तरण करने को सहमत नहीं थे और बहाना यह था कि रण कौशल की दृष्टि से ये द्वीप महत्वपूर्ण हैं। टोजो की रणनीति के मामलों में ज्यादा नहीं चलती थी। जब नेताजी ने इस विषय पर बहुत जोर दिया तो उसने इस पर विचार करने को कहा और अपना यह वादा निभाया भी। टोजो ने सम्मेलन में एक लम्बा भाषण दिया जिसमें उसने इस बात का जिक्र किया कि जापान सरकार बहुत इच्छुक है कि भारत को स्वतंत्रता संग्राम में सहायता करने की वह अपनी निष्ठा का प्रारम्भिक प्रमाण दे। इस विषय पर चर्चा बढ़ाते हुए उसने इस बात का भी संकेत दिया कि जापान का इरादा इन द्वीपों का प्रशासन आजाद हिन्द सरकार को देने का है। नेताजी को इस इरादे के वादों की घोषणा से सन्तुष्ट होकर लौटना पड़ा जिसका अनुसरण करने की जापान की कोई मंशा नहीं थी।

कुछ औपचारिकता निभाई गई, किन्तु वास्तविक हस्तान्तरण केवल सांकेतिक ही रहा। नेताजी बहुत इच्छुक थे कि अंडमान द्वीपों को लेने तथा जापान के साथ घनिष्ठ सहयोग से काम करने की बात का प्रचार किया जाय। उन्होंने अपने आगामी अंडमान द्वीप की यात्रा के लिए कुछ आजाद हिन्द फौज के सैनिकों को अपने साथ ले जाने की इच्छा प्रकट की किन्तु आवागमन के साधनों की कमी का बहाना बनाकर उनकी यह मांग टाल दी गई।

जापान अभी-अभी एक प्रगतिशील राष्ट्र के रूप में उभरकर सामने आया था तथा उसे उपनिवेशीय प्रशासन का कोई अनुभव नहीं था। इस दृष्टि से वे अंग्रेजों से बहुत पीछे था जो इस मामले में एक बहुत बड़े कलाकार थे। जापान की प्रारम्भिक सफलता से लोग खुश थे किन्तु सैनिक शासन इस सद्‌भाव को कायम रखने में असमर्थ रहा।

जापानी अधिपत्य में सैनिक अधिकारियों का स्थानीय लोगों के प्रति शक व शत्रुता के व्यवहार ने दोनों तरफ बहुत हानि की। जबकि जापान का मनीपुर, सिंगापुर में अधिपत्य को बड़े आदर व सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है और ठीक उसके विपरीत अंडमान में इस काल की स्मृति मात्र से लोगों का हृदय दहलने लगता है क्योंकि उनके कारनामों से लोगों का जीवन वेदनापूर्ण व असहाय बन गया था।

सन् 1943 के प्रारम्भ में दक्षिण पूर्व एशिया में ब्रिटिश साम्राज्य के अवसान के बाद, जापान अंडमान द्वीप समूह पर अधिकार जमाकर तथा बर्मा में तूफान की तरह बढ़कर अब भारत के दरवाजे खटखटा रहा था। अंडमान व निकोबार द्वीप समूह जापान के अग्रिम हवाई हमलों के अड्डे थे जो भारत व श्रीलंका के लिए बहुत खतरनाक थे। इन अड्डों से जापान ने सफलतापूर्वक कलकत्ता, विशाखापटनम, काकीनाडा तथा कोलम्बो पर हवाई हमले किए। सुभाषचंद्र बोस के दक्षिण पूर्व एशिया में पहुंचने के सनसनी पूर्ण समाचार ने अंग्रेजों के होश गुम कर दिए। क्योंकि वे सुभाषचंद्र बोस की योग्यता व कार्यक्षमता को अच्छी तरह से जानते थे। देश के सभी राष्ट्रीय स्तर के नेताओं में से यदि अंग्रेज किसी एक व्यक्ति से डरते थे तो वह थे सुभाषचंद्र बोस। प्रारम्भ में अंग्रेजों ने सुभाष का उग्र रूप शान्त कर उन्हें अपनी तरफ करने का असफल प्रयास किया। उन्हें उस समय इंग्लैंड बुलाया जब वे भारत के राजनीतिक क्षितिज पर अभी उभर ही रहे थे। परन्तु इन सब बातों का सुभाष पर कोई असर नहीं पड़ा। अतः ऐसे नाजुक समय में सुभाषचंद्र बोस की इस क्षेत्र में उपस्थिति भारतीय प्रायद्वीप से अंग्रेजी साम्राज्य की मृत्यु सूचक घंटी बन सकती थी जहां पर कि अनेक व्यवसायिक संस्थानों में अंग्रेजों की अपार पूंजी लगी हुई थी और इसका अर्थ होता आर्थिक दृष्टि से उनका सर्वनाश जो राजनीतिक स्तर पर जापान के हाथों हार जाने से भी कहीं अधिक संकटपूर्ण था।

यह समय अंग्रेजों के लिए बहुत बड़ी विपदा का था। अंग्रेजी साम्राज्य की नींव उखड़ चुकी थी तथा उनके पास जापान को रोकने के साधनों का अभाव था। पर्लहारबर में अपनी हार का बदला लेने के लिए अमरीका छटपटा रहा था। अंग्रेजों ने, जो अपनी कूटनीति के लिए विख्यात हैं, अमरीका को इस रणक्षेत्र की एक महत्वपूर्ण व गम्भीर लड़ाई में कूदने के लिए प्रेरित किया। अंग्रेजों के पास थी बुद्धि व योजना और अमेरिका के पास थी अपार युद्ध सामग्री और दोनों अपने साधनों को मिलाकर एक करने को सहमत हो गए। माउंटबेटन बीसवीं सदी का एक बड़ा कूटनीतिज्ञ, विवादास्पद व रंगीन तबीयत का व्यक्ति था जिसके ऊपर इस नये रण कौशल को चलाने का उत्तरदायित्व सौंपा गया और 1943 में हुए क्यूवेक के सम्मेलन में उसे दक्षिण पूर्व एशिया में मित्र राष्ट्रों का सर्वोच्च सेनापति घोषित किया गया। माउंटबेटन अगले पच्चीस वर्षों तक इस प्रायद्वीप पर छाया रहा। कोई भी ऐसी महत्वपूर्ण घटना नहीं थी जिसमें उसका हाथ न रहा हो। यहां तक कि हाल में बनी जगत विख्यात गांधी जी पर फिल्म भी जैसा स्वयं एटनबैरो ने स्वीकार किया

माउंटबेटन के संकेत पर बनाई गई। जब माउंटबेटन ने बागडोर संभाली अधिकांश क्षेत्र जापान के कब्जे में था और युद्धस्थल में कुछ विशेष करने को नहीं था । अतः उसने अपनी पूरी शक्ति जापानी अधिपत्य क्षेत्र में तोड़-फोड़ की कार्रवाई में लगा दी । उसने एक बहुत बड़ी छापामार युद्ध की संस्था बनाई, इस संस्था के द्वारा ही उसने इस क्षेत्र में इतिहास को नया मोड़ दिया । चर्चिल अपनी सभी गुप्त योजनायें माउंटबेटन के द्वारा ही सम्पादित करता था और मुहम्मद अली जिन्ना के साथ भी बातचीत उसी के माध्यम से होती थी । माउंटबेटन कई भारतीय राजनीतिक नेताओं के साथ सीधे गुप्त सम्पर्क बनाए हुआ था ।

चूंकि भारत में आजाद हिन्द फौज द्वारा जापान की सहायता से आक्रमण की संभावनायें थीं तथा महात्मा गांधी द्वारा छेड़े गये "भारत छोड़ो" आंदोलन ने सिद्ध कर दिया था कि सारा देश क्रांति के दरवाजे पर है, ऐसी स्थिति में माउंटबेटन ने अपनी गुप्त संस्था 136 का मुख्यालय श्रीलंका के कैंडी में स्थापित किया । इसका दूसरा लाभ यह भी था कि यहां से पनडुब्बियों के संचालन में अधिक सुविधा थी तथा इसे खाली भी जल्दी किया जा सकता था । 136 की शाखाएं देशभर में फैला दी गईं । यहां तक कि कुछ शाखायें बर्मा, मलाया, जावा, सिंगापुर, जापान आदि देशों में भी थीं । भारत में इसकी शाखायें बंबई, कलकत्ता, मेरठ, दिल्ली, मद्रास आदि प्रमुख नगरों में बहुत योग्य व अनुभवी पुलिस अधिकारियों के अधीन थीं । जिनमें से अधिकांश अधिकारियों का प्रशिक्षण स्काटलैंडयार्ड में हुआ था । मेरठ की शाखा सी. एच. मैंकन्जी के अधीन थी, जिसमें जौन ल्योनार्ड कौली तथा चार्ल्स औनेल ने सहायता की ।

अंग्रेज इस बात को भली भांति जानते थे कि दक्षिण पूर्व एशिया में जापान का अंग्रेजों की गुलामी से मुक्ति दिलाने वाली शक्ति के रूप में स्वागत किया गया है । शायद यही एक कारण था कि वह इस तीव्र गति से सारे क्षेत्र में छा गया । सुभाषचंद्र बोस के आने से जापान को एक मनोवैज्ञानिक लाभ मिल गया जिससे अंग्रेजों का प्रचार-प्रसार शिथिल पड़ गया । आजाद हिन्द फौज के भारत की ओर बढ़ते कदम के साथ 1942 की तरह यदि एक अन्य सशस्त्र क्रांति भारत में हो जाती तो अंग्रेजों को खतरा था कि कहीं उन्हें समुद्र में फेंक न दिया जाय । जब उन्होंने देखा कि हम युद्ध क्षेत्र में जापान का मुकाबला नहीं कर सकते तो उन्होंने मुगल दरबारों में प्रचलित षडयंत्रों को अपनाया, जिसे उन्होंने अपने भारत के कार्यकाल में अच्छी तरह सीख लिया था । माउंटबेटन तो पर्दे के पीछे गुप्त मंत्रणाओं को करने में सिद्धहस्त था और बर्मा में उसने ओंगसान गुरिल्ला लीडर से, जो कि जापानियों का दाहिना हाथ था, गुप्त बातचीत शुरू कर दी ।

136 की अधिकांश गुप्त गतिविधियां माउंटबेटन के तत्वावधान में विशेष रूप से महत्वपूर्ण जापान अधिकृत अंडमान व निकोबार द्वीप समूह में चलाई गईं । दिल्ली, कलकत्ता, विशाखापटनम, मद्रास, कैंडी तथा त्रिकोमली के गुप्तचरी के अधिकांश महत्वपूर्ण केन्द्रों का

रुख अंडमान निकोबार द्वीप समूह व अन्य समीप के इलाकों की ओर कर दिया। कुछ अंग्रेज अधिकारी जिन्होंने पहले अंडमान में कार्य किया था उन्हें बुला कर विशेष प्रशिक्षण दिया गया तथा उन्हें पनडुब्बियों में तोड़फोड़ की कार्यवाही तथा अन्य षडयंत्र कांडों के लिए भेज दिया गया। कुछ भारतीय कर्मचारी भी जो अंडमान में सेवारत रह चुके थे, इन जासूसी केन्द्रों पर जासूसी रिपोर्टों को नक्शे व फोटो की मदद से समझाने के लिए इस्तेमाल किये गये। चूंकि इन द्वीपों में दक्षिणी भारत के अनेक लोग हैं अत: अधिकांश "एजेंटों" की नियुक्ति मद्रास, विशाखापटनम व केरल में की गई। उन्हें विशेष प्रशिक्षण के बाद उचित देखरेख में पनडुब्बी द्वारा विभिन्न महत्वपूर्ण स्थानों पर आवश्यक कार्य के लिए छोड़ दिया गया। वहां जाकर वे स्थानीय एजेंटों से सम्पर्क स्थापित करते, सूचना एकत्रित करते तथा वायरलैस से गुप्त भाषा में सूचना अंग्रेजों के पास भेजते और इन्हीं सूचनाओं के आधार पर हवाई हमलों की योजना बनती थी। स्थानीय एजेंटों की भर्ती में विशेष सावधानी रखी जाती। ऐसे लोगों को चुना जाता जिस पर किसी का शक न हो। उनमें से अंडमानी आदिवासी लौका भी था, जो बिना किसी रोक-टोक व शक के कहीं भी घूम सकता था क्योंकि इस नीग्रो की तरह काले व कम अक्ल समझे जाने वाले, व्यक्ति पर पोर्ट ब्लेयर के लोग भी शक नहीं कर सकते थे। धर्मेन्द्र गौड़ ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि उन्होंने पनडुब्बी में मलयाली लड़कों को वाराटांग पहुंचाया जिन्हें वह ट्रिकमलाई से लाया। उसका यह भी कहना है कि लिटिल अंडमान में उनकी पनडुब्बी को एक औंगी ने, जो मछली मार रहा था, देख लिया था। इस डर से कि वह कहीं इसकी सूचना दूसरों को न दे दे उसे रायफल का निशाना बनाकर वहीं पर ढेर कर दिया गया। इन द्वीपों में अनाज बहुत कम पैदा होता है। जापानियों को अपने अलावा स्थानीय लोगों को भी खिलाना पड़ता था। भोजन सामग्री लाने का एकमात्र साधन पानी के जहाज थे। माउंटबेटन के इस क्षेत्र में पहुँचते ही मित्र राष्ट्रों की हिन्द महासागर में युद्धपोतों व पनडुब्बियों की संख्या में बहुत वृद्धि हो गई। चारों ओर जासूसी का जाल फैलने के फलस्वरूप जापान की गतिविधियों की पूर्ण सूचनायें मिलने लगीं, जिन्हें पनडुब्बी व हवाई हमलों के साथ जोड़ने से मित्र राष्ट्रों की चोट करने की ताकत ने जापानी जहाजों का विध्वंस कर डाला तथा जापानियों का जीना हराम कर दिया। जब भी उनके पानी के जहाज खाद्य सामग्री व अन्य सामान लिए हुए बन्दरगाह में पहुँचने को होते तुरन्त वायरलैस से ऊपर सूचना जाती और तत्काल ही "एअर फोर्स" के बम वर्षक विमान, बमों की वर्षा से जहाज को रसातल भेज देते। उनके सभी महत्वपूर्ण प्रतिष्ठानों पर बम डाले जाते। इससे चारों तरफ वस्तुओं की कमी होने लगी और जापानी अपना सारा गुस्सा स्थानीय लोगों पर उतारने लगे। वे इतने क्रुद्ध हो गये कि एक बार तो वे समस्त द्वीप निवासियों को मौत के घाट उतारने की योजना बनाने लगे। सन् 1944 तक जापान के 750 व्यापारिक महत्व के जहाज डुबा दिए गए। जैसे ही जापानी जहाज बन्दरगाह पर पहुँचने को होते, ठीक उसी समय दुश्मन के जहाज उन पर बम वर्षा करने में कैसे सफल होते हैं यह जापानियों के लिए एक विस्मय व आश्चर्य की बात थी जिसकी गुत्थी सुलझाने

का उत्तरदायित्व "काउंटर इंटेलीजेंस" विभाग को सौंपा गया। अंग्रेजों को गुप्त सूचना भेजने का जिस पर जरा भी शक हुआ उन सबको हिरासत में ले लिया गया। लगभग 300 व्यक्ति, जिनमें विशेष कर्मचारी भी थे, "सेलूलर" जेल में बन्द किए गए तथा उनको अनेक अमानुषिक यातनायें दी गईं। सारी जनता बहुत दुखी व घबराई हुई थी। लोग रोज पकड़े जाते व छोड़े जाते। कब किसकी बारी आ जाए, कोई नहीं जानता था। मारपीट के अलावा अन्य यातनाओं में पानी का प्रयोग, बिजली का प्रयोग, बैठक यातना देना, जलाना, नाखूनों के अंदर सूई चुभोना आदि शामिल थे।

जापान के समर्पण के बाद कोम्पटन मैकेन्जी अपने इन द्वीपों में भ्रमण के दौरान उस समय के अनेक प्रताड़ित व्यक्तियों से मिला वह लिखता है - " भुक्त भोगियों का सात या आठ सदस्यों का एक दल डी. सी. के दफ्तर में आया, जब वे अपनी दुखभरी दास्तान सुना रहे थे उस समय उनकी आंखों में जो अजीब भाव अंकित हो रहे थे उन्हें मैं कभी नहीं भूल सकता। उनमें से एक व्यक्ति ने बताया कि किस प्रकार जासूसों की खोज में उसे व उसके परिवार को घसीट कर आधी रात को जेल में ठूंस दिया गया। उसके नाखूनों के नीचे गरम सलाखें आधे इंच अंदर तक घुसेड़ कर उसको यातना दी गई।"

जापान के "वायरलैस मौनिटर स्टेशनों" ने इन द्वीपों से भेजे जाने वाले "वायरलैस" संदेशों को पकड़ लिया। इससे वे बहुत परेशान व क्रोधित हो गए और उन्होंने चारों ओर समुद्र तट पर अनेक सैनिक चौकियां स्थापित कीं तथा सैकड़ों व्यक्तियों को थोड़े से शक पर सेलूलर जेल भेज दिया।

नेताजी का आगमन

दिसंबर 1943 के अंत में नेताजी सुभाषचंद्र बोस अंडमान आए। उनके लंबालाइन हवाई अड्डे पहुंचने पर द्वीपों के सर्वोच्च अधिकारी एडमिरल ईशिकावा ने उनका स्वागत किया तथा नेताजी ने वहां उपस्थित सैनिक टुकड़ी का निरीक्षण किया तथा सलामी ली। उन्हें उनके कर्मचारियों के साथ पुराना गवर्नमेंट हाउस के लिए रौस द्वीप में ले जाया गया। सारे मार्ग पर हजारों स्त्री-पुरुष व बच्चों की कतारें खड़ी थीं। यहां यह बताना आवश्यक है कि युद्ध के पूर्व रौस द्वीप प्रशासन का मुख्यालय था तथा सभी महत्वपूर्ण विभागों के कार्यालय भी यहीं थे। अवरडीन तथा रौस द्वीप के बीच हर पंद्रह मिनट में नावों की सेवाएं उपलब्ध थीं। जब अंग्रेजों ने इन द्वीपों को खाली किया, उसके पूर्व ही नौसेना के जहाजों द्वारा बमबारी के डर से इन द्वीपों को खाली कर सारा सामान पोर्ट ब्लेयर में रख दिया गया। इसी डर से जापानियों ने भी फिर दुबारा इसे मुख्यालय नहीं बनाया। नेताजी का अंडमान आने का मुख्य प्रयोजन, आजाद हिन्द सरकार के अंतर्गत यहां पर काम चलाऊ एक गैर सैनिक प्रशासन की स्थापना, विशेष रूप से मुख्य आयुक्त की नियुक्ति करना था।

दूसरे दिन नेताजी सेलूलर जेल देखने गए और उनके हृदय पर इसका बहुत बड़ा असर पड़ा। परन्तु जापानी उनके साथ में थे और उन्होंने उन्हें थोड़े से कैदियों को दिखाया तथा जेल भी पूरा नहीं दिखाया। वे जान-बूझकर उन्हें उस बाजू में नहीं ले गए, जहां दूसरे जासूसी कांड के सैकड़ों निर्दोष नागरिकों को बन्द किया हुआ था। उनके भ्रमण के अन्तिम दिन जिमखाना मैदान में एक आम जनसभा का आयोजन किया गया, जिसमें अपार जन समूह उमड़ पड़ा। नेताजी रौस द्वीप से सभा स्थल तक एक जलूस में आए, जिसमें जापानी अधिकारियों की गाड़ियों का समूह उनके दोनों तरफ चल रहा था। सभा स्थल पर पहुँचने पर सर्वप्रथम नेताजी ने तिरंगा झंडा फहराया। अंग्रेजों के अधिपत्य से सर्वप्रथम मुक्त की गई भारतीय धरती पर यह पहला तिरंगा झंडा था। उन्होंने अंडमान का नामकरण "शहीद द्वीप" एवं निकोबार का "स्वराज द्वीप" के नाम से किया। उन्होंने अपने भाषणों में देश के स्वतंत्रता के इतिहास की भूमिका पर प्रकाश डालते हुए आजाद हिन्द सरकार की स्थापना के महत्व को बताया। नेताजी सेलूलर जेल तथा अंडमान को विशेष महत्व देते थे। 1944 के प्रारम्भ में एक प्रेस विज्ञप्ति में उन्होंने कहा - "अंडमान की मुक्ति एक सांकेतिक महत्व की है, क्योंकि अंडमान को अंग्रेजों ने सदैव राजनीतिक बंदियों को जेल में डालने के लिए

प्रयोग किया जैसे कि पेरिस की बास्टील जेल, जहां फ्रांस की क्रांति में सर्वप्रथम राजनीतिक बंदियों को छोड़कर आजाद किया गया। भारत के स्वतंत्रता संग्राम में अंडमान को, जहां हमारे देशभक्तों ने अनेक यातनाएं सहीं, सबसे पहले मुक्त करना होगा। थोड़ा-थोड़ा करके सारा भारत देश आजाद होगा किन्तु सदैव प्रथम आजाद भूमि का टुकड़ा ही सबसे महत्वपूर्ण स्थान पाता है।"

'इंडियन इन्डिपेन्डेंस लीग' की अंडमान शाखा के अध्यक्ष ने अभिनंदन पत्र पढ़ा तथा आजाद हिन्द फौज को थैली भेंट की। इसके बाद नेताजी ने जनसभा को संबोधित किया। उसी रात नेताजी ने एडमिरल, अन्य सैनिक अधिकारी, कुछ भारतीय अधिकारियों तथा अन्य को प्रीति भोज दिया। चूंकि नेताजी को दूसरी सुबह ही प्रस्थान करना था और उन्हें आम जनता से मिलने का अवसर नहीं मिला था, तब "इंडिया इन्डिपेन्डेंस लीग" की अंडमान शाखा के एक सदस्य ने उन्हें सुझाव दिया कि वे सिंगापुर के लिए उड़ान भरने के पूर्व एक बार लीग के दफ्तर में आकर कार्यकारिणी के सदस्यों से अवश्य मिलें। नेताजी ने सहर्ष यह निमंत्रण स्वीकार कर लिया। इस अप्रत्याशित घटनाक्रम से जापानी असमंजस में पड़ गये क्योंकि वे नहीं चाहते थे कि नेताजी आम जनता से मिलें क्योंकि इससे उनकी बर्बर, क्रूर यातनाओं की पोल खुल जाने का अंदेशा था। यहां बहुत भीड़ जमा हो गई, पर किसी को भी व्यक्तिगत रूप से आपबीती सुनाने का अवसर नहीं मिला। केवल वे ही सभा को संबोधित कर सके। उनको विदा करते समय कुछ लीग के सदस्यों ने चलते-चलते उनके कान में जापानियों द्वारा किए जा रहे अत्याचारों की भनक डाल दी और उनसे प्रार्थना की कि वे तुरंत यहां का प्रशासन स्वयं संभाल लें। नेताजी ने इस सुझाव पर अपनी सहमति प्रकट की।

नेताजी ने 31 दिसम्बर 1943 को अंडमान से प्रस्थान किया। लगभग दो माह पश्चात 22 फरवरी 1944 को लेफ्टीनेंट कर्नल ए. डी. लोकनाथन इन द्वीपों पर आए और उन्होंने मुख्य आयुक्त का कार्यभार संभाला। उनके साथ अन्य तीन अधिकारी, कैप्टन मंसूर अली, सेकिंड लैफ्टीनेंट सुबासिंह तथा सेकिंड लेफ्टीनेंट मोहम्मद इकबाल थे।

यद्यपि कर्नल लोकनाथन आजाद हिन्द सरकार द्वारा मुख्य आयुक्त नियुक्त होकर पोर्ट ब्लेयर में 1944 के प्रारम्भ में आए किन्तु प्रशासन में कोई परिवर्तन नहीं किया गया। इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि उन्हें पोर्ट ब्लेयर में कोई औपचारिक रूप से पद की शपथ दी गई हो तथा उन्होंने सरकारी तौर पर मुख्य आयुक्त का पद भार संभाला हो। यद्यपि उन्होंने कई बार अपनी तथा उनके साथ के अधिकारियों की वस्तुस्थिति के संबंध में जानकारी प्राप्त करने के अनेक प्रयास किए किन्तु कभी कोई स्पष्टीकरण नहीं मिला। केवल जापानी गवर्नर से आदेश आते रहे। रामकृष्ण लिखते हैं -"चीफ कमिश्नर के एक सहायक को पुलिस विभाग व दूसरे को राजस्व विभाग दिया गया किंतु विभाग जापानियों के अधिकार में थे।"

कर्नल लोकनाथन आजाद हिन्द सरकार के इन द्वीपों में बतौर मुख्य आयुक्त सितम्बर 1944 तक रहे, जिसके पश्चात वे अंडमान से चले गए। वैसे जानें का कारण प्रतिकूल स्वास्थ्य बताया गया किंतु असली कारण था जापानियों के व्यवहार से उनका क्षुब्ध व निराश होना। सुबासिंह ने अपनी किताब में कर्नल लोकनाथन व उनके उद्देश्य की नाजुक स्थिति पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि उनके निवास स्थान के ठीक सामने बैरकों की खिड़कियों पर दूरबीन व टेलीस्कोप रख दिए गए थे ताकि उनसे मिलने वालों पर नजर रखी जा सके और इसमें जापानियों को भी नहीं छोड़ा गया।

किन्तु विदेशों में सुभाषचंद्र बोस द्वारा बनाई गई आजाद हिन्द सरकार के समाचार ने सनसनी पैदा कर दी। इसके संवैधानिक पक्ष से मित्र राष्ट्रों में खलबली मच गई। भारत में घर-घर में सुभाषचंद्र बोस की चर्चा होने लगी और उनकी कूटनीति पर आधारित योजनाओं ने भारतीय राष्ट्रीय नेताओं के ऊपर विशेष प्रभाव डाला।

चर्चिल ने विशेष रूप से माउंटबेटन का चुनाव एमरी सेक्रेटरी ऑफ स्टेट व जनरल इसमे की सलाह पर, सुभाषचंद्र बोस की गतिविधियों पर अंकुश लगाने के लिए किया तथा उसको इसके लिए विशेष अधिकार दिए गए। शायद बहुत कम लोग इस बात को जानते हैं कि माउंटबेटन भारत का वायसराय बनने से पूर्व इस प्रायद्वीप में एक सैनिक "डिक्टेटर" के अधिकारों का प्रयोग कर चुका था।

प्रारम्भ में माउंटबेटन की स्थिति को संभालने की क्षमता में बहुत संदेह था, चारों तरफ स्थिति अस्त-व्यस्त थी। स्वयं माउंटबेटन की समझ में भी नहीं आ रहा था कि वह किस प्रकार विशाल अमरीकी तथा सीमित अंग्रेजी सैन्य शक्ति के बीच सामंजस्य स्थापित कर मित्र राष्ट्रों के हित में कार्य करें। एलफ्रेंड क्रोफ्टस तथा पर्सी बुचानन ने "ए हिस्टरी आफ फार ईस्ट" में स्थिति का सिंहावलोकन इन शब्दों में किया है – "चीन, बर्मा, इंडिया थियेटर (सी. बी. आई.) जो मित्र राष्ट्रों की क्यूबेक सम्मेलन में स्थापित किया गया, वह व्यवस्था की दृष्टि से एक भयंकर डरावना सपना था। दक्षिण पूर्व में सर्वोच्च अधिकार राजनीतिक कारणों से एडमिरल माउंटबेटन को सौंपा गया। चीन में यह अधिकार चंकाई शेक के पास था। अमरीकी हवाई शक्ति, जो इस रण क्षेत्र में सबसे अधिक महत्वपूर्ण थी कम से कम आठ विभिन्न व परस्पर विरोधी स्रोतों से अलग-अलग और कभी एक-दूसरे के विपरीत आदेश पाते थे।"

माउंटबेटन के जीवन में 15 अगस्त का दिन विशेष महत्व का रहा है। इसी तिथि को 1943 में क्यूबेक में चर्चिल ने उसे मित्र राष्ट्रों की सेना का सर्वोच्च सेनापति का पद प्रस्तुत किया और फिर इसी तिथि पर जापान ने आत्म समर्पण कर 1945 में हथियार डाले। शायद यही कारण हो कि उसने भारत को आजादी देने के लिए इस तारीख को चुना हो। ऐसा प्रतीत होता है कि बहुत समय से माउंटबेटन को भारत के मामलों से सम्बद्ध करने की कोई पूर्व नियोजित योजना थी। दक्षिण पूर्व एशिया में जापान के हाथ अंग्रेजों की

शर्मनाक हार, अंग्रेजी फौज के टूटते हौसले, भारतीय सैनिकों का बहुत बड़ी संख्या में अंग्रेजी पलटन छोड़कर आजाद हिन्द फौज में शामिल होना और सबसे अधिक सुभाषचंद्र बोस के दक्षिण पूर्व एशिया में पहुंचने से वातावरण में एक नया जोश व उत्साह ऐसे मामले थे जिसने अजेय अंग्रेजी साम्राज्य की कल्पना को चकनाचूर कर दिया। अब सब समझने लगे थे कि यह बालू की दीवार ढहने को है और सारे संसार को मालूम हो गया कि ब्रिटेन केवल एक कागजी शेर है। इस तथ्य को सुभाषचंद्र बोस बहुत अच्छी तरह जानते थे और अपने बर्लिन व टोकियो के रेडियो प्रसारणों में वे देशवासियों से कह रहे थे, अंग्रेजी हकूमत आखिरी सांस ले रही है और उसका अंत अब होने ही वाला है।

युद्ध का मुख्य लक्ष्य अंडमान निकोबार द्वीप समूह बन गया, जो आजाद हिन्द सरकार का मुख्यालय बनने जा रहा था। माउंटबेटन ने जापानी गतिविधियों पर खुफिया रिपोर्ट तथा जापानी अधिकृत क्षेत्र में तोड़-फोड़ की कार्रवाई करने के लिए विंगेट को जो "लोंग रेंज पेनीट्रेशन" का मुखिया था, सारी जिम्मेदारी सौंपी। विंगेट एक बहुत बड़ा छापामार युद्ध का मुखिया था, जिसने पहले अंग्रेजों के जासूस के रूप में अफ्रीका में लोगों को उनकी सरकार के विरुद्ध भड़काया था। वह कोई निश्चित सुनियोजित रणकौशल में विश्वास नहीं रखता था तथा वह अपनी चाल व गतिविधियों को समय के अनुसार बदलता रहता था। एक समय उसके आदमी, बर्मा की आजादी के तुरंत बाद, दिन में गुरिल्ला युद्ध का प्रशिक्षण सरकारी टुकड़ी को तथा यही प्रशिक्षण रात को विद्रोहियों को देते थे। भारत सरकार तथा कमांडर इन चीफ ने, जैसा कि पहले बताया गया है, माउंटबेटन को पूरी छूट दे दी थी कि वह जैसी चाहे रणनीति निर्धारित करे व उसका सम्पादन करे। सभी गैर सैनिक, पुलिस एवं सेना तथा अन्य साधन माउंटबेटन को सौंप दिए गए।

अंडमान व निकोबार द्वीप समूह पर हमले की विस्तारपूर्वक योजनाएं बनाई गईं। सभी गैर सैनिक भारतीय कर्मचारियों को, जिन्होंने अंडमान में काम किया था तथा सरकार के वफादार थे, उन्हें अंडमान के विषय में उचित जानकारी देने तथा हवाई हमले के ठिकानों की ठीक पहचान कराने के काम में लिया गया। ए. आर. खान ने, जो कि अंडमान में असिस्टेंट सेक्रेटरी थे, लेखक को स्वयं बताया कि उन्हें भी इस काम में लगाया गया। सभी अंग्रेज अधिकारी, जिन्होंने अंडमान में पहले काम किया था, उन्हें भी इस काम में लगाया गया। बॉब स्कॉट, जो पहले कार निकोबार में असिस्टेंट कमिश्नर था, उसे उत्तरदायित्व सौंपा गया कि वह उन सब लोगों से सम्पर्क स्थापित करे। जापानी अधिपत्य के पूर्व डेनिस मेकार्थी अंडमान में पुलिस का कप्तान था और कुछ एजेंटों की भर्ती करने के पश्चात वह उन अधिकारियों में था, जिन्होंने अंडमान आखिरी वक्त छोड़ा। वह रायबरेली में पुलिस कप्तान के पद पर काम कर रहा था। बॉब स्कॉट ने उससे सम्पर्क स्थापित किया। उसे 136 में शामिल किया गया किन्तु उसका असली स्वरूप छिपाने की दृष्टि से औपचारिक रूप से उसे एक सिख रेजीमेंट में कमीशन देकर मेजर बनाया गया। 136 उस समय कर्नल

क्रिस्टोफर हडसन के नीचे थी । एक पनडुब्बी में मेकार्थी ने कोलम्बो से अंडमान के लिए प्रस्थान किया और उसके साथ वायरलेस ओपरेटर सार्जेंट डिकन्स, जमादार हबीबशाह व हवलदार ज्ञानसिंह थे और साथ में रांची के दो मजदूर भी थे । अंडमान के पश्चिमी समुद्र में वे उतर कर फरारगंज पहुंचे तथा जापानियों के कड़े पहरे के बावजूद हथेली पर जान रखकर दिए गए जासूसी कांड को पूरा करने में सफल रहे । इसी प्रकार अन्य अंग्रेज अधिकारियों को अन्य दूसरे जासूसी के काम सौंपे गये ।

माउंटबेटन के अंडमान पर हमले की योजना का गुप्त नाम रखा गया – "बूकानीर" । योजना के अनुसार यह हमला मित्र राष्ट्रों की सैनिक शक्ति की मदद से करना था, जिसके अन्तर्गत उत्तर से बर्मा में चीन द्वारा आक्रमण होना था ताकि जापान अपनी बर्मा की सेना को अंडमान न भेज सके । लेकिन कुछ लोग माउंटबेटन की इस योजना से सहमत नहीं थे । उनके अनुसार बर्मा व सिंगापुर जीतना और अधिक महत्वपूर्ण था । किन्तु माउंटबेटन बर्मा के जंगलों में लड़ने को तैयार नहीं था । एक नौसेना का अधिकारी होने के नाते वह समुद्र में लड़ना अधिक पसन्द करता था, इस दृष्टि से अंडमान उपयुक्त जगह थी ।

माउंटबेटन ने क्यूबेक सम्मेलन के बाद कहा - "उन्होंने मुझे सब कुछ दे दिया है" जनरल स्लिम को उसने लिखा - "हमें इतने पानी के जहाज मिल रहे हैं कि भारत व सीलोन के बन्दरगाहों में उनके लिए जगह नहीं रहेगी ।" उसकी योजना अनुसार पानी के जहाज ही जापान को परास्त कर सकते थे। जंगलों में जापानियों को जीतना आसान नहीं था । स्वयं चर्चिल ने जंगल में जापानियों से लड़ने को "पानी में जाकर शार्क मछली से लड़ने के बराबर बताया ।" अंग्रेजी सेना के मुख्य सेनानायकों ने भी इस रणनीति की मुक्तकंठ से सराहना की । उनके अनुसार दक्षिण बर्मा व रंगून को दुबारा जीतना रणकौशल का आंशिक लाभ होगा जबकि इसमें अथक प्रयास करना होगा······ "सिंगापुर को रंगून से पहले जीतना समुद्री व वायुशक्ति का सही प्रयोग होगा । पूरब की दुनिया में बिजली की सी जगमगाहट हो जायेगी, जिसका जापान पर बहुत बड़ा मनोवैज्ञानिक दबाव पड़ेगा । पूरब की दुनिया को बिजली की तरह आलोकित करने के साथ पश्चिमी दुनिया को भी यह चमत्कार दिखाना माउंटबेटन की इच्छा का अंग था ।" ये शब्द हैं माउंटबेटन की जीवनी लेखक जिगले फिलिप के ।

इस रणनीति के अनुसार आजाद हिन्द फौज तथा आजाद हिन्द सरकार के मुख्यालय को जीतने का प्रयास भी सम्मिलित था । यदि इसमें सफलता मिल जाती तो अंग्रेजों की भारत में प्रतिष्ठा पुनः स्थापित हो जाती किंतु इसके कार्यान्वयन में विशाल अड़चनें थीं । ऐमरेट ह्यूजेज, अमरसका के जनरल, ने अपनी डायरी में लिखा है - "बर्मा में कुछ गड़बड़ है. ······ अंग्रेज सिंगापुर जाना चाहते हैं और अमरीका चीन" रूजवेल्ट को यकीन हो गया था कि सिंगापुर को जीतने की इच्छा से अंग्रेजों का सिर फिर गया है और इसमें उनकी

मदद करने का उसका कोई इरादा नहीं था क्योंकि सारा साज-सामान व युद्ध-सामग्री इस युद्ध के लिए अमरीका को देनी होगी, अतः उनकी स्वीकृति आवश्यक थी।

चर्चिल एक दूसरी युद्ध योजना "कुलवरीन" को चाहता था। जिसके अनुसार उत्तरी सुमात्रा व अंडमान पर कब्जा करना था, जिससे बर्मा में जापानियों की रक्षा पंक्ति टूट जाएगी तथा सिंगापुर पर, जिसे वह हिंद महासागर का "टोर्च" कहा करता था, हमला बोलना संभव हो जायेगा।

सन् 1943-44 के सूखे के मौसम में चर्चिल काहिरा के सम्मेलन में पूरी युद्ध की योजनाओं के साथ आया। योजना के अनुसार आराकान के तट से होते हुए आक्याब की ओर बढ़ना, शेष कार्य जनरल स्टिलवेल्स के तीन "डिवीजनों" से करना तथा उत्तर से चीन का हमला शामिल था। माउंटबेटन के प्रिय छापामार दस्ते विंगेट के "लोंग रेंज पेनीट्रेशन" ने इन सबकी सहायता करनी थी और इस सबके साथ एक अन्य योजना छोटे "कुल्वरीन" की थी, जिसे नाम दिया गया "बुकानीर", जिसके अन्तर्गत अंडमान पर हमला बोलना था। रूजवेल्ट ने उत्तर दिया - "जिस तरह से चर्चिल बात कर रहा था तुम्हें लगा होगा कि बल्कान की इस तरफ सबसे बड़े सामरिक महत्व की जगह है, ओर ये बंगाल की खाड़ी में दक्षिण बर्मा से कुछ दूरी पर है। वे सोच रहे हैं अंडमान से वे रंगून पर हमला कर सकेंगे।"

माउंटबेटन ने विस्तारपूर्वक सारी योजना समझाई किन्तु चंकाई शेक ने विशेष रुचि नहीं दिखाई। सच बात तो यह थी कि 1942 में वह अमरीका के राष्ट्रपति के इशारे पर सपत्नीक भारत को आजादी दिलाने के लिए भारत गया था। इस संबंध में अंग्रेजों के नकारात्मक व्यवहार से उसे बहुत क्षोभ हुआ। अंग्रेजों ने उन्हें गांधी जी से वर्धा में मिलने तक नहीं दिया। इस बात का प्रयास किया गया कि चर्चिल व चंकाई शेक के बीच एक बैठक हो व बातचीत से मामला सुलझाया जाए। किंतु इस बैठक को भी चंकाई शेक ने चीन की पुरानी राजनीतिक दावपेंच की चतुराई से टाल दिया। बैठक का समय संबंधी संदेश, जो चीनी भाषा में था, जान-बूझकर पेचीदा बनाया गया और कहा गया कि "चांग कहते हैं कि तब जायेंगे जब सूर्य सिर के ऊपर होगा"। सूर्य ठीक सिर के ऊपर किस समय होगा इसके बारे में दुभाषियों में मतभेद हो गया, फलस्वरूप बैठक न हो सकी। अंत में माउंटबेटन से कहा गया कि वह स्वयं जाकर अंडमान जीतने की "बुकानीर" योजना को चंकाई शेक को समझाएं। माउंटबेटन चंकाई शेक से मिलने के लिए रामगढ़ गया और उसको सारी योजना विस्तारपूर्वक समझायी। चंकाई शेक माउंटबेटन की योजना तथा तथ्यों के ऊपर उसकी पकड़ से बहुत प्रभावित हुए किंतु जहां तक इस योजना में चीन की भूमिका थी, उसके विषय में उसने गोलमाल बात की और माउंटबेटन के अनेक प्रयासों के बावजूद वह उससे "हां" नहीं करा सका। बहुत निराश व उदास माउंटबेटन दिल्ली वापस लौटा। अपनी डायरी में वह लिखता है - "मुझे कहना पड़ेगा यह काम मेरे कुछ बचे हुए काले बालों

को पूरा सफेद करने के लिए काफी है, मुझे विश्वास नहीं होता कि किसी भी आदमी के लिए इससे अधिक कठिन काम का आविष्कार किया जा सकता है और वे लोग जो मेरे इस पद के लिए मुझसे ईर्ष्या रखते हों, यदि कोई हों तो जरूर पागल होंगे।"

अब अंडमान पर हमले की योजना से अंग्रेजी सेना के प्रधान सेनानायक स्टाफ भी सहमत नहीं थे, जिनकी नजरों में यूरोप का कहीं अधिक महत्व था। माउंटबेटन की जीवनी के अनुसार "ब्रिटिश चीफ्स आफ स्टाफ" कभी भी "बुकानीर" योजना के लाभ के बारे में आश्वस्त नहीं थे, "सोचने लगे कि वह सब युद्ध सामग्री जिसकी माउंटबेटन को आवश्यकता थी उसे अन्य जगहों पर अच्छे प्रयोग में लाया जाय। जैसे कि स्थिति को और अधिक बिगाड़ने के लिए किया हो, माउंटबेटन ने यही समय चुना संशोधन मांग भेजने के लिए जिसके अनुसार इस युद्ध योजना की सफलता के लिए मांग बढ़ाकर पचास हजार सैनिकों की कर दी।"

गलत समय पर इस मांग को उठाने का तत्काल परिणाम यह हुआ कि माउंटबेटन ने चर्चिल का सहयोग खो दिया। उसने लिखा-"मामला ध्यान में रख लिया। निःसंदेह भाप द्वारा चालित हथौड़े से काष्ठफल टूट जाएगा।" चर्चिल ने यह जानते हुए भी कि इससे माउंटबेटन के मन में गहरा घाव लगेगा, "बुकानीर" युद्ध योजना को रद्द कर दिया। चर्चिल ने इसमें लिखा - "यदि मैंने डिकी माउंटबेटन की जापानियों पर हमले की फिर एक अन्य योजना के स्थगन पर उसकी घोर निराशा की कल्पना की होती तो मैं अपने उद्धरण को कहावत का एक अन्य उद्धरण देता कि आशा के स्थगन से दिल डूबने लगता है।"

माउंटबेटन ने इन विषम परिस्थितियों का सामना बहादुरी से किया। वायसराय बावेल ने उसको "अधिक थका व निराश" पाया, जैसा कि इसके पहले कभी नहीं देखा था किंतु माउंटबेटन ने अपने को संभाल लिया और ब्रुक से कहा - "यद्यपि दक्षिण पूर्व एशिया के सभी लोगों का दिल इस निर्णय से टूट गया है फिर भी हमारे पास अच्छा दिल है और हमारी पूंछ ऊपर को है और हम साधनों के अनुकूल कठिन युद्ध लड़ने का इरादा रखते हैं।" माउंटबेटन ने चर्चिल को लिखा "यद्यपि बहुत लोग उदास हैं तथा इस युद्ध योजना के रद्द होने से यहां के लोगों के मनोबल पर ठेस पहुंची है। मैं निश्चित रूप से स्वीकार करता हूँ और जो कुछ मैंने इस विषय में सुना उस आधार पर कह सकता हूं कि मैं अपने आंतरिक हृदय से, आपने जो निर्णय लिया है, उस पर सहमति प्रकट करता हूं।"

जबकि "बुकानीर" की युद्ध योजनाएं लड़ाई के सम्मेलनों के मेजों पर विचाराधीन थीं, ठीक उसी समय अंडमान द्वीप में जासूसी गतिविधियां अभूतपूर्व ढंग से अंग्रेजों ने बढ़ा दीं। फलस्वरूप उसी अनुपात से जापानियों के अत्याचार व यातनाएं भी बढ़ने लगीं। इस योजना के रद्द होने से इस काम में लगे जासूसों को ठेस पहुंची विशेष रूप से विंगेट के गुरिल्ला दल को। विंगेट ने जापानी अधिकृत क्षेत्र में कई बार अनेक सफल अभियान किए। उसने बर्मा के लिए, जिसे वह हथेली की तरह जानता था, गुरिल्ला युद्ध की बृहद

योजना बनाई थी। बर्मा के जापानी अधिकृत क्षेत्र में नौ हजार जवान तथा 1100 खच्चरों का उतारना एक अनोखी उपलब्धि थी किंतु उसके तुरंत बाद ही वह एक हवाई दुर्घटना में मर गया।

माउंटबेटन ने अपनी पत्नी इडविना को लिखा - "मैं तुम्हें बता नहीं सकता, मैं विंगेट की कितनी कमी महसूस करूंगा, न केवल हम दोनों एक घनिष्ठ मित्र बन गए थे बल्कि वह ऐसी आग उगलने वाला व्यक्ति था जो लड़ने की ज्वाला लिए हुए था। ऐसे आदमी का पास में रहना मेरे लिए एक बड़ी मदद थी। वह अपने ऊपर के जनरलों के लिए सिरदर्द बना रहा किंतु मैं उसके जंगली उत्साह से प्रेम करता था। मेरे लिए ऊपर से इसके लिए प्रयास करना या आदत डालना कठिन होगा।" विंगेट ने सचमुच में जापानियों का अंडमान में जीना हराम कर दिया और 1945 के प्रारंभ तक इतने जापानियों के पानी के जहाज डुबा दिए थे कि मित्र राष्ट्रों के जहाज निर्भय होकर हिंद महासागर में घूमने लगे थे।

अंडमान में इन गुप्त भेदियों ने लोगों को अंग्रेजों द्वारा इन द्वीपों पर कब्जा करने की झूठी अफवाहों से बहका दिया था। जापानियों का अब स्थानीय जनता के प्रति किसी प्रकार का विश्वास नहीं रहा और अफवाहें फैलाने के जुर्म में भी वे लोगों को सताने लगे। तोड़-फोड़ की कार्यवाही, खास ठिकानों व जापानी पानी के जहाजों पर हवाई हमलों ने बहुत बड़ी बर्बादी कर दी। अंग्रेजों की रिपोर्ट के अनुसार चैथम स्थित आरा मिल पूरी तरह नाकाम कर दी तथा द्वीपों के मुख्य बंदरगाह को नुकसान पहुंचाया। होपटाउन स्थित कोयले का भंडार पूर्णतया नष्ट कर दिया गया। लगभग 17 बैरकनुमा भवन विभिन्न स्थानों पर नष्ट किए गये या उन्हें नुकसान पहुंचाया गया। रौस द्वीप में कई बैरकनुमा भवन नष्ट किए गए। अटलांटा पाइन्ट पर सेलूलर जेल की इमारत को भी नुकसान पहुंचाया गया।

बचाव के लिए जापानी सिपाहियों ने लोगों को बाहर निकाल कर स्वयं उनके घरों में शरण ली। सभी वयस्क व बड़े बच्चों को नाममात्र मजदूरी पर जापानी सिपाहियों ने जबरदस्ती काम पर लगाया। कुछ काम ऐसे थे जिन पर बहुत परिश्रम करना पड़ता था किंतु मजदूरी युद्धकालीन नोटों में दी जाती थी। शकरकंद ही मुख्य भोजन बन गया था। यदि किसी के पास थोड़ा चावल हुआ भी तो वह उसमें कुछ पत्तियां मिलाकर पतली खिचड़ी के रूप में खाता था।

कुछ गांव, जिनमें जापानी सिपाहियों ने शरण ली, वे भी हवाई हमलों की चपेट में आए। एक बार कुछ जापानी सिपाही रंगाचांग के समुद्र तट पर नहा रहे थे, जिसको अंग्रेजों की पनडुब्बी ने देख लिया था। पनडुब्बी ने नजदीक से गोली बारी की, जिसमें अनेक भारतीय भी मारे गए। कुछ देर बाद सारा समुद्र तट व सड़क लाशों से पट गई।

लड़ाई के अन्तिम दिनों में अंडमान में लोगों की स्थिति बहुत अधिक खराब हो गयी। खाना प्राप्त नहीं था। कपड़े सब फटे-पुराने रह गए। अचानक हवाई हमलों ने स्थिति को और भी गंभीर बना दिया। लोग जीवन व सम्पत्ति से विरक्त हो गए। इस समय

दो घटनाएं हुईं। जापानियों का जासूसी अंग "थोकोमोहन" जो आज तक भूमिगत रहकर काम करता था, वह अब खुलकर बाहर आ गया और उसने पोर्ट ब्लेयर के मुख्य बाजार में अपना मुख्यालय बनाया और वहीं पर लोगों के दल पूछताछ के लिए लाए जाते थे। इससे लोग बहुत आतंकित हो गए।

दूसरी घटना थी, सब अंग्रेजी पढ़े-लिखे अच्छे घरों के आदमियों व औरतों को एक स्थान "नानताई" में जमा करना। बहाना बनाया गया कि "नेमल इन्डस्ट्रीज" विभाग औरतों को सीना-पिरोना तथा आदमियों को कुछ तकनीकी शिक्षा देगा। परन्तु इस योजना का असली उद्देश्य था उन सब अंग्रेजी जानने वालों का पता लगाना जो समझा जाता था कि अंग्रेजों को खबरों से अवगत करा रहे हैं। यदि आवश्यकता हुई तो उन सबकी जीवन लीला समाप्त करना। इसी समय जापानियों ने उन्हें सिगरेट, चीनी, चावल आदि बांटना भी आरम्भ कर दिया ताकि उन्हें जापानियों की असली मंशा का पता न चल सके। दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि उन्हें डर था कि यदि अंग्रेजों ने पुनः यहां कब्जा किया तो हो सकता है ये लोग उधर चले जाएं।

जून 1945 तक मित्र राष्ट्रों के हवाई हमलों की संख्या में काफी वृद्धि हो गई थी। पानी के जहाजों का आना-जाना लगभग बन्द सा हो गया था और सारा आर्थिक ढांचा टूट चुका था। शहर से व्यापारी भाग कर गांवों में चले गए तथा भूमि सम्बन्धी नीति में परिवर्तन के कारण ग्रामीण गांवों से शहर की तरफ जा रहे थे। जापानियों ने घोषणा की कि पोर्ट ब्लेयर में कृषि उत्पादन बढ़ाने की सीमित संभावनाएं हैं। इस कमी की पूर्ति के लिए एक योजना बनाई गई, जिसके अनुसार जंगल साफ कर नयी जमीन को कृषि के लिए तैयार करना था। परन्तु इस कल्याणकारी योजना के पीछे एक बहुत घृणित कुचक्र था।

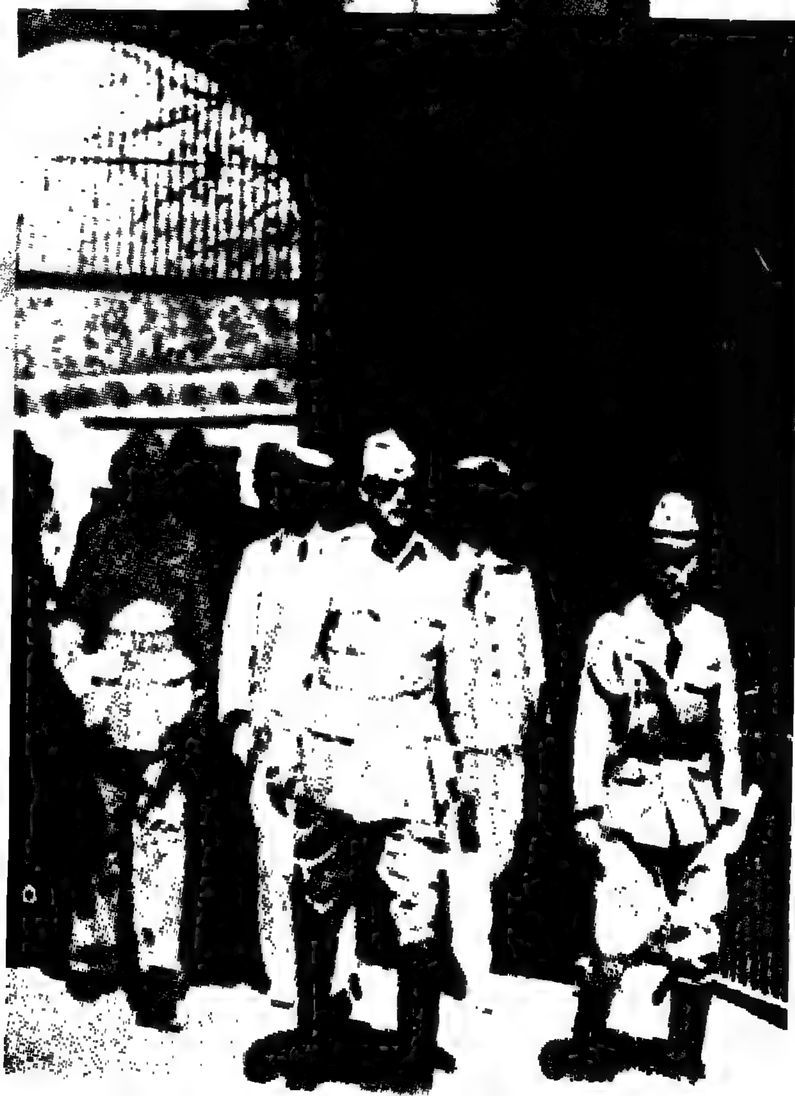
बहुत बड़ी संख्या में जापानियों ने लालच देकर लोगों को जमा किया तथा उन्हें सेलूलर जेल के एक हिस्से में ठहराया और अधिक लोगों ने इस नयी योजना में उत्सुकता दिखाई तथा 400 से लेकर 500 तक जो लोग आए थे उसमें अब करीब 100 आदमी और बढ़ गये। यहां इन्हें 24 घंटे तक रखा गया। दूसरे दिन शाम के समय, जब अधिकांश भूख व प्यास की शिकायत करने लगे, तो उन सबको बहुत सारे ट्रकों में, जो जेल के गेट पर खड़े थे, ठूंस दिया गया। ट्रक बंदरगाह के नावघाट तक गए। लगभग 300 लोगों को "अकबर" नाम के पानी के जहाज में चढ़ाया गया तथा बाकी लोगों को दो एल. सी. टी. में। प्रत्येक में 200 आदमियों को भरकर सब खुले समुद्र की ओर चल दिए। जैसे ही ये लोग हैवलोक द्वीप के पास पहुंचे जापानी सिपाही अपनी संगीनों से तथा अधिकारी अपनी तलवारों से लोगों को समुद्र में कूदने का इशारा करने लगे। लोगों की कुछ समझ में नहीं आया। पहले तो उन्होंने सोचा ये लोग मजाक कर रहे हैं किन्तु जब उन्होंने देखा कि सचमुच में उन्हें समुद्र में कूदना पड़ेगा तो भय के मारे उनका चेहरा सफेद पड़ गया। जीते जी वे शार्क का भोजन कैसे बनेंगे, वे जापानियों से अपने प्राणों की भीख मांगने लगे। लेकिन निर्दयी

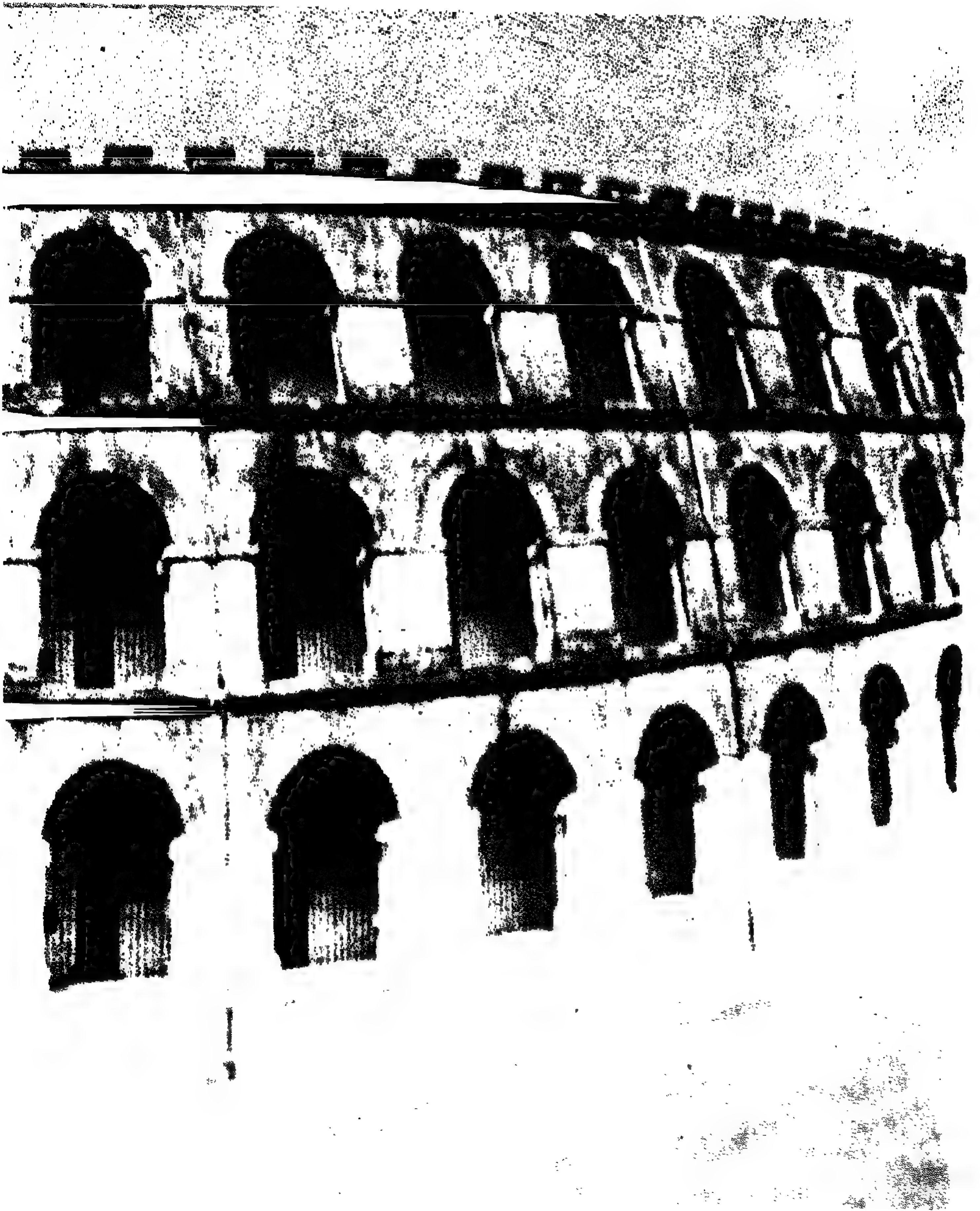


निकोबारी कुटिया



ओंगी आदिवासी





सेलूलर जेल

सुभाषचंद्र बोस द्वारा जापानी अधिकारियों के साथ सेलूलर जेल की यात्रा



निकोबारी कुटिया में लोग



चौरा के लोगों द्वारा निर्मित मिट्टी के बर्तन

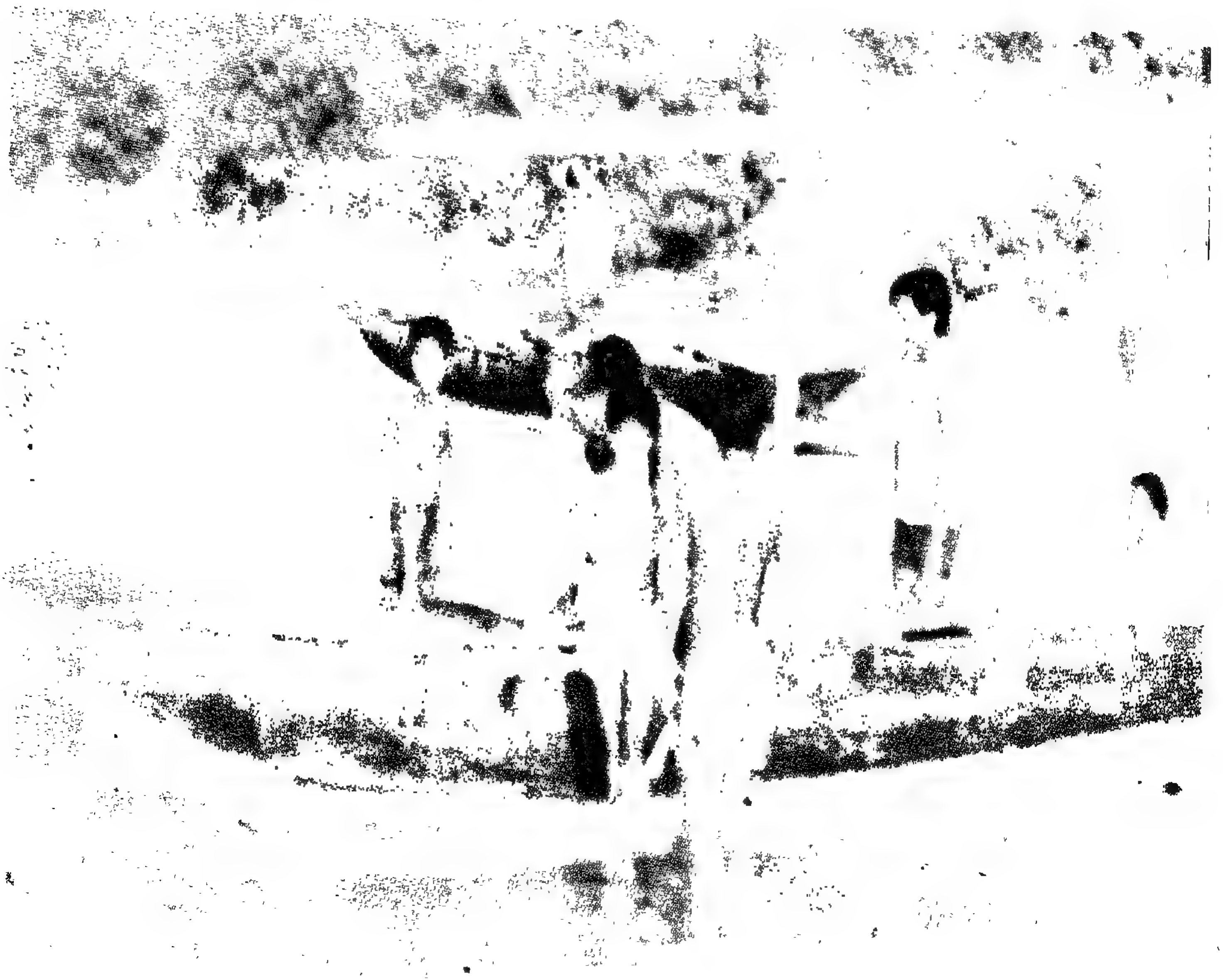




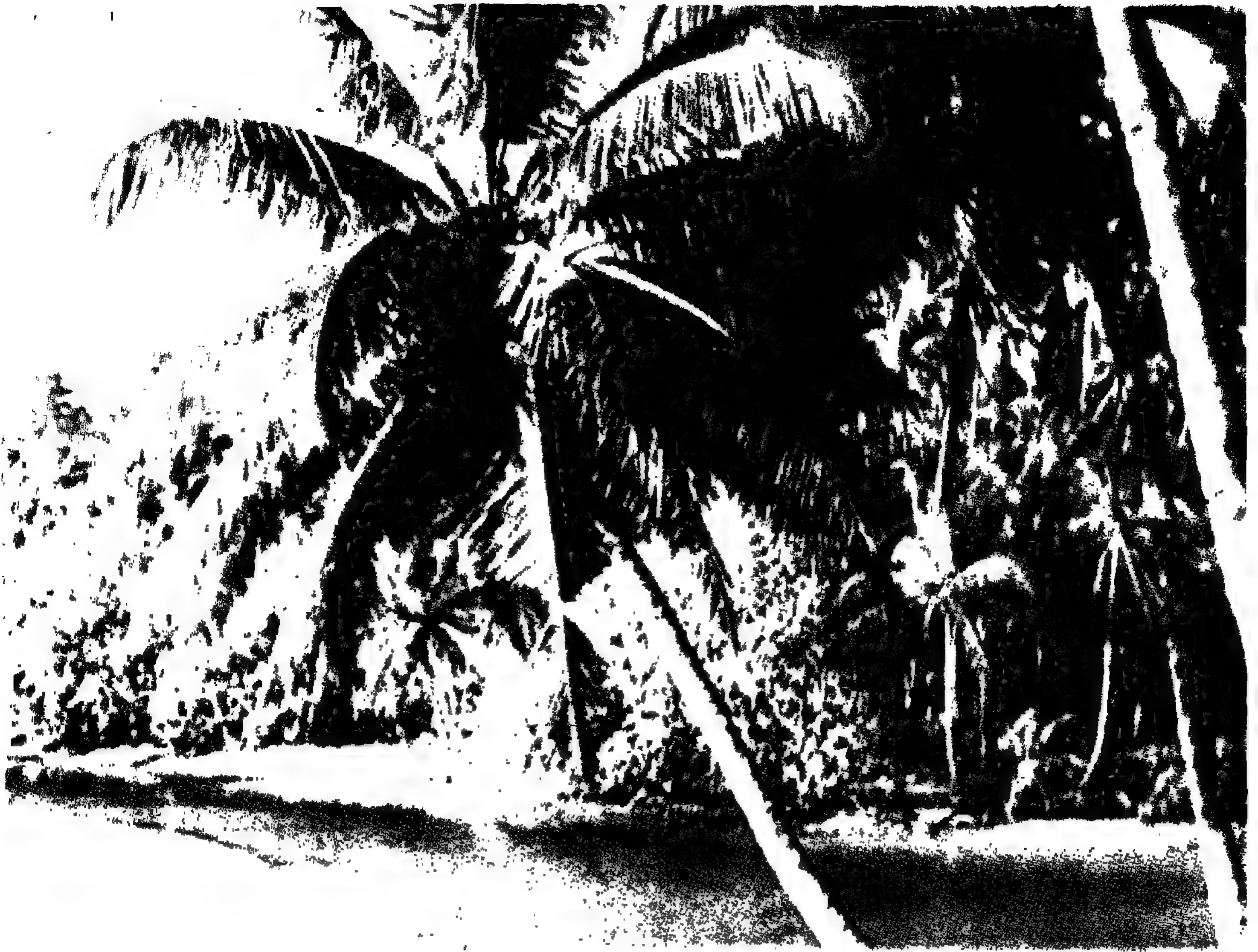
पुष्प मेला

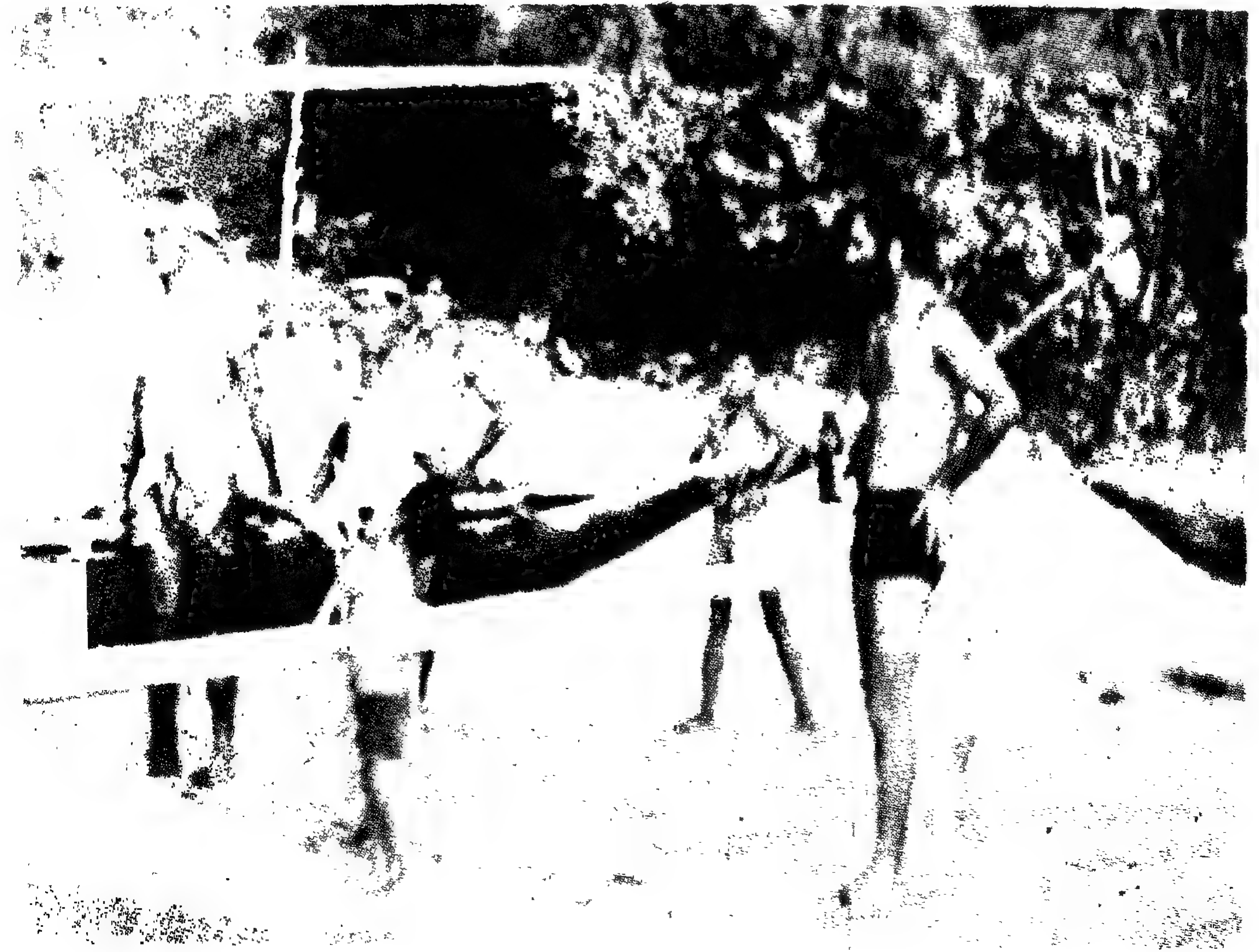


किमिअरू



सुंदर रेतीला समुद्र तट





सोम्पेन आदिवासी



निकोबारी नृत्य





सोम्पेन आदिवासी

जापानियों ने एक न सुनी। जो नहीं कूदता था उसका सिर काटना शुरू कर दिया। अधिकांश लोग डूब गये। कुछ लोग जो तैरकर या उल्टा लेट कर प्राणों को बचाने का प्रयास भी कर रहे थे या वैसे भी मौत से लड़ रहे थे, जापानियों ने उनके ऊपर दो तीन बार एल. सी. टी. चलाकर उन्हें प्रोपेलर से कटवा दिया। मुश्किल से थोड़े से लोग किनारे पर जा सके और बाद में उनमें से भी और मर गये। केवल 6 व्यक्ति बचे उनमें से इस दुखभरी कहानी सुनाने वाले एक मोहम्मद सौदागर भी हैं जो आज भी जिन्दा हैं। लेखक ने स्वयं उनके मुंह से यह दर्दनाक कहानी सुनी। मोहम्मद सौदागर ने मरणासन्न अवस्था में किनारे लगे मरे हुए आदमियों का गोश्त खाकर अपने प्राण बचाए।

एक सप्ताह बाद एक अन्य काण्ड हुआ, जिसे "राउण्ड अप" कहा गया। इस बार दृश्य बदल कर गाराचरामा गांव की एक झोपड़ी में चला गया। जिस प्रकार पहले काण्ड में लोगों को सेलूलर जेल में बन्द किया गया वैसे ही आस-पास से लोगों को इकट्ठा कर दो दिन तक उन्हें इस झोपड़ी में रखा गया। तीसरे दिन लगभग पांच सौ आदमियों को ट्रकों में भरकर 13 मील दूर समुद्र के किनारे ले गए तथा वहां से तारमुगली जहाज में ले जाकर उन्हें मार डाला गया।

इन द्वीपों में जापानी अधिपत्य व उनके काले कारनामों का यह सबसे भयानक समय था। राशन नहीं रह गया था और सभी दिशाओं में वे हार रहे थे। अपने बचने का एकमात्र उपाय उन्होंने स्थानीय लोगों को समाप्त करना समझा। ये घटनाएं जापान के हथियार डालने के समय अगस्त 1945 के आस-पास हुईं। पहला काण्ड इस तिथि से करीब पन्द्रह दिन पूर्व हुआ और दूसरा केवल समर्पण के दो दिन पूर्व। इसका यह मतलब नहीं है कि अमानुषिक व बर्बरतापूर्ण केवल यही दो घटनाएं हैं, जिन्हें लड़ाई की मजबूरी कहकर टाल दिया जाए। ऐसी अनेक हृदय विदारक घटनाएं हैं। कुछ समय पूर्व करीब 40 नौजवान पढ़े-लिखे लोगों को जासूसी के झूठे अभियोग में सेलूलर जेल में बन्द कर दिया और बिना उचित मुकदमे के एक दिन उन सबको ट्रकों में लाद कर हम्फ्रीगंज के निकट एक नाले में मार दिया गया।

जापानियों के आत्म समर्पण व हथियार डालने की खबर द्वीपों में 15 अगस्त 1945 को आ गई थी। अंडमान में सारे वातावरण में तथा जापानियों के व्यवहार में परिवर्तन आ गया। सभी हवालात में बन्द तथा अन्य बंदियों को 19 ता. को घर जाने की छूट दे दी गई। किन्तु इसकी विधिवत् घोषणा गवर्नर ने 21 अगस्त को की। 15 ता. की सुबह से ही देखने में आया कि जापानी सभी नौसेना के तथा गैर सैनिक कागजात जला रहे थे तथा समुद्र में दुश्मनों के जहाजों को आने से रोकने के लिए बिछाई सुरंगों का विस्फोट कर रहे थे। कई जापानी सिपाहियों ने, जो युद्धबन्दी नहीं बनना चाहते थे, आत्महत्या कर डाली।

दुबारा अधिपत्य सैनिक दल 116 ब्रिगेड ब्रिगेडियर जे. सोलोमन के कमान में पानी

के जहाज एस. एस. दिलावर द्वारा अक्तूबर 1945 को पहुंचा । 9 अक्तूबर को 10 बजे प्रात: कुछ पुरानी कारें जमा हुईं उसमें जापानी नौसेना व सेना के कमान्डर थे, जिन्हें भारतीय सेना सुरक्षा दे रही थी उन्हें एक बड़े मेज के पास ले जाया गया । तब ब्रिगेडियर सोलोमन पहुंचा और सलामी गार्ड की सलामी लेकर जापानियों की ओर मुंह कर बैठ गया तथा उसने समर्पण दस्तावेज को पढ़कर सुनाया । फिर दस्तावेज दस्तखत के लिए दिये गये । पहले उस पर वाइस एडमिरल ताइजे हारा ने दस्तखत किये, मुहर लगाई और उसके बाद ले. कौम ताजावा, मेजर जनरल तामीनेमी एवं स्टाफ ऑफिसर शीमाजाकी ने दस्तखत किए । मित्र राष्ट्रों की तरफ से ब्रिगेडियर सोलोमन, केप्टन जे. एच. ब्लेयर एवं एन. के. पेटरसन (जो होने वाले नए चीफ कमिश्नर थे) ने दस्तखत किए और तुरन्त बाद ही जापानियों ने अपनी तलवारें दे दीं और बारी-बारी से सलामी देकर कारों की तरफ बढ़ गये । इस प्रकार द्वीपों में दो बार बिना एक गोली चलाए गए सत्ता का हस्तांतरण हो गया ।

नयी सरकार का प्रथम निर्णय था, कैदी बस्ती का समापन । करीब 4200 व्यक्ति इस निर्णय के अन्तर्गत स्वदेश लौटे । इस प्रकार इन द्वीपों की आबादी और कम हो गई ।

जापानियों के हथियार डालने के पश्चात् एक बचाव नाव हैवलोक में बचे हुए लोगों को लाने के लिए भेजी । मरणासन्न अवस्था में 6 व्यक्तियों को पोर्ट ब्लेयर लाया गया । जापानियों के अत्याचारों के लिए उनके कारनामे तथा उनका साथ देने वाले अन्य भारतीयों के खिलाफ जांच का काम शुरू हुआ । 108 जापानियों को युद्ध के अपराधियों के रूप में हिरासत में लिया गया तथा उन्हें रौस द्वीप में रखा गया तथा बाद में चांगी जेल सिंगापुर में मुकदमे की सुनवाई के इंतजार में डाल दिया गया ।

वे जापानी, जिन्होंने अपने अधिपत्य के दिनों में बर्बरतापूर्ण अमानुषिक कार्य किए, उन पर सिंगापुर में मुकदमा चलाया गया । रामकृष्ण इन मुकदमों में गवाह के रूप में सिंगापुर में उपस्थित था । वह इसका आंखों देखा हाल इन शब्दों में लिखता है "एडमिरल, जिसने सामूहिक हत्याएं कराईं उसे गोली से उड़ा दिया गया । जिन व्यक्तियों से उसे कोई अंदेशा नहीं था कि वे गवाही देंगे, वे लोग थे जिन्हें वह मरा सोचता था क्योंकि उन्हें समुद्र में मरने के लिए डाल दिया गया था लेकिन वे उसके सामने आकर खड़े थे । जापानी सप्लाई आफिसर तथा "थोकोमोहन" का मुखिया जिन्होंने उन्हें फुसलाया व समुद्र में फेंका उन्हें फांसी की सजा दी गई । सिविल गवर्नर ज्योची रेने सुकई को 25 वर्ष की सख्त कैद की सजा दी गई । पुलिस का मुखिया जिसने झूठे जासूसी मुकदमे बनाए, जिसने अत्याचार करवाए व लोगों को मरवाया उसको फांसी की सजा दी गई । शेष अपराधियों को सख्त कैद की सजा, सात वर्ष से लेकर 25 वर्ष तक की दी गई ।" जापानियों के भारतीय सहयोगी जिन्होंने अपने कर्तव्य पालन से अधिक जोश दिखाकर अत्याचार किए उन्हें अंडमान की फौजदारी अदालतों ने सजाएं दीं ।

यद्यपि जापानी अधिपत्य के दिनों उनके सैनिक शासन का व्यवहार अत्यंत शर्मनाक व आततायी था परन्तु इससे यह नहीं कहा जा सकता है कि जापान सरकार, जापानी लोग या जापान के कानून ने इस अमानुषिक कारनामों को स्वीकृति प्रदान की। यह भी सत्य है कि जापान सरकार ने इन द्वीपों में जापानी अधिकारियों के अत्याचारों व ज्यादतियों की जांच के लिए जजों की नियुक्ति कर उन्हें भेजा। यह दूसरी बात है कि जापानी अधिकारियों के डर के मारे लोग सच बताने से मुकर गये हों। जापानी सेना के अधिकारियों को दूसरे मुल्कों में प्रशासन का न तो अनुभव था न ज्ञान ही।

जापानियों की सारी समस्या तथा स्थानीय लोगों की समस्या का पूर्ण हल निकल आता यदि नेताजी सुभाषचंद्र बोस की सलाह ली जाती या यह क्षेत्र आजाद हिन्द सरकार को सौंप दिया गया होता किंतु जापान का लालची सैनिक प्रशासन संकीर्ण दृष्टिकोण से ग्रसित था क्योंकि बिना एक गोली चलाए ये द्वीप इनकी झोली में आ टपके थे। मित्र राष्ट्रों की सेना के सर्वोच्च सेनानायक के रूप में माउंटबेटन पोर्ट ब्लेयर अंडमान में 28 नवम्बर 1945 को आया किंतु उसने वहां केवल एक ही रात बिताई। यह संभव है कि इन द्वीपों के भविष्य के बारे में उसने वहां अधिकारियों से बात की हो और बाद में वायसराय बावेल से भी बात की हो।

लार्ड बावेल व लेडी बावेल भी माउंटबेटन के आने के तुरंत बाद अंडमान आए। यह संभव है कि यहां की नैसर्गिक सुंदरता से प्रभावित होकर उसने उसको यहां आने के लिए प्रोत्साहित किया हो। यह भी संभव है कि बावेल ने माउंटबेटन से कहा हो कि तुम स्वयं इन द्वीपों के भविष्य के बारे में अपना स्वतंत्र मूल्यांकन करो।

सैनिक प्रशासन का समय आश्चर्यजनक रूप से घटा दिया गया और पैटरशन से 7 फरवरी 1946 को चीफ कमिश्नर का कार्यभार इनामुल मजीद आई. सी. एस. को दे दिया गया। वह पहला भारतीय अधिकारी था जो इस पद पर नियुक्त किया गया। अंडमान पर अपनी पुस्तक में इकबाल सिंह ने उसकी भूमिका विवादास्पद बताई है। संदेह किया जाता है कि उनकी नियुक्ति के पीछे अंग्रेजों की कोई गहरी चाल अवश्य थी।

अंग्रेज अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूहों को क्यों नहीं छोड़ना चाहते थे, उसका मुख्य कारण था उनका सामरिक महत्व की दृष्टि से महत्वपूर्ण होना, जैसा कि इंडिया आफिस से 23 अक्तूबर 1946 को सर मोनटीथ द्वारा मेजर जनरल होल्स को लिखे गये पत्र से स्पष्ट है। पत्र में कहा गया - "अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूहों का मामला बहुत कठिनाइयां उत्पन्न कर रहा है क्योंकि एक लम्बी अवधि से इन द्वीपों को भारत का भाग माना गया है। ऐसा नहीं लगता कि भारत इन द्वीपों की प्रभुसत्ता को त्यागने को सहमत होगा। मुझे प्रसन्नता होगी यदि मुझे बता दिया जाए कि क्या चीफ्स आफ स्टाफ समझते हैं कि मुख्य आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकती है, यदि किसी समझौते के अनुसार हमें दीर्घकाल के लिए इन द्वीपों में सैनिक अड्डे बनाने का पट्टा मिल जाए।"

अंग्रेज इन द्वीपों को पाकिस्तान को देने की संभावनाओं पर भी विचार कर रहे थे, जैसे कि सेक्रेटरी आफ स्टेट के 26 मई 1947 को कैबिनेट को भेजी गई टिप्पणी से स्पष्ट है। टिप्पणी में कहा गया - "क्या अधिनियम में इन्हें हिन्दुस्तान में सम्मिलित करें या इन्हें बंगाल के साथ जाना है। अंडमान द्वीप समूह चीफ कमिश्नर का अधिकृत क्षेत्र है। अतः वह केन्द्र सरकार द्वारा शासित है। अंडमान की आबादी भारतीयों की है, जिसमें मुख्य रूप से भूतपूर्व कैदी तथा भारत के सभी स्थानों से उनके वंशज सम्मिलित हैं। (थोड़े से लोग बर्मा के भी हैं) अंडमान द्वीप के आर्थिक संबंध सदैव कलकत्ता के माध्यम से बंगाल के साथ रहे हैं। यदि कलकत्ता हिन्दुस्तान में जाता है तो यह बात साफ हो जाती है कि अंडमान भी हिन्दुस्तान में जाएगा। अगर बंगाल को पृथक करना है तो इस बात का निर्णय करना होगा कि अंडमान बंगाल में जाएगा या हिन्दुस्तान में।"

"चीफ आफ स्टाफ ने प्रश्न उठाया है कि भारत को सत्ता के हस्तांतरण के समय क्या ऐसा नहीं किया जा सकता है कि सामरिक महत्व तथा नौसेना एवं वायुसेना के महत्वपूर्ण अड्डों के कारण अंडमान अंग्रेजी सरकार के अधीन आ जाए। यह सच है कि हम अंतरिम व्यवस्था के रूप में "डोमिनियम स्टेटस" के आधार पर सत्ता के हस्तांतरण की बात पर विचार कर रहे हैं। फिर भी यदि पार्लियामेंट के एक्ट के अनुसार अंडमान भारत को हस्तांतरित होता है और बाद में भारत "कॉमनवेल्थ" से बाहर निकल जाता है तो ऐसी स्थिति में उन्हें केवल बातचीत द्वारा ही वापस लिया जा सकता है क्योंकि कानून के नौ अंक तो भारत के कब्जे में पहले ही होंगे।"

वायसराय लार्ड माउंटबेटन को भली-भांति मालूम था कि भारतवासियों का इन द्वीपों के साथ एक भावनात्मक संबंध है और वे उन्हें छोड़ने के लिए कदापि सहमत नहीं होंगे। यह विषय विचारार्थ ब्रिटिश कैबिनेट के समक्ष आया। बैठक की कार्रवाई का विवरण अंडमान व निकोबार द्वीप समूह के संबंध में इस प्रकार रहा - "भारत संबंधी सेक्रेटरी ऑफ स्टेट ने कहा कि वायसराय का मत है कि हमारे बातचीत के इस नाजुक दौर में इस विवादास्पद विषय को उठाने का प्रश्न ही नहीं उठता। यह ऐसा विषय है जिस पर भारतीयों की गहरी अनुभूति है अगर हिज़ मैजेस्टी की सरकार ने इन द्वीपों को भारत से अलग करने की चेष्टा की तो संभवतः भारत के हर कोने में हिंसक विद्रोह भड़क जायेगा।" अपने व्यक्तिगत पत्र में वायसराय ने इस बात को स्पष्ट किया है कि इस प्रकार का प्रस्ताव स्वयं उनकी स्थिति पर गंभीर रूप से आघात पहुंचाएगा।

"रक्षा मंत्री ने कहा कि वायसराय के भारत के लिए प्रस्थान करने के पूर्व चीफ्स आफ स्टाफ ने बातचीत में इस बात के महत्व को जोर देकर बता दिया था कि कॉमनवेल्थ के वायु व समुद्री संचार की जंजीर में इन द्वीपों की कितनी आवश्यक कड़ी है। यह अत्यंत आवश्यक है कि हमें इन द्वीपों का सामरिक महत्व के लिए प्रयोग करने से वंचित न किया जाए .....।"

"कमेटी का विचार था कि वायसराय की सलाह के अनुसार अंडमान व निकोबार द्वीप समूहों को भारत से पृथक करने के सुझाव को और आगे बढ़ाना संभव नहीं होगा ।"

इस पर भी अंग्रेज सरकार इन द्वीपों को अपने पास रखने का प्रयास करती रही और हस्तांतरण संबंधी विधेयक के प्रारूप में इस बात की व्यवस्था की गई कि ये द्वीप भारत से पृथक किए जाएं जिससे स्वयं माउंटबेटन धर्म संकट में पड़ गया जैसा कि उसके कर्मचारीगणों की बैठक की कार्यवाही से स्पष्ट है । इसमें कहा गया - "हिज़ एक्सलेंसी ने कहा कि ड्राफ्ट बिल के इस प्रावधान पर उन्हें अचम्भा हो रहा है कि 15 अगस्त के बाद अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह भारत के अंग नहीं रहेंगे लेकिन इस संबंध में हिज़ मैजेस्टी सरकार के इरादे व इच्छा को छिपाना अब उनके वश की बात नहीं है । उनके विचार से यह अच्छा होगा यदि इस अंश को नेताओं के बीच प्रसारित होने दिया जाये ताकि बात खुलकर सामने आ जाए और तब उनके साथ बातचीत द्वारा समझौता किया जा सके । जो भी व्यक्ति इन दस्तावेजों को भारतीय नेताओं को दिखाने ले जाए उसको चाहिए कि इस अंश की ओर उनका ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट किया जाए । उन्हें यह बताना चाहिए कि 1935 के एक्ट के अनुसार अदन भारत से अलग हो गया था, यह भी उसी प्रकार की व्यवस्था है जिसे हिज़ मैजेस्टी सरकार अब अंडमान व निकोबार द्वीप समूह पर लागू करना चाहती है और यदि नेता लोग इस तर्क के औचित्य को चुनौती देना चाहें तो इसके बदले में हिज़ मैजेस्टी सरकार को संतुष्ट करने के लिए कुछ अन्य उपाय ढूंढने होंगे । हिज़ एक्सलेंसी ने कहा कि जहां तक उनकी जानकारी है हिज़ मैजेस्टी की सरकार वास्तव में केवल इतना चाहती है कि वे वहां के बंदरगाह तथा हवाई अड्डे का प्रयोग करते रहें और ये सब समझौते का विषय है । इस बीच इसके स्थान पर एक अन्य प्रारूप बना लिया जाए । एक बात और, क्या ऐसा संभव हो सकता है कि इन द्वीप समूहों को दो हिस्सों में विभाजित कर दिया जाए । अंडमान द्वीप समूह भारत को दे दें तथा व नानकोरी व निकोबार को अपने पास रख लें ।"

- प्रारम्भ में माउंटबेटन अंडमान के विषय को नेहरू से छेड़ने में सकुचाता रहा । जब उसने यह प्रश्न उठाया तो नेहरू ने साफ इंकार कर दिया मजबूर होकर अंग्रेजों को द्वीपों को छोड़ना पड़ा । तत्कालीन चीफ कमिश्नर को संदेहपूर्ण गतिविधियों के कारण तार द्वारा स्थानांतरण कर दिया गया । लेकिन नीति निपुण अंग्रेजों ने भारतीय नेताओं को इस बात के लिए सहमत कर लिया कि निकोबार द्वीप में स्थित हवाई अड्डे का प्रयोग आगामी कुछ वर्षों तक आर. ए. एफ. करती रहेगी, जिसे वे 1956 तक प्रयोग करते रहे ।

स्वतंत्रता के पश्चात् अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह के युद्ध से पीड़ित घावों पर मरहमपट्टी लगी । विकास के एक नये युग का सूत्रपात हुआ और द्रुतगति से ये द्वीप राष्ट्रीय मुख्य धारा से जुड़ते गये ।

प्रशासनिक व्यवस्था

अंडमान व निकोबार द्वीप समूह का प्रशासन कैदी बस्ती के समय से निरन्तर सीधे भारत सरकार के अधीन रहा जो परम्परा अभी भी चल रही है । लगभग एक सौ वर्ष से भी अधिक अवधि के बाद मुख्य आयुक्त के पद का उच्चीकरण कर उपराज्यपाल बनाया गया और पहली बार स्थानीय लोगों को प्रदेश परिषद् की स्थापना द्वारा प्रशासन में भागीदार बनाया गया । प्रशासन का मुख्य उत्तरदायित्व उपराज्यपाल के कन्धों पर है, जिसमें उन्हें पांच पार्षद् व प्रदेश परिषद् मदद करते हैं । प्रशासनिक दृष्टि से इन द्वीपों को दो जिलों, चार परगनों तथा विकास खंडों में विभाजित किया गया है, जिसमें 30 थाने हैं, इसमें पुलिस पोस्ट भी सम्मिलित है । इस क्षेत्र से एक सांसद भी चुना जाता है । प्रशासन का विभाजन विभिन्न विभागों में किया गया है, जैसे कि कृषि, पशु-पालन, मत्स्यपालन, खाद्य व रसद, उद्योग, पुनर्वास, परिवहन, जहाजरानी, वन, विद्युत, शिक्षा, जनस्वास्थ्य, सार्वजनिक निर्माण आदि जिनका संचालन विभागाध्यक्षों तथा सचिवों द्वारा किया जाता है तथा जिसकी देख-रेख मुख्य सचिव द्वारा की जाती है । प्रत्येक पार्षद् को भी कुछ विभाग दिए गए हैं।

केन्द्रीय सरकार के भी अनेक कार्यालय इन द्वीपों में खोले गये हैं, जिसमें रक्षा, आकाशवाणी, नागरिक उड्डयन, सैनिक इंजीनियरी सेवा, मानव विज्ञान, केन्द्रीय कृषि अनुसंधान संस्थान, डाक-तार, अन्तर्राज्यीय बेतार, प्रकाश गृह आदि हैं । इनके अतिरिक्त जहाजरानी तथा भारतीय विमान सेवा के दफ्तर भी यहां पर काम कर रहे हैं ।

निकट भविष्य में हांगकांग के चीन को हस्तान्तरण से हांगकांग में रहने वाले भारतीय तथा भारतीय मूल के व्यापारियों में एक अजीब सी हलचल मची हुई है । इन लोगों की ओर से तथा अन्य भारतीय, जो भारत में तथा विदेशों में रहते हैं, उनकी ओर से भी इस बात की जोरदार मांग की जा रही है कि अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह में एक कर मुक्त बन्दरगाह (फ्री पोर्ट) बनाया जाये । क्योंकि ये द्वीप अन्तर्राष्ट्रीय समुद्री मार्ग के समीप हैं । हाल के वर्षों में सिंगापुर के बन्दरगाह में बहुत भीड़-भाड़ होने लगी है । मरम्मत के लिए गए जहाजों को काफी समय तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है । कभी-कभी तो भीड़ अधिक होने के कारण उन्हें श्रीलंका जाना पड़ता है । यहां कर मुक्त बन्दरगाह बनाने से इस पिछडे

क्षेत्र में सुख, समृद्धि व प्रगति के एक नये युग का सूत्रपात होगा, जो देश की बिगड़ती अर्थव्यवस्था में भी एक नव-जीवन प्रदान करेगा।

ये द्वीप बहुत बड़े सामरिक महत्व के स्थान हैं। वायु शक्ति के प्रादुर्भाव तथा अणुयुग के आने से प्रायः लोग सोचते थे कि अब समुद्री शक्ति का विशेष स्थान नहीं रहा। बंगला देश तथा फाकलैंड के युद्ध ने इस बात को प्रमाणित कर दिया कि समुद्री शक्ति आज भी रणनीति का एक अभिन्न अंग है। इन द्वीपों में समुद्री सम्पदाओं के असीम भंडार पड़े हुए हैं। जिस पर पड़ोसी देशों की ललचायी दृष्टि लगी रहती है। विशेष रूप से समुद्री खाद्य पदार्थ एवं शैल फिश पकड़ने के लिए पड़ोसी देशों से चोरी छिपे अनेक गिरोह निरन्तर आते रहते हैं। सच बात तो यह है कि अपनी विशेष स्थिति एवं अतुल सम्पदा के कारण ये द्वीप चोरों तथा तस्करों के क्रीड़ा स्थल बन गये हैं। यहां पाये जाने वाले दुर्लभ पदार्थों में एक अम्बेरी भी है। कहा जाता है, इससे विशेष प्रकार की दवाई बनाई जाती है जो पुरूषत्व सम्बन्धी हारमोन बनाने में प्रयुक्त होती है। यह नानकोरी द्वीप तथा अन्य समीप के द्वीपों के समुद्रतट पर पाया जाता है। अम्बेरी एक विचित्र प्रक्रिया के फलस्वरूप प्राप्त की जाती है। समुद्र की दस डिग्री पर भयंकर तेज व अशान्त जलान्तराल (चैनल) विश्व-विख्यात है, न केवल जहाज वरन् समुद्री जीव-जन्तुओं का भी इसके चंगुल से निकलना कठिन हो जाता है। विशालकाय ह्वेल मछली भी कभी-कभी इसके चक्कर में आ पड़ती है, जिसे समुद्र की तीव्र जल धाराएं बिल्कुल झकझोर देती हैं तथा इसे समीप के नानकोरी द्वीप के शान्त समुद्र में शरण लेने को बाध्य कर देती हैं। इस प्रकार के मंथन से ह्वेल मछली को उल्टियां होने लगती हैं, जो पीले रंग के अम्बेरी के रूप में समीप के समुद्र तट पर जमा हो जाती है, जिसे लोग एकत्रित कर लेते हैं। यह दुर्लभ वस्तु अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में बहुत महंगी बिकती है। यहां पर बहुत से लोग तो केवल इसी को खरीदने आते हैं।

कुछ वर्ष पूर्व थाइलैन्ड के कुछ मछुवा परिवारों ने स्थानीय तस्करी तथा चोरों के इशारे पर नानकोरी से कुछ दूरी पर स्थित तिलंगचांग द्वीप पर लगभग कब्जा ही कर लिया था। वे बिना प्रशासन की जानकारी के एक लम्बे अर्से तक वहीं रहे तथा कुछ गर्भवती महिलाओं के बच्चे भी वहां पैदा हो गए। अन्त में जब प्रशासन को पता चला तो एक अभियान दल उनको पकड़ने के लिए भेजा गया। उनके धनाढ्य तस्कर मालिक प्रशासन की नावों को देखकर अपनी तेज व शक्तिशाली नावों में भाग गये और पीछे छोड़ गए गरीब असहाय मछुवा परिवारों को, जिन्हें प्रशासन द्वारा पकड़कर पोर्ट ब्लेयर लाया गया जहां उन पर मुकदमा चलाकर सजा दी गई। यह मामला देश की संसद में भी उठा, जिस पर काफी गरमा-गरम बहस हुई और मामला थाई सरकार के ध्यान में भी लाया गया। बाद में थाई राजदूत ने स्वयं पोर्ट ब्लेयर आकर उनको स्वदेश भिजवाने की व्यवस्था की।

समुद्री बड़े तूफानों में अनेक विदेशी नौकाएं अक्सर नानकोरी में आ जाती हैं। कुछ तो सचमुच तूफान से बचने के लिए आते हैं, और कुछ केवल बहाना बना कर आते हैं,

ताकि वे अवांछनीय कार्य कर सकें। स्थानीय अधिकारियों के लिए इस बात का पता लगाना बहुत मुश्किल हो जाता है कि उनका असली इरादा क्या है। उन्हें पता भी लग जाये तब भी उन्हें इस बात की अनुमति नहीं है कि बिना भारत सरकार के गृह विभाग की पूर्व स्वीकृति के इन मामलों को निपटा सकें। इस प्रकार के सभी मामले गृह मंत्रालय को भेजने पड़ते हैं, जिसमें काफी विलम्ब हो जाता है और कभी तो वे बन्दूकों से स्थानीय पुलिस को डराकर भाग जाते हैं और आवश्यकता पड़ने पर गोली भी चला देते हैं।

इन द्वीपों का सामरिक महत्व होने के कारण भी विदेशी लोग जासूसी करने अक्सर आते रहते हैं। एक आस्ट्रेलियन नागरिक मैकडोनाल्ड का एक अजीब प्रकार से इन द्वीपों में आना हम सबके लिए बहुत दिनों तक एक पहेली बना रहा। इस घटना का सम्बन्ध उस बड़े तूफान से है, जिसने 1978 में आंध्रप्रदेश में बहुत बड़ी विनाश लीला दिखाई और हजारों जानें गईं। मैकडोनाल्ड के अनुसार उसका लड़का अन्य तीन लड़कियों के साथ कोलम्बो से एक फाइबर ग्लास की नाव में बैंकाक के लिए चला और उस भीषण तूफान में फंसने के कारण अपने गन्तव्य स्थान पर नहीं पहुंच सका। वह समुद्री तूफान इतना भीषण था कि उसने बड़े-बड़े जहाजों तक को उठाकर जमीन पर पटक दिया। फिर इस छोटी-सी नाव की क्या हस्ती थी वह तो एक तिनका मात्र थी, उसके तो क्षण में टुकड़े-टुकड़े हो गये होंगे। ऐसी परिस्थिति में स्वाभाविक रूप में कोई भी व्यक्ति इसे देवी प्रकोप कह कर अपने को भाग्य पर छोड़ देगा, किन्तु इस मामले में घटनाओं ने दूसरा ही रूप लिया।

मैकडोनाल्ड ने मुझे पोर्ट ब्लेयर में बताया कि उसने तूफान में खोये अपने लड़के को ढूंढने के लिए डियोगो गारसिया में स्थित अमरीका के सैनिक अड्डे से कहा, जिन्होंने वायु सेना के हवाई जहाजों से उस सारे क्षेत्र का सर्वेक्षण कराया किन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली। मैकडोनाल्ड के अनुसार उसने भारत के समुद्रतट पर स्वयं उसे ढूंढने के लिए प्रवेशानुज्ञा मांगी, जिसे भारत सरकार ने अस्वीकार कर दिया।

इसी बीच तत्कालीन 'प्रधान मंत्री मोरारजी देसाई का आस्ट्रेलिया जाना हो गया। स्थानीय समाचार पत्र में इस आशय का एक समाचार छपा कि एक दुखी बाप तूफान में फंसे अपने लड़के को ढूंढने के लिए भारत जाना चाहता है किन्तु भारत सरकार ने इस मांग को ठुकरा दिया है। अखबार में प्रधान मंत्री से अपील की गई थी कि वह इस मामले में हस्तक्षेप करें। मैकडोनाल्ड के अनुसार प्रधान मंत्री ने उसे बुलाकर न केवल प्रवेशानुज्ञा (वीजा) देने का वचन दिया, वरन् अन्य सहायता देने का भी आश्वासन दिया। मैकडोनाल्ड एक प्रकार से भारतीय मेहमान की तरह भारत आया तथा उसकी यात्रा के विषय पर भारत के समाचार पत्रों ने भी काफी लिखा। मैकडोनाल्ड पोर्ट ब्लेयर पहुँचा तथा उसे विभिन्न द्वीपों के भ्रमण की पूरी सुविधा दी गई। वह उन द्वीपों में भी गया जहां कोई आबादी नहीं थी वहां जाकर वह जोर-जोर से अपने लड़के का नाम लेकर पुकारता था। यह दृश्य एक अजीब हास्य नाटक सा लगता था। मैकडोनाल्ड स्वयं पुत्र वियोग में व्याकुल पिता भी

नहीं लगता था । उसके पास द्वीपों के तथा समुद्र के आवश्यक नक्शे आदि थे जिनमें सभी प्रकार की पूर्ण जानकारी थी । हवा की दिशाएं तथा समुद्री तूफान की गति तथा दिशा का पूर्ण विवरण था । जैसे-जैसे दिन व्यतीत होते गये वह अपने पुत्र की बातें न कर कुछ और ही बातें करने लगा । यह केवल भावनाओं पर नियंत्रण की बात नहीं थी । वास्तव में उसका व्यावहार संदेहात्मक था । कुछ लोगों को शक था कि शायद किसी विदेशी ताकत ने उसे जमीन पर चीजों की पहचान कराने की दृष्टि से इस्तेमाल किया हो, जो भी बात रही हो परन्तु सारा मामला रहस्यपूर्ण रहा ।

अंडमान प्रशासन में इन्सपेक्टर जनरल पुलिस नियुक्त किया गया है जो पुलिस के काम की देख-रेख करता है, किन्तु वास्तविक रूप में वह वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक के पद का होता है, जिसके कारण वह अधिक अधिकारपूर्वक कार्य करने में कठिनाइयों का अनुभव करता है । पुलिस विभाग के पास तेज नाव आदि अनेक साधनों का अभाव है, जिसके कारण वे समुद्र में चोरों, तस्करों तथा दूसरे अवांछनीय तत्वों की रोकथाम करने में अपने को असमर्थ पाते हैं । भारतीय जल सीमा में चोरी-छिपे मछली का शिकार तथा तस्करी करने वाले विदेशियों तथा अन्य अवांछित तत्वों से निपटने के लिए 1978 में भारत सरकार ने संसद द्वारा पारित अधिनियम के अंतर्गत तटरक्षक दल का गठन किया । शांति के समय अन्य कार्यों के अतिरिक्त समुद्र पर जान व माल की रक्षा करना, तलाशी लेना, बचाव कार्य, स्थानीय मछुआरों का अनधिकृत रूप से प्रवेश, विदेशी मछुआरों से बचाना तथा आपातकाल में तूफान आदि में फंसे लोगों को राहत पहुंचाना भी उनकी गतिविधियों में सम्मिलित है । दस वर्षों के अल्प समय में तटरक्षक दल सभी भारतीयों का हृदय जीतने में सफल रहा । भारतीय अधिपत्य में इस दल ने इन द्वीपों के चारों ओर समुद्र में विदेशियों की अनधिकृत नावों को पकड़ने में सराहनीय कार्य किया है तथा समुद्री तूफान में फंसे मछुआरों की भी जान बचाई है ।

यह आश्चर्य की बात है कि आजकल चोरी-छिपे मछली का शिकार करने वाली इन विदेशी नौकाओं ने अपने कार्यकलापों को एक नाटकीय मोड़ दे दिया है । पहले की अपेक्षा वे अब अधिक सावधान तथा सुसंगठित हैं । जैसे ही वे तटरक्षक दल की नौका को देख लेते हैं वे तुरंत या तो दूर तक फैली संकरी व उथली जलधाराओं में शरण ले लेते हैं जहां पर कि तटरक्षक दल की बड़ी नावें नहीं जा सकतीं या विभिन्न दिशाओं में भाग जाते हैं या फिर समीप के घने जंगलों में लोप हो जाते हैं तथा अपनी नाव को यों ही छोड़ देते हैं । साधारणतया नावों को इस प्रकार छोड़ने के पूर्व वे या तो इंजन को तोड़-फोड़ कर बेकार कर देते हैं या नाव में छेद कर देते हैं ताकि वह डूब जाये तथा पकड़ने वाले चक्कर में फंस जायें ।

सिवाय कुछ मजदूर यूनियनों द्वारा हड़ताल तथा प्रदर्शन के, जो अक्सर होते रहते हैं, शेष कानून व शान्ति व्यवस्था प्राय: शान्त व नियंत्रण में रहती है । सरकारी कर्मचारियों के संगठन भी अपनी मांगों को उठाने में बहुत क्रियाशील रहते हैं और वे भी अक्सर कुछ

न कुछ आन्दोलन करते रहते हैं । अंडमान व निकोबार प्रशासन के अधीन 28,882 लोग काम करते हैं, जो पूरी आबादी का लगभग 16 प्रतिशत है । जितने भी आन्दोलन आदि होते हैं, उन सभी में उनका सक्रिय योगदान रहता है तथा वहां के राजनीतिक नेतृत्व के लिए वे मित्र, सलाहकार व मार्ग-दर्शक की भूमिका निभाते हैं । आमतौर पर लोग शान्त हैं किन्तु वे भावुक हैं तथा छोटी-छोटी बातों से भी विचलित हो उठते हैं ।

निकोबार द्वीप समूह में, सिवाय ग्रेट निकोबार के, जहां पर भूतपूर्व सैनिक बसाये गए हैं, प्रशासन अभी पुराने ढर्रे पर है । ग्रेट निकोबार में भूतपूर्व सैनिकों ने अथक परिश्रम व साहस से बड़ी कठिनाइयों तथा खराब जलवायु में जंगलों को साफ कर बंजर धरती को आबाद करने में अभूतपूर्व कार्य किया । इसमें पंजाब से आए भूतपूर्व सैनिकों का विशेष योग रहा । उनके अथक परिश्रम के सुखद परिणाम आने लगे हैं और यह क्षेत्र अब पूर्ण प्रगति के पथ पर अग्रसर है । उन्हें भी कभी-कभी अपनी न्यायोचित मांगों को मनवाने के लिए संघर्ष का मार्ग अपनाना पड़ता है ।

यहां पर यह बताना आवश्यक है कि अंग्रेजों ने निकोबार के लोगों की जीवन प्रणाली में हस्तक्षेप करने के अनेक प्रयास किए किन्तु वे सब विफल रहे । वे किसी भी प्रकार राजस्व के स्रोतों को बढ़ाने में असमर्थ रहे । उनकी आय का एक मात्र स्रोत उस भूमि पर स्थित नारियल के पेड़ों से नारियल बेचना था, जो कुछ समय पूर्व उन्होंने निकोबार के निवासियों से खरीदे थे । निकोबार के लोग आज भी वहां की समस्त भूमि के मालिक हैं क्योंकि यहां पर जमीन की बहुत कमी है । अंग्रेज, शासक के रूप में वहां पर अपना सिक्का नहीं जमा सके यद्यपि इस दिशा में उन्होंने अनेक प्रयास किए । यहां तक कि उन्होंने निकोबारियों के धर्म गुरुओं को घूस देकर अपनी तरफ करना चाहा । वहां के कैप्टनों को उपहार देना भी एक प्रकार से उन्हें अपनी तरफ करने का बहाना ही था । जब कभी वे निकोबार के किसी भाग के कैप्टन के व्यवहार से अप्रसन्न हो जाते तो सजा के रूप में वे वहां पर उपहार नहीं बांटते थे ।

उपहार बांटने की प्रथा अब भी प्रचलित है । जब भी उपराज्यपाल या अन्य विशिष्ट व्यक्ति इस क्षेत्र में आते हैं, वे उपहार बांटते हैं और कैप्टन भी भेंट स्वरूप कुछ अवश्य देते हैं । चूंकि अब प्रशासन में निकोबारी लोग पार्षद् बन कर स्वयं भाग लेने लगे हैं तो आशा है इस प्रथा का भी अन्त हो जायेगा ।

कार निकोबार तथा अन्य समीप के द्वीप जनजाति सुरक्षित क्षेत्र घोषित किए गए हैं तथा यहां पर आने के लिए अनुमति पत्र लेना पड़ता है । निकोबारियों का वहां की भूमि पर एकाधिकार है, जिसकी व्यवस्था चीफ कैप्टन द्वारा की जाती है । यदि सरकार को भी भूमि की आवश्यकता हो तो उसे भी खरीदने के लिए चीफ कैप्टन से कहना पड़ता है । देश के स्वतन्त्र होने के तुरन्त बाद भारतीय वायु सेना को हवाई अड्डे के विस्तार के लिए भूमि की आवश्यकता थी, जिसके लिए चीफ कैप्टन से बात की गई किन्तु उसने अच्छी कीमत

देने के आश्वासन पर भी उस भूमि को देने से साफ इन्कार कर दिया। कुछ ही दिन बाद चीफ कैप्टन गणतन्त्र दिवस के उपलक्ष्य में निकोबारी लोगों के दल के साथ दिल्ली पहुँचा। यह दल प्रधानमंत्री के निवास स्थान पर जवाहरलाल नेहरू से भी मिला। जब चीफ कैप्टन का परिचय नेहरू जी से कराया जा रहा था तो जन-सम्पर्क अधिकारी ने धीरे से नेहरू जी को बता दिया कि चीफ कैप्टन पूरी कीमत देने पर भी भूमि वायु सेना को नहीं दे रहा है। नेहरू जी ने उससे कहा कि आप वायु सेना को जमीन दे दें। उसने अपनी सहमति प्रकट कर दी। जब प्रधान मंत्री ने चीफ कैप्टन से पूछा कि वे कीमत क्या लेंगे तो उसने मुस्कराकर उनके कोट की ओर इशारा कर कहा कि उसे यह कोट चाहिए। नेहरू जी ने सहर्ष वह कोट दे दिया। चीफ कैप्टन ने इस उपहार को यादगार के रूप में रखा, जिसे बड़े गर्व से वह आगुन्तकों को दिखाता था। लेकिन अब चूहों ने उसे बुरी तरह से कुतर दिया है।

उपरोक्त घटना इस जनजाति की सख्त प्रकृति व मस्ती का परिचायक है जो कि कानून की पेचीदगियों को बिल्कुल पसन्द नहीं करते और जनजाति की अपनी सरल, सीधी व तुरन्त न्याय व्यवस्था में विश्वास करते हैं। उन्हें अपनी समस्याओं के समाधान के लिए कभी भी प्रशासन के पास जाने की आवश्यकता नहीं पड़ी। निकट भविष्य में इस क्षेत्र में आर्थिक प्रगति के बढ़ने तथा निकोबारियों का निजी व्यापार अपनाने के फलस्वरूप सम्भवतः स्थिति में परिवर्तन हो जाये, किन्तु तब तक उन्हें हम कुछ दे नहीं सकते। यद्यपि उनसे सीखने के लिए बहुत कुछ है। ऐसी परिस्थिति में प्रशासन का इस क्षेत्र में केवल मात्र आवरण ही है।

जहां तक सम्पूर्ण अंडमान व निकोबार द्वीप समूह की बात है वहां के विभिन्न प्रकार के समुदायों की आबादी, विस्तृत क्षेत्रफल, समुद्री फैलाव, प्रत्येक द्वीप की अलग विशेषता तथा सामरिक महत्व, इन द्वीपों को प्रशासन की दृष्टि से बहुत कठिन व चुनौती भरा क्षेत्र बना देता है। वहां का राजनीतिक ढांचा पृथक राज्य की ओर बढ़ना इंगित करता है किन्तु यहां पर ऐसी सरकार का गठन करना, जो उपरोक्त विभिन्न स्वरूपों का उचित प्रतिनिधित्व कर सके, एक बहुत बड़ी समस्या होगी।

द्वीपों के विकास कार्य

अंडमान व निकोबार द्वीप समूह पर प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया। पहली बार द्वितीय पंचवर्षीय योजना में 6.01 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया, जिसे बढ़ाकर तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत 9.79 करोड़ कर दिया गया विकास कार्यों के लिए भारत सरकार द्वारा धन देने की कोई समस्या नहीं थी। मुख्य समस्या थी उस धन को उपयोगी योजनाओं में खर्च करने की। चूंकि यह क्षेत्र काफी पिछड़ा हुआ था अत: वहां पर इस धन के उपयोग के लिए किसी प्रकार का ढांचा नहीं था। प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने इस पिछड़े क्षेत्र के विकास के प्रति विशेष ध्यान दिया ।

1. कृषि

पिछले कुछ वर्षों में इन द्वीप समूहों ने कृषि व बागवानी के क्षेत्र में आशातीत प्रगति की है। सन् 1958 में इनके अन्तर्गत कुल भूमि का क्षेत्रफल 3,968 हैक्टर था जो कि अब बढ़कर 15,343 हैक्टर हो गया है और विशेष रूप से धान की खेती में बहुत अधिक प्रगति हुई है। इस बीच धान की पैदावार का क्षेत्रफल 3,748 हैक्टर से बढ़कर 12,000 हैक्टर हो गया है। पन्द्रह प्रतिशत पैदावार बढ़ाने के लिए इन द्वीपों को राष्ट्रपति का कलश पुरस्कार स्वरूप दिया गया। धान की पैदावार में वृद्धि करने के उद्देश्य से उन्नत बीज तथा रसायनिक खाद में विभाग द्वारा तथा केन्द्रीय सरकार के अन्वेक्षण केन्द्रों में, जो कि इन द्वीपों में स्थापित किए गए हैं, अनेक परीक्षण किए गए। सफल परीक्षणों को प्रदर्शन के लिए कृषकों के खेतों में ले जाया गया ताकि उनका प्रसार हो सके।

ग्रेट निकोबार में धान के अलावा वहां के परिश्रमी व प्रगतिशील भूतपूर्व सैनिक कृषकों ने मक्का व गन्ने की भी अच्छी फसलें उगाई हैं। लिटिल अंडमान में भी वहां के कृषकों ने धान के अतिरिक्त सफलतापूर्वक दाल, गन्ने व तिलहन की फसलें उगाई हैं। खेती का यह सर्वांगीण विकास उन्नत बीज, उर्वरक तथा कीटनाशक दवाइयों के प्रयोग से संभव हो सका, जिन्हें कृषकों को अनुदान देकर उपलब्ध कराया गया।

इन द्वीपों ने बागवानी के क्षेत्र में बहुत अच्छी प्रगति की है, विशेष रूप से नारियल, सुपारी तथा विभिन्न प्रकार के मसाले-लौंग, कालीमिर्च, जायफल आदि के पौधे लगाए गए हैं। सारे द्वीप समूह में केला पर्याप्त मात्रा में उगाया जाता है। उसकी लगभग चौदह प्रकार

की किस्में हैं । यहां अन्नानास बहुत सफलतापूर्वक उगाया जाता है और पपीता भी काफी होता है । दक्षिण के द्वीपों में एक विशेष प्रकार का पपीता मिलता है जो बहुत मीठा व स्वादिष्ट होता है तथा अन्दर से बिल्कुल लाल होता है । इन द्वीपों में आम के पेड़ भी मिलते हैं किन्तु अत्यधिक वर्षा के कारण उनमें कीड़े लग जाते हैं । यहां शाक-सब्जियां भी पैदा की जाती हैं । यहां पर आलू, प्याज, टमाटर तथा फूलगोभी के लिए लोग तरसते रहते हैं क्योंकि इनकी पैदावार नहीं होती । इस सम्बन्ध में कुछ सफल परीक्षण किए गए हैं किन्तु वे अभी अन्वेक्षण कक्षों तक ही सीमित हैं ।

शैतान खाड़ी एवं कचाल में रबर के बहुत सुन्दर पेड़ लगाए गए हैं । 614 हैक्टर भूमि इसके अन्तर्गत लाई गई है, जिससे 480 मी. टन रबर प्रति वर्ष प्राप्त किया जा रहा है । लिटिल अंडमान में खजूर का लाल तेल (रेड आइल-पाप) के पौधे लगाने की एक विशाल योजना के अन्तर्गत बहुत बड़े क्षेत्र में काम हो रहा है, जिसमें आशातीत सफलता मिल रही है । यहां के पौधे अपने जन्म स्थान मलेशिया के पौधों से कहीं अधिक बड़े व सुन्दर हैं । कुछ ही वर्ष पूर्व यहां पर ये पेड़ लगाए गए थे, थोड़े से समय में इन्होंने पैदावार देना प्रारम्भ कर दिया है और वार्षिक उत्पादन 210 मी. टन है । योजना के पूर्ण रूप से सम्पादन होने से विदेशों से खाने का तेल आयात करने में खर्च होने वाली करोड़ों रुपये की विदेशी मुद्रा की बचत् होगी और देश इस सम्बन्ध में आत्मनिर्भर बन सकता है ।

निकोबार द्वीप के लोग पूर्ण रूप से केवल नारियल की पैदावार पर आश्रित हैं । यहां पर रोग मुक्त नारियल के पेड़ों का पाया जाना सारे विश्व में एक विचित्र बात है । शायद यही कारण है कि आज विश्व के सभी वैज्ञानिक इस रोग मुक्त क्षेत्र में नारियल की विभिन्न किस्मों के लिए एक रोग मुक्त पौधालय स्थापित करने के प्रस्ताव पर गंभीरता पूर्वक विचार कर रहे हैं । निकोबार द्वीप के समस्त लोग नारियल के पेड़ उगाते हैं । अंडमान द्वीप समूह में नारियल के पेड़ बाद में उगाए गए । लोगों को इसके लिए भूमि व्यक्तिगत, सामुदायिक तथा सहकारिता के आधार पर दी गई है । रंगाचांग, बर्मानाला, कौड़ियाघाट आदि में नारियल के व्यक्तिगत बगीचे हैं । सामुदायिक रूप से ये बगीचे बीचडोरा, नौडेरा आदि में स्थापित किए गए हैं तथा तुशनाबाद में एक क्रय-विक्रय तथा बगीचा लगाने की सहकारी समिति गठित की गई है, जिसमें तुशनाबाद, हौदीपुर तथा औगराबराज के ग्राम सम्मिलित हैं । अंडमान में जब प्रारम्भ में लोग बसे तो उन्हें घाटियों की समतल भूमि धान की खेती के लिए दी गई तथा उसी से संलग्न पहाड़ी भूमि बागवानी के लिए दी गई । उपरोक्त तीन ग्रामों के आठ कृषकों ने स्वेच्छा से अपनी-अपनी पहाड़ी भूमि को सामुदायिक रूप से नारियल के बगीचे तथा मसाले के पौधों को उगाने के लिए दे दिया । बैंक भी इस प्रकार की योजनाओं को प्रोत्साहित कर रहे हैं । अन्य स्थानों पर भी इसी प्रकार के प्रस्ताव विचाराधीन हैं । प्रशासन भी प्रयास कर रहा है कि अन्य स्थानों में भी बगीचे लगें जैसे कि मार्क बे, लाल जी बे, तथा कार निकोबार । इन्दिरा पाइन्ट पर एक बड़े वनस्पतिक उद्यान के बनाने की योजना है ।

बहुत भारी वर्षा तथा तूफानी मौसम के कारण, नयी तोड़ी गई जमीन की ऊपरी सतह की अधिकांश उपजाऊ मिट्टी बहकर समुद्र में चली जाती है । इस बात की परम आवश्यकता है कि इस प्रकार जहां कहीं भूमि को खोदा जाये उसी के साथ भूमि संरक्षण के उपाय भी प्रयोग में लाए जायें । इस प्रकार की भूमि संरक्षण योजनाओं के लिए प्रशासन ने उदारतापूर्वक ऋण व अनुदान की व्यवस्था की है ।

2. पशुपालन

इन द्वीपों में उपलब्ध अधिकांश पशुओं का वर्गीकरण नहीं किया जा सकता है । अधिकांश जानवर दूध नहीं देते और थोड़े बहुत जो देते भी हैं तो वे बहुत ही कम दूध देते हैं । इस बात को समझने के लिए कहीं दूर जाने की आवश्यकता नहीं । पोर्ट ब्लेयर में ही गायों के झुंड सड़कों पर इधर-उधर आराम से लेटे हुए दिखाई देते हैं, जिससे सड़कों पर गाड़ी चलाने में विशेष सावधानी बरतनी पड़ती है । जो गायें थोड़ा-सा दूध देती भी हैं, उनकी भी उचित देख-रेख नहीं की जाती और उन्हें चरने के लिए यों ही आवारा छोड़ दिया जाता है ।

यहां पर पशुओं की इस दयनीय स्थिति का मुख्य कारण है इन द्वीपों में मुख्य भूमि से बहुत बड़ी दूरी । इन द्वीपों में अच्छी नस्ल के जानवरों का अभाव है और अच्छी नस्ल के जानवरों को प्राप्त करने का एक मात्र स्रोत मुख्य भूमि है । एक आम आदमी के लिए मुख्य भूमि में जानवर खरीदना फिर रेल व जहाज का भाड़ा देकर उसे इन द्वीपों में लाना कोई आसान बात नहीं है ।

इस द्वीप के अधिकांश लोग, विशेष रूप से पोर्ट ब्लेयर के, अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए दूध-पाउडर व टीन के डिब्बे के दूध का प्रयोग करते हैं, किन्तु ये भी हमेशा नहीं मिलते । थोड़ा भी जहाजरानी सेवा में गड़बड़ी होने से, जो कि अक्सर होती रहती है, इन पदार्थों की कीमतें आसमान छूने लगती हैं और ये चीजें बाजार से एकाएक अन्तर्ध्यान हो जाती हैं ।

यह बड़े सन्तोष की बात है कि प्रशासन ने पशुओं की नस्ल सुधारने की दिशा में कुछ ठोस कदम उठाए हैं । इसके लिए डौलीगंज में एक उन्नत नस्ल के जानवरों के लिए पशुगृह स्थापित किया गया है । इसके लिए उन्नत नस्ल की गायें, हरियाणा से आयात की गई हैं । जहाजरानी विभाग ने अंडमान नामक जहाज पर उनके लिए विशेष बाड़ों का निर्माण कर दिया है ।

वर्तमान में उन्नत नस्ल के 124 जानवर हैं, जिसमें बछड़े, बछिया भी सम्मिलित हैं । बछड़ों को पाल कर बड़ा किया जाता है ताकि वे नस्ल सुधार सकें और बछियों को किसानों को बेच दिया जाता है । इस प्रकार 6 बछियों को किसानों को बेचा गया तथा 5 सांड अन्य केंद्रों पर नस्ल सुधार सेवाओं के लिए दे दिये गये ।

यहीं के पशुओं के स्वास्थ्य-सुधार तथा पशु-पालन के विकास को गतिशील बनाने की दृष्टि से इन द्वीपों में 8 पशु चिकित्सालय, 3 पशु औषधालय, 32 पशु उप-औषधालय, तथा 6 सचल औषधालय स्थापित किए गए हैं। कुछ पूर्वी बंगाल के कर्मठ विस्थापित परिवारों ने नेल व हैवलौक के द्वीपों में बहुत सुन्दर अच्छी नस्लों की गायों को पाला है किन्तु समुद्र में यातायात की कठिनाई के कारण उनका अन्य द्वीपों में ले जाना दुष्कर हो जाता है।

पशुओं की नस्ल सुधार के सम्बन्ध में नए वैज्ञानिक अनुसंधान इन सुदूर अगम्य द्वीपों के लिए वरदान सिद्ध हुए हैं। कृत्रिम गर्भाधान के लिए वीर्य का संरक्षण इन द्वीपों के लिए एक विकट समस्या थी। वीर्य को जमाने की आधुनिक तकनीक के अनुसार इसे अब अनिश्चित काल तक द्रव नाइट्रोजन के रूप में रखा जा सकता है। इस प्रकार यह जमा हुआ जर्सी का वीर्य गायों के लिए तथा मुर्रा का वीर्य भैंसों के लिए, 6 नस्ल सुधार केन्द्रों पर पशुओं की नस्ल सुधार में प्रयुक्त हो रहा है।

इन द्वीपों में पशुओं द्वारा बहुत कम दूध दिए जाने का प्रमुख कारण है पौष्टिक चारे का अभाव। स्थानीय घास में विशेष पौष्टिक तत्व नहीं हैं। कृषकों ने कभी भी अच्छे चारे के महत्व को नहीं समझा, जब तक कि उनके सामने इसे प्रमाणिक रूप से प्रदर्शन द्वारा नहीं समझाया गया। इस सम्बन्ध में डौलीगंज फार्म बहुत सहायक सिद्ध हुआ। प्रशासन यहां पर अपनी आवश्यकतानुसार प्रचुर मात्रा में अच्छे व पौष्टिक चारे उगाता है जो कि लोगों के लिए एक प्रदर्शन केन्द्र का काम भी करता है। प्रशासन द्वारा यहां ग्रीष्म काल में सूखे के समय घास को सूखने से बचाने के लिए एक तालाब भी बनाया गया है और फुहार सिंचाई प्रथा से इन घासों पर पानी की वर्षा करने का प्रबंध भी किया गया है। कृषकों को उनकी अपनी जमीन में पशुओं को खिलाने की दृष्टि से उन्नत किस्म के बेल के चारे के बीजों के 275 लघु थैले वितरित किए गए हैं।

राष्ट्रीय दुग्ध विकास संस्था से डा. कुरियन ने इन द्वीपों का भ्रमण किया और उन्होंने इन द्वीपों को ऑपरेशन फ्लड योजना के अन्तर्गत लाने की संस्तुति की। जिसको भारत सरकार ने स्वीकार किया। फलस्वरूप 1985 से दक्षिण अंडमान में फ्लड ऑपरेशन योजना के अन्तर्गत एक शीर्षस्थ सहकारी दुग्ध समिति का "दि साउथ अंडमान कोऑपरेटिव मिल्क प्रोडयूसर्स यूनियन लिमिटेड" के नाम से पंजीकरण किया गया। इस योजना का प्रायोजक अंडमान व निकोबार द्वीप समूह का प्रशासन है तथा योजना के लिए धन की व्यवस्था भारतीय सहकारी दुग्ध संघ बड़ौदा द्वारा की जाएगी। इस योजना के अन्तर्गत ग्रामीण सहकारी समितियों के माध्यम से दूध प्राप्त करने का काम केवल 75 लीटर दूध प्रतिदिन से प्रारम्भ किया गया, जिसमें वृद्धि हो रही है। डौलीगंज फार्म विस्तार योजना के अन्तर्गत वहां पर चार हजार लीटर की क्षमता की एक दूध को ठन्डा करने की मशीन लगाई गई है। ग्रामीणों की इस योजना के प्रति अच्छी प्रतिक्रिया रही है। खुराक व चारा कार्यक्रम के अधीन, अब ग्रामीण चारा उगाने के लिए आगे आ रहे हैं। जानवरों के लिए पौष्टिक

तत्वों से युक्त संतुलित आहार को बाहर से मंगाकर ग्रामीण लोगों में वितरण की व्यवस्था भी की जा रही है ।

निकोबार द्वीप समूह में निकोबारी लोग अपने नारियल के बगीचों से पूर्णतया सन्तुष्ट हैं । यद्यपि कुछ मामलों में वे बहुत आधुनिक हैं किन्तु उन्हें दूध या दूध देने वाले जानवरों में किसी प्रकार की कोई रुचि नहीं है । यह प्रथा उत्तर पूर्वी भारत की लगभग सभी जन जातियों में पाई जाती है । निकोबारी सूअर का गोश्त बड़े शौक से खाते हैं और सूअर ख़ूब पालते हैं । मजे की बात यह है कि सूअर भी नारियल बड़े चाव से खाता है । ग्रेट निकोबार के द्वीप में भूतपूर्व सैनिकों ने दूध के लिए भैंसें रखी हैं यद्यपि उनमें प्रारम्भ में बीमारी के कारण बहुत मौतें हुईं किन्तु अब स्थिति नियंत्रण में है ।

मुर्गीपालन की दिशा में इन द्वीपों ने बहुत बड़ी प्रगति की है । इस मामले में तो निकोबारी लोग भी पीछे नहीं हैं । पोर्ट ब्लेयर में लोग डीप लिटर प्रणाली का प्रयोग कर वैज्ञानिक ढंग से मुर्गियों का पालन करते हैं । सरकारी कर्मचारियों ने भी इस दिशा में विशेष रुचि दिखाई है । कुछ समय पूर्व इन सरकारी कर्मचारियों के ईर्षालु पड़ोसियों ने आपत्ति उठाई कि इन्हें इस कार्य के लिए ऋण व अनुदान देना तथा इनके द्वारा अंडों की बिक्री करना सरकारी कर्मचारियों के चाल-चलन सम्बन्धी नियमावली के विरुद्ध है, क्योंकि इस प्रकार का लेन-देन व्यापार के अन्तर्गत आता है, जिस पर कि गंभीर प्रतिबन्ध है । दूसरों ने भी प्रत्यारोप लगाया कि जो लोग आपत्ति उठा रहे हैं वे स्वयं इन नियमों की अवहेलना कर रहे हैं क्योंकि वे भी सब्जी व दूध बेचते हैं । मामला काफी उलझन का बन गया तथा सलाह के लिए विधि सलाहकार के पास भेजा गया जिसने इस सम्बन्ध में विचार प्रकट करते हुए कहा कि "फार्म" से पैदा होने वाली वस्तुओं का बेचना व्यापार के अन्तर्गत नहीं आता ।

मुर्गीपालन का भविष्य बहुत उज्जवल है । इन द्वीपों में वर्तमान में मुर्गियों की संख्या 3,19,898 आंकी गई है जो एक प्रकार से आबादी की लगभग दूनी है । डौलीगंज में एक मुर्गीपालन केन्द्र है जहां से पोर्ट ब्लेयर के निवासियों की अधिकांश अंडों की मांग की पूर्ति की जाती है । चार छोटे मुर्गीपालन के फार्म सीतापुर (उत्तरी अंडमान) वसन्तपुर (मध्य अंडमान) कार निकोबार तथा कैम्पल बे (ग्रेट निकोबार) में स्थापित किये गए हैं ।

3. मत्स्यपालन

अंडमान व निकोबार द्वीप समूह का समुद्र तटीय क्षेत्र भारत के अन्य प्रदेशों से सबसे अधिक है । सचमुच में ये द्वीप देश के एक तिहाई समुद्रतट क्षेत्र पर नियंत्रण रखते हैं । अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अनुसार किसी भी देश काअधिकार क्षेत्र चारों ओर समुद्र में दो सौ मील की दूरी तक माना जाता है । इस भूभाग में यही पूरा क्षेत्र अतुल समुद्रीय सम्पदा से भरपूर है, किन्तु उपयोग के आवश्यक साधनों के अभाव में यह अमूल्य निधि जो कि देश

की मृत प्राय: अर्थव्यवस्था के लिए संजीवनी का काम कर सकती थी, दुर्भाग्य से यों ही बिखरी पड़ी है तथा लूटे जाने के खतरे में है क्योंकि इस पर पड़ोसी देशों की गिद्ध दृष्टि अक्सर झपटती रहती है। ताईवान, थाईलैंड, मलेशिया तथा बर्मा के अनेक मछुआरों के गिरोह, आधुनिकतम मछली पकड़ने के यंत्रों से परिपूर्ण, तेज चलने वाली नौकाओं द्वारा भारतीय अधिकृत क्षेत्र में चोरी छिपे घुसकर नावों में भर-भर कर मछली, शैल, तथा अन्य समुद्री भोजन अपने देश को ले जाते हैं। प्रशासन के पास इन घुसपैठियों को पकड़ने के लिए तेज रफ्तार वाली नावें नहीं हैं, जब कभी उन्हें पकड़ने के प्रयास किए गए वे आसानी से भाग निकले। कभी-कभी तो वे लोग बन्दूकों से गोली चलाते हुए भाग निकलते हैं, फिर भी प्रशासन अक्सर कुछ नावों को अवश्य पकड़ ही लेता है, जिसमें से कुछ जंग लगी, टूटी फूटी नावों को कतारबद्ध, पोर्ट ब्लेयर के फिशरी जेटी पर देखा जा सकता है। किसी दर्शक ने मजाक में एक बार कहा था "प्रशासन मछली कम व नावें अधिक पकड़ता है" किन्तु यह टिप्पणी वास्तव में प्रशासन की, उस अमूल्य निधि के अक्षय भंडारों का सदुपयोग करने की असमर्थता प्रकट करती है। भारतीय अधिकृत क्षेत्र में इस प्रकार चोरी छिपे अतिक्रमण की घटनाओं को रोकने की दृष्टि से तटीय क्षेत्र की सुरक्षा का सारा उत्तरदायित्व अब तटरक्षक दल को दिया गया है, जिसे साधन सम्पन्न यंत्रों से युक्त नावें भी दी जा रही हैं।

इस समस्या का असली हल तो यही है कि देश की आर्थिक स्थिति को सुधारने की दृष्टि से इस अमूल्य निधि का सदुपयोग हो। यह बड़े सन्तोष का विषय है कि प्रशासन इसके महत्व को समझने लगा है और पिछले कुछ वर्षों में इस दिशा में कुछ प्रगति भी हुई है। निदेशक मत्स्यपालन के पद का सृजन किया गया है। यहां के द्वीपवासी परम्परा से मछुवा परिवारों से जुड़े न होने के कारण मछली पकड़ने की कला से अनभिज्ञ हैं। इसलिए केरल, तमिलनाडु तथा आंध्र प्रदेश से लगभग 211 मछुवा परिवारों को इन द्वीपों के विभिन्न भागों में बसाया गया है। विभिन्न द्वीपों में यंत्र चालित नावें भी रखी गई हैं जिनकी सीधी देख रेख स्वयं विभाग करता है। स्थानीय युवकों को इन यंत्र चालित नावों के प्रयोग का प्रशिक्षण देने के लिए कोचीन भेजा गया।

मत्स्यपालन विभाग द्वारा सीपी घाट आदि स्थानों में झींगा मछली तथा अन्य समुद्री भोजन को पालने व बढ़ाने के कुछ प्रयोगात्मक परीक्षण भी किये जा रहे हैं। युवाओं को मछली पकड़ने के विशेष प्रशिक्षण दिये जा रहे हैं और जो परीक्षार्थी अपना स्वतंत्र काम शुरू करना चाहें, प्रशिक्षण पूर्ण करने पर उन्हें मछली पकड़ने के साज-सामान के लिए ऋण व अनुदान उदारता पूर्वक दिये जाते हैं। इस प्रकार 2063 बेरोजगार युवक मछुआरों के रूप में अपनी आजीविका प्राप्त कर रहे हैं। इन द्वीपों में 1986-87 में 9692 टन मछली पकड़ी गई, जिसकी कीमत 5.81 लाख रुपये से अधिक थी। पोर्ट ब्लेयर में मछली को नमक तथा धूप द्वारा सुखाने की व्यवस्था है, जिससे उसे अधिक समय तक रखा जा सकता है। इस प्रकार धूप से सूखी मछली द्वीपों के बाहर भेजी जाती है। विभाग के पास समुद्री सम्पदा

की खोज-बीन करने के लिए एक नाव भी काम कर रही है। अब तक की गई जांच-पड़ताल से यह बात प्रकाश में आई है कि यदि "बॉटम ट्रौलिंग" तकनीक अपनाई जाये, तो अंडमान के समुद्र से 71 किलोग्राम मछली प्रतिघंटा पकड़ी जा सकती है।

पिछले कुछ वर्षों में भारत की कुछ कंमनियों को थाइलैंड तथा अन्य देशों से संयुक्त रूप से मछली पकड़ने की अनुमति इस शर्त पर दी गई कि इस काम में भारतीय लोग लगाये जायेंगे तथा उन्हें उचित प्रशिक्षण भी दिया जायेगा, किन्तु किसी ने भी इन शर्तों का पालन नहीं किया और जोर-शोर से मछली पकड़ते गये। यद्यपि सरकार ने कुछ करोड़ रुपये विदेशी मुद्रा में प्राप्त किए किन्तु अनेक प्रकार की अनियमितताओं के कारण यह योजना बन्द कर दी गई और आगे लाइसेन्स देना रोक दिया गया।

ग्रेट निकोबार के समीप समुद्र का पानी विषुवत रेखा के समीप होने के कारण गरम रहता है। इस भाग में त्यूना मछली के विशाल भंडार हैं, जिसकी विदेशों में बहुत मांग है। इस मछली को पकड़ने की एक विशेष कला है जिसके लिए उचित प्रशिक्षण आवश्यक है।

यह आवश्यक है कि इस समुद्री सम्पदा के उपयोग को एक साधारण विभागीय कार्य न बना कर इसे एक महत्वपूर्ण योजना का रूप देना होगा, जो देश की आर्थिक प्रगति में सहायक होगी।

4. वन

इन द्वीपों में वनों का प्रतिशत मुख्यभूमि की अपेक्षा बहुत अधिक है। इन वनों का प्रबन्ध मुख्य अरण्यपाल की देख-रेख में अन्य वन अधिकारियों द्वारा किया जाता है। अधिकांश कार्य विभाग द्वारा स्वयं किये जाते हैं। हाल के वर्षों में एक अन्य संस्था "फॉरेस्ट प्लानटेशन कारपोरेशन" भी इन द्वीपों में स्थापित की गई है क्योंकि विभागीय नियम इतने सख्त व जटिल हैं कि आज की व्यवसायिक परिस्थितियों में वे विभागीय अधिकारियों की निर्णय लेने की प्रवृति पर अंकुश लगा देते हैं। अतः निगम (कारपोरेशन) बना कर उन नियमों को नजर अन्दाज करने का अच्छा बहाना मिल जाता है। संभवतः यही कारण है कि आज समस्त देश में निगम बनाने की प्रवृत्ति चल रही है। विभाग की अधिकांश लकड़ी का उपयोग चैयम आरा मिल द्वारा किया जाता है जो कि एशिया में लकड़ी चीरने का सबसे बड़ा कारखाना है। एक अन्य आरा मिल बेटापुर में है और वह भी विभाग द्वारा चलाई जाती है।

वन विभाग द्वारा प्लाइवुड व दिया सलाई के निजी उद्योगों को भी लकड़ी दी जाती है, जिसके मुख्य उपभोक्ता हैं वेस्टर्न इन्डिया मैच फैक्टरी (विमको), अंडमान टिम्बर इन्डस्ट्रीज बम्बू फ्लैट (ए. टी. आई.), एलविन प्लाइवुड लोंग आइलैंड तथा जयश्री टिम्बर प्रोडक्टस बकुतल्ला। हाल के वर्षों में कुछ नये दिया सलाई की तिल्लियां बनाने के कारखाने

लिटिल अंडमान में स्थापित किये गए हैं। इन सभी उद्योगों को लकड़ी दी जाती है। लगभग दो लाख घन फुट लकड़ी रेलवे तथा आर्डिनेंस फैक्टरियों के लिए मुख्य भूमि भेजी जाती है। अधिकांश लकड़ी स्वयं विभाग द्वारा काटी जाती है। निम्न तालिका विभिन्न वर्गों द्वारा वनों से लकड़ी काटे जाने का विवरण प्रकट करती है।

विभिन्न वर्गों द्वारा लकड़ी काटने की सूची (घन फुट में)

वर्ष	*सरकारी विभाग*	*ठेके पर*	*निजी संस्थान (रायल्टी के भुगतान पर)*	*वन एवं प्लांटेशन निगम*	*नि:शुल्क या रियायती शुल्क पर*	*योग*
1982-83	37,638	6,051	76,626	24,832	4,828	1,49,975
1983-84	30,675	–	56,322	24,972	1,083	1,13,052
1984-85	40,665	–	66,956	25,211	1,110	1,33,942
1986-87	40,289	1,126	73,383	21,280	1,487	1,37,565

उपरोक्त तालिका इस बात को भी प्रदर्शित करती है कि स्थानीय निवासियों को मुफ्त या रियायती शुल्क पर मिलने वाली निर्धारित लकड़ी की मात्रा में कड़ी कटौती की गई है। कैदी बस्ती के समय से यह प्रथा प्रचलित थी कि स्थानीय लोगों को अपनी आवश्यकतानुसार मकान मरम्मत कराने या नया मकान बनवाने के लिए मुफ्त में लकड़ी दी जाती थी। इससे अतिरिक्त मांग को रियायती दर पर देने की व्यवस्था की गई। इस परंपरा को समाप्त करने तथा उसमें परिवर्तन करने से लोगों को बहुत कठिनाइयों तथा परेशानियों का सामना करना पड़ रहा है।

लोगों का कथन है कि साधारण गरीब आदमी के लिये आज लकड़ी एक दुर्लभ वस्तु बन गई है। मुफ्त व रियायती दर पर लकड़ी पाने के उनके पुश्तैनी हक की बात तो अलग रही आज उचित मूल्य पर भी लकड़ी उपलब्ध नहीं है। आज लकड़ी की कीमतें बहुत अधिक हैं, जिसे जनसाधारण खरीद नहीं सकता। वन विभाग द्वारा यहां की लकड़ी को कलकत्ता तथा मद्रास में बेचने की विशेष व्यवस्था की गई है। कलकत्ता में वरिष्ठ वन अधिकारी की देखरेख में एक बहुत बड़ा कार्यालय बनाया गया है। कुछ लोगों ने वन विभाग के अधिकारियों के विरुद्ध खुले अभियोग लगाए हैं कि उनका रुख द्वीपवासियों के प्रति अच्छा नहीं है उसकी पुष्टि में उनका कहना है अंडमान में लकड़ी महंगी है तथा कलकत्ता में सस्ती है। एक बार

कुछ लकड़ी जो कलकत्ता में नीलामी के लिए भेजी गई थी उसे अच्छी कीमत नीलाम में नहीं मिली और सस्ती बेची गई। उसी में से अंडमान के लोग अपने इस्तेमाल के लिए कुछ लकड़ी पोर्ट ब्लेयर ले आये। उनका कहना था, वहां से खरीदकर जहाज का किराया, ढुलाई आदि देने पर भी वह उससे सस्ती थी जो स्थानीय रूप से उपलब्ध थी। संभवत: यह मामला अनोखा रहा हो किन्तु वास्तव में स्थानीय लोगों के प्रति इस सम्बन्ध में कुछ उदार नीति अपनाने की आवश्यकता प्रतीत होती है।

कई स्थानीय लोगों ने छोटी-छोटी आरा मशीनों के कुछ कारखाने लगाए हैं, जो कि लकड़ी उपलब्ध न होने के कारण प्राय: बेकार पड़े रहते हैं और उनके लिए जीवन यापन करना एक समस्या बन जाती है। वन विभाग का कहना है कि नये उद्योगों को लकड़ी देना उनके लिए संभव नहीं होगा, और अब लकड़ी सम्बन्धी कोई भी कारखाना बिना वन विभाग की पूर्व अनुमति के नहीं खोला जा सकता है। दिन पर दिन लकड़ी की मांग बढ़ती जा रही है क्योंकि निवासियों की तथा सरकारी विभागों की आवश्यकताएं भी बढ़ रही हैं, विशेष रूप से विकास की गतिविधियों के बढ़ने के परिणामस्वरूप ऐसा हो रहा है।

वन विभाग के राजस्व में निरन्तर वृद्धि हो रही है जैसा कि निम्न आंकड़ों से साबित होता है।

वर्ष	*राजस्व (लाखों में)*
1981-82	574.020
1982-83	655.870
1983-84	638.000
1984-85	762.660
1985-86	978.310
1986-87	1,397.610

यद्यपि यहां पर वनों का कटान द्रुत गति से हो रहा है किन्तु उसी अनुपात में नयी पौध लगाने व बढ़ाने के खास प्रयास नहीं किये जा रहे हैं। पडौक जो यहां की एक विशेष किस्म है और जिसकी मांग भी बहुत है, धीरे-धीरे समाप्त हो रहा है। यहां के आदिवासियों की तरह संभवत: एक दिन ये वनस्पतियां भी सदा के लिए समाप्त हो जायेंगी। यद्यपि पडौक के वृक्षों को लगातार कई वर्षों से काटा जा रहा है किन्तु इसके प्राकृतिक रूप से पुनर्जीवन प्राप्त करने की दिशा में कुछ नहीं किया जा रहा है। इस उदासीनता का मुख्य कारण है इसके धीरे उगने की प्रक्रिया। वन विभाग सागौन के पेड़ लगाने में अधिक उत्सुक है क्योंकि यह बहुत जल्दी बढ़ता है तथा व्यावसायिक दृष्टि से अच्छा है।

ऐसा प्रतीत होता है कि क्षणिक आर्थिक लाभ को दूरगामी पर्यावरण लाभ से कहीं अधिक महत्व दिया जा रहा है। पडौक तथा गुरजन 150 घन फुट की औसत मोटाई एक सौ वर्ष में प्राप्त करते हैं, किन्तु वन विभाग में इतनी लम्बी अवधि तक प्रतीक्षा करने का

धैर्य नहीं है, अतः उन्होंने बारी-बारी से वनों को विकसित करने के स्थान पर उनका स्वरूप ही बदलना शुरू कर दिया है। वर्तमान नीति यही है कि मोटे तनों वाले पेड़ों के स्थान पर प्रति हैक्टर ऐसे पेड़ों को लगाना है, जिनकी लकड़ी रेयन, प्लास्टिक आदि बनाने में काम आ सके। इसलिए वन विभाग इस बात को आवश्यक समझता है कि पूरे क्षेत्र का परिवर्तन कर दिया जाये बजाय बारी-बारी से जंगलों को काटने के।

नीति सम्बन्धी भ्रम का मुख्य कारण यही है कि यहां पर वन वर्धन की कोई निर्धारित योजना नहीं है जिस पर कि अमल किया जा सके। इन द्वीपों में वन विभाग की स्थापना 1883 में की गई। सन् 1983 में इसकी शताब्दी बड़े धूमधाम से मनाई गई, जिसमें देश के सभी प्रमुख वन वृक्ष वैज्ञानिक बुलाये गए। इन द्वीपों के लिए प्रथम निर्धारित योजना 1906 में एफ. एच. टूड द्वारा बनाई गई। यह योजना केवल वन सम्पदा के निकास करने की दृष्टि से बनाई गई थी किन्तु इसका प्रारम्भ ही नहीं हुआ। यह योजना केवल कागज पर बनी रही। उसी तरह की एक अन्य योजना 1914 में एम. सी. वौनिंगटन ने बनाई किन्तु ठेकेदारों ने इसमें भी किसी प्रकार की रुचि नहीं दिखाई। जब कोई भी व्यक्ति वनों को लेने नहीं आया तो यह योजना 1922-23 में छोड़नी पड़ी। तीसरी योजना जो एस. एस. डीन ने 1936 में बनाई उसका हाल भी वही हुआ जैसा कि पहली योजनाओं का हुआ। बाद में बी. एस. चेनगप्पा ने दक्षिण व मध्य अंडमान के वनों को काटने की कुछ योजनाएं बनाईं जिन पर 1942 तक अनुसरण किया गया, इसके बाद इन द्वीपों पर जापान का अधिपत्य हो गया। द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त होने के बाद चेनगप्पा ने विस्तारपूर्वक योजना बनाई। बाद में इसमें पुनः कुछ परिवर्तन किये गए ताकि पुनर्वास योजना के अन्तर्गत विस्थापितों को बसाया जा सके तथा जनजाति व आदिवासी जनजाति सुरक्षित क्षेत्र बनाये जा सकें। इस योजना को 1960 में जे. सी. वर्मा ने संशोधित किया किन्तु प्रशासनिक कारणों से इस संशोधित योजना का कार्यान्वयन न हो सका। अब ऐसे ही कुछ जल्दी में बनाई गई काम चलाऊ योजनाओं के आधार पर काम किया जा रहा है।

इन द्वीपों में दि इन्डियन फोरेस्ट एक्ट 1936 लागू किया गया है, दक्षिण अंडमान के कुछ क्षेत्रों को 1949 में संरक्षित घोषित किया गया तथा 1963 में सुरक्षित तथा संरक्षित वन घोषित किया गया। सर्वे ऑफ इन्डिया ने सर्वेक्षण तथा सीमांकन का कार्य अंडमान द्वीप समूह में लिटिल अंडमान को छोड़ कर पूरा कर लिया है। यह सर्वेक्षण लिटिल अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह में करना अभी शेष है।

5. शिक्षा

आजादी के पहले अंडमान निकोबार द्वीप समूह की सारी शैक्षिक व्यवस्था अस्त-व्यस्त थी। अंग्रेजी शासन काल में इन द्वीपों की शिक्षा व्यवस्था रंगून के अधीन थी किन्तु जापानी अधिपत्य के दिनों अंग्रेजी जानने वाले लोगों को शक की दृष्टि से देखा जाता था। जापानियों ने स्वयं अपने स्कूल खोल दिये थे, जिसमें शिक्षा का माध्यम जापानी भाषा थी।

द्वीपों पर पुन: अधिपत्य करने के बाद अंग्रेजों ने यहां की शिक्षा के संबंध में कोई रुचि नहीं दिखाई क्योंकि वे भारत छोड़ने का निश्चय कर चुके थे और इसी बीच भारत ने स्वतंत्रता प्राप्त कर ली। आजादी के बाद के वर्षों में द्वीपों का शिक्षा विभाग इधर-उधर भटकता रहा। प्रारम्भ के कुछ वर्षों तक यह रंगून के शिक्षा विभाग द्वारा संचालित होता रहा।

देश के विभाजन के फलस्वरूप पूर्वी बंगाल (बंगलादेश) से अनेक विस्थापित इन द्वीपों में बसाये गये। इन्हें बंगाली में शिक्षा देने की आवश्यकता पड़ी तथा पश्चिम बंगाल के शिक्षा विभाग के अन्तर्गत प्राथमिक स्कूलों की स्थापना की गई। किन्तु इसी बीच दूसरे प्रदेशों से विशेष रूप से दक्षिण से बड़ी संख्या में लोग इन द्वीपों में आ गये, उनमें कुछ अन्य लोग विभिन्न परियोजनाओं के आधार पर यहां बसाये गए और इस बात की आवश्यकता पड़ी कि इनके लिए भी इनकी मातृ भाषा में प्राथमिक स्कूल खोले जायें। फलस्वरूप हिन्दी और बंगाली के अतिरिक्त निकोबारी, तमिल, तेलुगु, मलयालम, करेन, बर्मी आदि भाषाओं में प्राथमिक स्कूल खोले गये। समस्या दिन प्रतिदिन इतनी जटिल होती गई कि शिक्षा विभाग को केन्द्रीय सरकार से उचित निर्देश लेने पड़े। यद्यपि 1964 तक सारे पाठ्यक्रम पश्चिम बंगाल का अनुसरण करते रहे और1966 तक उच्चतर माध्यमिक कक्षा की परीक्षाएं वेस्ट बंगाल एजूकेशन बोर्ड द्वारा संचालित होती रहीं, किन्तु 1967 में तीनों उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, सेन्ट्रल बोर्ड आफ सेकेन्डरी एजूकेशन के अधीन आ गये तथा एक केन्द्रीय विद्यालय भी पोर्ट ब्लेयर में स्थापित किया गया।

शिक्षा की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए बहुत बड़ी संख्या में अध्यापकों की नियुक्ति की गई। अब प्रश्न था कि इस काम के लिए अध्यापकों को प्रशिक्षण कैसे दिया जाये। इन द्वीपों में उचित प्रशिक्षण के अभाव में इन्हें मुख्य भूमि भेजा गया। चूंकि अध्यापकों की इतनी बड़ी संख्या को एक ही स्थान पर प्रशिक्षण देना संभव नहीं था अत: उन्हें विभिन्न राज्यों में बांटा गया। प्रत्येक राज्य की अपनी अलग शिक्षा प्रणाली थी और जब प्रशिक्षण के बाद अध्यापक इन द्वीपों को लौटे तो इनके बीच शिक्षा प्रणाली के संबंध में एकता व सामन्जस्य लाना एक बड़ी समस्या बन गई। अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए द्वीपों में ही एक अध्यापक प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किया गया, जिसने इस समस्या का थोड़ा-बहुत समाधान किया किन्तु अब बी. एड. के लिए एक कालेज खुल जाने से स्थानीय शिक्षित युवकों को रोजगार के साधन उपलब्ध हो सकेंगे, जिसके लिए वे कई वर्षों से मांग कर रहे थे।

उच्चतर माध्यमिक स्कूल की परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने के बाद विद्यार्थियों को डिग्री कालेजों में द्वीपों के बाहर मुख्य भूमि में पढ़ने के लिए छात्रवृत्तियां दी गई, और अन्य द्वीपों से पढ़ने के लिए पोर्ट ब्लेयर आने वाले विद्यार्थियों को भी छात्रवृत्तियां तथा छात्रावास में रहने की सुविधाएं उपलब्ध की गईं। नए विद्यालय भवनों का निर्माण किया गया, नि:शुल्क

शिक्षा, छात्रवृत्ति, मुफ्त नाश्ता तथा कम आय के परिवारों के लिए बस में निःशुल्क यात्रा, मुफ्त स्कूली पोशाक तथा मुफ्त में पाठ्य पुस्तकों का वितरण, इन सब सुविधाओं ने द्वीपों में शिक्षा के क्षेत्र में एक नव जागरण का काम किया।

इन द्वीपों में शिक्षा का प्रचार व प्रसार बहुत अधिक हुआ है। शिक्षण संस्थाओं की संख्या 284 हो गई है, जिसमें एक डिग्री कालेज, टीचर्स ट्रेनिंग इंस्टीट्यूट तथा एक टीचर्स ट्रेनिंग कालेज (बी. एड.) भी सम्मिलित है। अन्य संस्थाएं इस प्रकार हैं :-

सीनियर सेकेन्डरी स्कूल	–	27
सेकेन्डरी स्कूल	–	23
मिडिल स्कूल	–	40
प्राइमरी स्कूल	–	184

इनके अतिरिक्त 18 प्री–प्राइमरी स्कूल भी हैं, जिनमें आंगनवाड़ी व बालवाड़ी भी सम्मिलित हैं जो 12,193 बच्चों को पढ़ाते हैं। दो नवोदय विद्यालय भी खोले गये हैं, जिसमें एक छोलदारी तथा दूसरा कार निकोबार में ही खोला गया है। शिक्षण संस्थाओं के सुचारू रूप से चलने के लिये, इन द्वीपों की भौगोलिक स्थिति तथा मुख्य भूमि से दूरी बहुत बाधा रही है। सरकार के बार-बार पाठ्य पुस्तकों को बदलने की नीति के परिणामस्वरूप इन द्वीपों के विद्यार्थियों को बहुत अधिक असुविधा हुई है, क्योंकि एन. सी. ई. आर. टी. ठीक समय पर पुस्तकों को सुलभ कराने में असमर्थ रहा है और कई माह तक बेचारे विद्यार्थी बिना पुस्तकों के रह जाते हैं। इस कमी को पूरा करने की दृष्टि से यहां के शिक्षा विभाग ने इन द्वीपों में ही कुछ प्राथमिक कक्षाओं की पुस्तकें छाप ली हैं तथा लगभग एक दर्जन पुस्तकों का विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं में अनुवाद भी कर लिया है।

शिक्षा के क्षेत्र में आशातीत सफलता मिली है। ये द्वीप गर्व से सिर ऊंचा कर सकते हैं क्योंकि यहां पर शिक्षितों की औसत दर विशेष रूप से महिलाओं में, अखिल भारतीय औसत की दृष्टि से काफी अच्छी है, जिसकी पुष्टि निम्न तालिका से होती है।

	1961	1971	1981	*अखिल भारतीय औसत*
पुरुष	42.43	51.64	58.72	46.74
स्त्रियां	19.37	31.11	42.14	24.88
औसत	33.52	43.59	51.56	36.17

बढ़ती हुई बेरोजगारी यहां के शिक्षित युवकों के लिए एक विकट समस्या बनी हुई है क्योंकि उनके समक्ष रोजगार के बहुत कम अवसर हैं। भारत सरकार ने कुछ स्थान देश के विभिन्न इंजीनियरी, मेडिकल तथा कृषि कालेजों में यहां के स्थानीय (लोकल) लोगों तथा इन द्वीपों में सेवारत अंडमान प्रशासन, केन्द्रीय सरकार, व रक्षा विभाग के कर्मचारियों के बच्चों व आश्रितों के लिये सुरक्षित किये हैं।

इन विभिन्न वर्गों का चुनाव पूर्ण रूप से परीक्षा फल के अंकों के आधार पर होता है। अब तो इन स्थानों के लिए इतना कड़ा मुकाबला हो गया है कि स्थानीय विद्यार्थियों के लिए 65 प्रतिशत अंक पाने पर भी इंजीनियरी कालेजों में प्रवेश पाना कठिन हो गया है। पहले कोई विशेष मुकाबला नहीं रहता था। प्राय: सरकारी कर्मचारी अंडमान में स्थानान्तरण कराने का प्रयास करते थे ताकि उनके बच्चे वहां सुरक्षित स्थानों से आसानी से इन विशिष्ट कालेजों में प्रवेश पा सकें।

प्रतिभावान छात्र तो विशिष्ट कालेजों में प्रवेश पा ही लेते, सम्पन्न परिवारों के बच्चे भी मुख्य भूमि के कालेजों में पढ़ने चले जाते किन्तु प्रश्न था, शेष विद्यार्थी क्या करें। इन द्वीपों में एक डिग्री कालेज की स्थापना की मांग कई वर्षों से चल रही थी जो बड़े प्रयासों के पश्चात् स्वीकार की गई। डिग्री कालेज में स्नातकोत्तर कक्षाओं के कुछ विषयों को पढ़ाने की भी सुविधा है। प्रारम्भ में डिग्री कालेज को किसी पड़ोसी विश्वविद्यालय ने सम्बद्ध नहीं किया, अन्त में पंजाब विश्वविद्यालय ने परित्राण किया। भौगोलिक दृष्टि से पंजाब व अंडमान, देश के दो छोरों पर स्थित हैं। इस दूरी के कारण पाठ्य सूची, परीक्षा का क्रम तथा परीक्षाफल में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। परीक्षाफल के इन द्वीपों में पहुँचने में बहुत विलम्ब होता है क्योंकि डाक अक्सर देर से प्राप्त होती है क्योंकि ये परीक्षाफल कभी-कभी हवाई डाक से न आकर समुद्री जहाज से आते हैं, जिसमें करीब पन्द्रह दिन का अन्तर पड़ जाता है। कभी-कभी तो ऐसा भी देखने में आया कि जब तक परीक्षाफल यहां पहुँचता है तब तक मुख्य भूमि के कालेजों में प्रवेश की अन्तिम तिथि समाप्त हो जाती है। दूसरी समस्या है, उस समय मुख्य भूमि जाने के लिए जहाज का मिलना क्योंकि यह सेवा लगभग पन्द्रह दिन में एक बार उपलब्ध रहती है। प्राय: देखा गया है कि विद्यार्थी परीक्षाफल निकलने के पहले ही मुख्य भूमि की ओर चल पड़ते हैं, कुछ तो चंडीगढ़ ही पहुंच कर वहां पर प्रतीक्षा में बैठ जाते हैं और कुछ अन्य ठिकानों पर परीक्षाफल का इन्तजार करते हैं। इस सबमें कितना रुपया व समय बर्बाद होता है तथा कितनी कठिनाइयों व परेशानियों का सामना करना पड़ता है, अंडमान से बाहर रहने वालों के लिए इसकी कल्पना करना भी संभव नहीं है। यह डिग्री कालेज अब सेन्ट्रल यूनिवर्सिटी पांडुचेरी के साथ सम्बद्ध किया गया है तथा कुछ और विज्ञान के विषय स्नातकोत्तर स्तर पर शुरू किये गये हैं।

बड़े लम्बे समय से द्वीपवासियों की मांग है कि पोर्ट ब्लेयर में एक विश्वविद्यालय की स्थापना की जाये। लोगों की मांग न्यायसंगत प्रतीत होती है क्योंकि जब मुख्य भूमि में एक

ही शहर में एक से अधिक विश्वविद्यालय हों या दूसरे प्रदेशों में 60 किलोमीटर की दूरी पर दूसरा विश्वविद्यालय हो तो एक हजार किलोमीटर की दूरी पर एक पृथक विश्वविद्यालय क्यों नहीं खुल सकता । किन्तु प्रशासन के इस संबंध में अनेक प्रस्ताव सरकारी तंत्र के लालफीता शाही में खो जाते हैं । जैसा कि पहले कहा गया है कि इन द्वीपों में आजादी के बाद लोगों की बाढ़-सी आई । जहां इन परिश्रमी आगन्तुकों नें अपने खून व पसीने से इन द्वीपों में अधिक अन्न उपजाने की दिशाओं में अथक परिश्रम किया, वहां साथ ही वे अपने साथ मुख्य भूमि की संकीर्ण प्रादेशिकता जैसी बुराई भी साथ में लाये । अब यहां पर प्रादेशिक भाषाओं में उच्चतर माध्यमिक स्तर तक बंगाली, तमिल, तेलुगु, आदि भाषाओं के माध्यम से शिक्षा देने की मांग है । यदि केवल एक ही भाषा की बात होती तो संभवतः प्रशासन मान भी लेता किन्तु ऐसा नहीं है । प्रारम्भ में पूर्वी बंगाल के विस्थापितों की मांग पर बंगाली माध्यम से उच्च शिक्षा के लिये रवीन्द्र बंगला उच्चतर माध्यमिक विद्यालय की स्थापना पोर्ट ब्लेयर में की गई । कुछ समय पूर्व तमिल भाषी लोगों की तरफ से भी इसी प्रकार की मांग उठी और पोर्ट ब्लेयर में एक स्कूल खोला गया जिसमें तमिल के माध्यम से शिक्षा दी जाने लगी । देखा-देखी द्वीपों के अन्य भागों से भी इसी प्रकार प्रादेशिक भाषाओं के माध्यम से शिक्षा देने की मांग जन-आन्दोलन के साथ उठने लगी । मध्य अंडमान के रंगत स्थान पर तमिल माध्यम के हाई स्कूल की मांग को लेकर आन्दोलन किया गया तथा स्थानीय नेता ने आत्म दाह की धमकी दी । सरकार को इस मांग को मानना पड़ा और इसी प्रकार की मांग तेलुगु भाषी लोगों की भी माननी पड़ी । इस मांग के औचित्य पर जो दलील इन लोगों द्वारा दी जाती है, उसमें जरूर कुछ बल है । उनका कहना है कि इन द्वीपों में भविष्य में रोजगार मिलने की संभावनाएं सीमित हैं और अन्त में रोजीरोटी के लिए उन्हें अपने प्रदेश के दरवाजे खटखटाने होंगे । यदि उनके बच्चों को राज्य में प्रचलित भाषा का ज्ञान नहीं होगा तो उन्हें काम मिलने में असुविधा होगी । यह वास्तव में बहुत संवेदनशील मामला है, इसका हल राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में ढूंढना होगा ।

इन द्वीपों में खेल-कूद के क्षेत्र में प्रगति की असीम संभावना है । निकोबारी तो इसमें बहुत अधिक रुचि रखते हैं । मुख्यभूमि से दूरी के कारण वे आज तक राष्ट्रीय स्तर पर अपना प्रदर्शन नहीं कर सके । प्रथम बार हाल में वे केरल में हुई राष्ट्रीय खेल-कूद प्रतियोगिता में सम्मिलित हुए तथा एक स्वर्ण, दो चांदी व एक कांस्य पदक जीतने में सफल रहे ।

एक जल क्रीड़ा केंद्र का निर्माण सीपीघाट के समीप भारतीय खेल अधिकरण द्वारा स्वीकृत किया गया, जहां पर इन द्वीपों के युवाओं को राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पानी में खेले जाने वाले खेलों में भाग लेने के लिए प्रशिक्षित किया जायेगा ।

6. जन स्वास्थ्य

कुछ वर्ष पूर्व अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह की यात्रा पर जाने वाले लोगों के लिए संक्रामक रोगों से बचने का अन्तर्राष्ट्रीय टीका लगाने का प्रमाण पत्र होना अनिवार्य

था। इस द्वीप में रहने वाले आदिवासी जरावा, शोम्पेन तथा सन्तनलियों की सुरक्षा के लिए ऐसा किया जाता था क्योंकि इन में इन बीमारियों के लिए असंक्राम्यता नहीं है और न ही वे सभी अभी प्रशासन के संपर्क में हैं। किन्तु इस व्यवस्था से सर्वसाधारण को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था चाहे वे समुद्रयात्रा से आ रहे हों या हवाई जहाज से। अतः इस व्यवस्था को अब समाप्त कर दिया गया है। लेकिन इस दिशा में सचेत रहने की आवश्यकता है। जहां तक अंडमानी व ओंगी आदिवासियों का प्रश्न है, उन्हें स्वास्थ्य विभाग द्वारा उचित संरक्षण दिया जा रहा है।

इन द्वीपों में आबादी के अनुपात से स्वास्थ्य सेवाएं प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं किन्तु ये द्वीप बहुत विस्तृत क्षेत्र में फैले हैं और कुछ द्वीपों की आबादी तो बहुत कम है। इन द्वीपों में 2 जिला चिकित्सालय, 6 ग्रामीण चिकित्सालय, 10 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, 43 उप केन्द्र, एक शहरी स्वास्थ्य केंद्र तथा 28 औषधालय हैं।

इन द्वीपों में मलेरिया, फाइलेरिया, क्षय रोग, आंव, खून, उदर संबंधी रोग तथा श्वास संबंधी बीमारियां पाई जाती हैं। मलेरिया काफी होता है। कुछ समय पूर्व एक खतरनाक किस्म का मलेरिया जो मस्तिष्क पर असर करता था, ग्रेट निकोबार में बहुत फैला, जिससे अनेक लोगों की मृत्यु हुई। ग्रेट निकोबार में एक अनोखी जाति के बन्दर पाये जाते हैं। ऐसा शक किया जा रहा था कि संभवतः यह रोग इन्हीं बन्दरों द्वारा फैल रहा है। विश्व स्वास्थ्य संघ से कुछ विशेषज्ञ यहां पर आए किन्तु वे इस बात की पुष्टि न कर सके, बीमारी पर कुछ दिनों बाद काबू पा लिया गया था। फाइलेरिया का रोग होना आम बात है। क्षय रोग भी काफी होता है।

इन बीमारियों की रोकथाम के लिये यहां पर 121 चिकित्सक, 178 नर्सें, 100 कम्पाउन्डर तथा अन्य सफाई व स्वास्थ्य कर्मचारी हैं।

इन द्वीपों में चिकित्सकों की नियुक्ति एवं स्थानान्तरण की एक विकट समस्या रही है। मुख्य भूमि के अधिकांश लोगों के दिल व दिमाग पर कालापानी का भयावह रूप उन्हें अभी भी भयभीत करता है और जिस चिकित्सक की भी यहां के लिए नियुक्ति होती या स्थानान्तरण होता, वह उसे एक गंभीर सजा समझता और जी तोड़कर इन आदेशों को निरस्त कराने का प्रयत्न करता। अब स्थिति पहले जैसी नहीं रही। सारी समस्याओं को ध्यान में रखकर एक सही नीति अपनाई गई है। अब कुछ थोड़े से निर्धारित समय तक इन क्षेत्रों में काम करने के पश्चात चिकित्सकों को सुविधा है कि उनकी अगली नियुक्ति उनकी इच्छानुसार की जायेगी। इस समस्या का पक्का हल ढूंढने की दृष्टि से इन द्वीपों के प्रतिभावान छात्रों को मुख्य भूमि के मेडिकल कालेजों में इस शर्त पर भेजा गया कि उत्तीर्ण होने पर कम से कम पांच वर्ष तक वे इन द्वीपों में काम करेंगे। अब बहुत से चिकित्सालयों तथा औषधालयों में रिक्त पदों की पूर्ति इन लोगों द्वारा हो रही है और इस समस्या का काफी समाधान हो गया है।

अधिकांश चिकित्सालयों में एक्सरे की मशीनें रख दी गईं जो कि यहां के लोगों की एक प्रमुख मांग थी । पोर्ट ब्लेयर में एक क्षय रोग का चिकित्सालय भी है । दूर दराज के द्वीपों में अक्सर केवल एक कम्पाउन्डर ही काम की देख-रेख करता है । यदि कभी कोई रोगी गंभीर रूप से बीमार हो जाये तथा उसे समीप के किसी चिकित्सालय में ले जाना संभव न हो तो वह बेतार के तार पर बीमारी के लक्षण भेज कर पोर्ट ब्लेयर के विशेषज्ञ चिकित्सकों से उचित मार्ग दर्शन मांगता है । यदि फिर भी रोगी में सुधार न हो तो उसे समीप के चिकित्सालय में भिजवाने की व्यवस्था नाव द्वारा की जाती है । यदि पास में कोई जहाज़ हो तो उसे भी रोगी को पहुँचाने के संदेश दिये जा सकते हैं । इस समस्या के समाधान के लिए एक हॉस्पिटल-कम-सप्लाई, पानी के जहाज 'ट्रिन्केट' की सेवाएं मिल गई हैं, जो विभिन्न द्वीपों का चक्कर लगाता रहेगा । इन द्वीपों में हेलीकाप्टर सेवा के चलने से स्थिति काफी सुधर गई है ।

इन द्वीपों में पेय जल की समस्या भी है । पोर्ट ब्लेयर शहर की पेयजल की समस्या 1974 में धनाखड़ी बांध के बन जाने से काफी सुलझ गई है किन्तु समीप के ग्रामों में ग्रीष्म ऋतु में विकट समस्या हो जाती है जबकि ट्रकों की मदद से जल वितरण करना पड़ता है । यद्यपि इन द्वीपों में वर्षा का वार्षिक औसत बहुत अधिक है किन्तु विशेष रूप से फरवरी व मार्च के महीने में सूखा रहता है तथा पेय जल की कमी हो जाती है । जांच पड़ताल के बाद प्रशासन को पता चला कि 390 ग्रामों में से 197 ग्रामों में पेयजल की समस्या है । जिसमें 149 ग्राम बृहद अंडमान में हैं तथा शेष 48 निकोबार द्वीप समूह में हैं । इन ग्रामों की पेयजल योजनाएं कार्यान्वित की जा रही हैं तथा प्रशासन सभी 491 ग्रामों में पेयजल योजनाएं सम्पादित करने के लिए दृढ़ संकल्प है ।

7. जहाज रानी

कैदी बस्ती के प्रारम्भिक काल में इन द्वीपों में तथा कलकत्ता के बीच एक ऐतिहासिक जहाज "महाराजा" चलता था, इसी में देश के अनेक स्वतंत्रता-सेनानी इन द्वीपों में लाये गए । बाद को यह सेवायें काफी अस्त व्यस्त हो गईं । एक समय ऐसा था जब कि एक माह में केवल एक बार जहाज आता था । जब भी यह जहाज आता सारे पोर्ट ब्लेयर में हलचल हो जाती । सारे दफ्तर उजाड़ हो जाते क्योंकि सारा शहर जहाज घाट (जेटी) पर पहुंच जाता था । देश के विभिन्न प्रदेशों से इन द्वीपों में वैसे लोग अपनी मातृभूमि की स्मृति में विह्वल रहते । जैसे ही कोई व्यक्ति, जो उनके विचार से उनके क्षेत्र का हो सकता था, जहाज से उतरता वे तुरन्त उसको गले लगाते भले ही वे उसको न जानते हों । वे उसको अपने घर ले जाते और उसका एक विशिष्ट अतिथि के रूप में सत्कार करते तथा उससे अपने "मुल्क" (स्वदेश) के समाचार पूछते । अपने घर परिवार तथा इलाके के समाचार जानने का उनके पास कोई और साधन भी तो नहीं था ।

अब इन द्वीपों तथा मुख्य भूमि के बीच जहाज रानी की सेवाओं में बहुत अधिक सुधार

हो गया है लेकिन आम लोगों की दृष्टि में अब भी वह पूर्ण सन्तोषजनक नहीं है और वे मांग करते हैं कि और अधिक जहाज इन द्वीपों तथा कलकत्ता व मद्रास के बीच चलें। द्वीपों की बढ़ती आबादी, आर्थिक व व्यापारिक गतिविधियां, स्कूल, विद्यालयों के बन्द होने तथा खुलने पर अध्यापकों का सामूहिक रूप से मुख्य भूमि जाना-आना तथा पर्यटकों की नित्य बढ़ती संख्या ये सब मिलकर कभी-कभी समस्या को नियंत्रण के बाहर कर देते हैं। अक्सर स्थानीय जन-साधारण के लिए मुख्य भूमि जाने के लिए जहाज में स्थान मिलना कठिन हो जाता है। टिकट न मिलने पर यात्रियों द्वारा प्रदर्शन पोर्ट ब्लेयर में आम बात है। जहाज के आने जाने के कार्यक्रम में किसी दुर्घटना या जहाज के खराब होने से या वार्षिक मरम्मत के लिए सिंगापुर जाने के कारण गड़बड़ी होने से सैकड़ों यात्री फंसे रह जाते हैं।

कुछ समय पूर्व इन द्वीपों तथा मुख्य भूमि के बीच तीन मुख्य बड़े पानी के जहाज 'एम. वी. अंडमान', 'एम. वी. हर्षवर्द्धन', व 'टी. एस. एस. नानकोरी' थे। चूंकि 'अंडमान' अपनी निर्धारित आयु पूरी कर चुका है अतः उसकी जगह पर हाल में 'एम. वी. अकबर' मुगल लाइन्स से नौ करोड़ की कीमत पर खरीदा गया है। चूंकि अभी 'अंडमान' भी काम दे रहा है अतः स्थिति काफी सन्तोषजनक है।

वर्ष में लगभग एक लाख से अधिक मुसाफिर इन सेवाओं का आवागमन के लिए प्रयोग करते हैं। इन जहाजों में यात्रियों के लिए केबिन व बंक तथा एक सीट का किराया निम्न तालिका में दिया गया है।

जहाज का नाम	*संख्या*		*कैबिन शुल्क (रुपये में) व श्रेणी*				*बंक शुल्क*
	कैबिन	*बंक*	*डीलक्स*	*ए*	*बी*	*सी*	
1	2	3	4	5	6	7	8
एम. वी. हर्षवर्द्धन	153	596	558	513	389	355	100
टी. एस. एस. नानकोरी	295	608	558	500	389	355	100
एम. वी. अकबर	80	1495	558	500	250	100	69
एम. वी. अंडमान	66	552	513	500	483	389	69

हर्षवर्द्धन जहाज पूर्ण रूप से वातानुकूलित है और अन्य जहाज आंशिक रूप से हैं। माल ढोने के लिए दो मालवाहक जहाज "एम. वी. दिगलीपुर" तथा "शोम्पेन" हैं, जिनकी क्रमानुसार क्षमता 5700 टन एवं 3500 टन है जो साल में क्रमानुसार पांच व नौ चक्कर लगाते हैं। इन दोनों जहाजों द्वारा एक साल में कुल 52,308 टन माल इन द्वीपों से बाहर भेजा गया तथा 22,330 टन माल लाया गया। दो अन्य मालवाहक जहाज 'एम. वी.

विश्वशक्ति' तथा 'विश्वनदी' माल ढोने के लिए प्रयुक्त हो रहे हैं।

भारतीय जहाजरानी निगम पर इस बात के लिए निरन्तर दबाव डाला जा रहा है कि वह जहाजरानी की सेवाओं में सुधार लाए। कभी-कभी यह मांग संसद में भी उठाई जाती है। किन्तु जहाजरानी निगम का रुख विशेष उत्साहवर्द्धक नहीं है। उसका मुख्य कारण है इन द्वीपों में जहाजरानी सेवा चलाने में आर्थिक नुकसान। ऐसा कहा जाता है कि औसतन एक यात्री पर करीब आठ सौ रूपये का नुकसान होता है। यद्यपि इन सेवाओं को चलाने में निगम का जो भी आर्थिक नुकसान होता है उसकी पूर्ति प्रशासन द्वारा की जाती है फिर भी वे इस दिशा में उदासीन है।

दूसरी तरफ द्वीपवासी समझते हैं कि उन्हें आवागमन की उचित सुविधायें न देकर सरकार उनके साथ सौतेला व्यवहार कर रही है। उनका कहना है कि संसार में यात्री पानी के जहाज शायद ही कहीं पर लाभ में चलते हों, किन्तु यह तो उनके जीवन का मुख्य अंग है और भारत के नागरिक होने के कारण उनका यह संवैधानिक अधिकार है कि उन्हें देश में एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाने की सुविधा उपलब्ध हो। उनके अनुसार स्वांस्थ्य आदि सेवाओं की तरह यह भी आवश्यक सेवा मानी जाये और इसके व्यावसायिक पहलू पर ध्यान न दिया जाये। अपनी इस दलील की पुष्टि में वे उत्तर पूर्वी प्रदेश का उदाहरण देते हैं जहां पर कि रेल, मोटर यहां तक कि हवाई सेवा में भी व्यावसायिक पक्ष की बिल्कुल उपेक्षा की जाती है। सरकार द्वीप वासियों की समस्याओं के प्रति जागरूक है और इसी कारण "अकबर" जहाज को खरीदा गया है। अभी इसी प्रकार के तीन और जहाजों को खरीदने के आदेश दे दिये गये हैं। वर्तमान में एक जहाज 'एन ए जे डी II' भाड़े पर लिया गया है, जिससे काफी राहत मिल रही है।

इन द्वीपों का जन-जीवन, विशेष रूप से पोर्ट ब्लेयर का पूर्ण रूप से जहाजरानी की सेवाओं पर आश्रित है। जहाज के कार्यक्रम में जरा भी गड़बड़ी से सारा जीवन अस्त व्यस्त हो जाता है और विभिन्न पदार्थों की कीमतें इतनी बढ़ जाती हैं कि साधारण आदमी उन्हें खरीद ही नहीं सकता। चालाक व्यापारी वर्ग ऐसे सुअवसर की बड़ी उत्सुकता से बाट जोहता है क्योंकि जल्दी अमीर बनने का यही एक मौका होता है। कलकत्ता तथा मद्रास के मुख्यालय जहाजरानी की गतिविधियों पर पूरी नजर रखते हैं तथा खराब मौसम या कोई छोटी दुर्घटना या अन्य किसी कारण जहाज के चलने में विलम्ब होने की सूचना टेलीफोन द्वारा पोर्ट ब्लेयर में तुरन्त दे दी जाती है। रातों रात सामान खुले बाजार से गायब हो जाता है और कीमतें आसमान को छूने लग जाती हैं। यदि जहाज अपने समय से चल रहा हो तब भी वे जहाज में लादे गये माल का विवरण भेज देते हैं ताकि पोर्टब्लेयर में बाजार की स्थिति के अनुसार कीमतों में उचित फेर बदल हो सके।

पोर्ट ब्लेयर में जिस दिन जहाज पहुंचता है वह शाम बहुत रंगीन होती है। उस शाम प्रत्येक घर में अक्सर जहाज द्वारा लाई गई एक नयी सब्जी अवश्य बनती है तथा लोग

आवश्यक सामान खरीद लेते हैं। जहाज द्वारा आये हुए सामान का विवरण कुछ ही समय में बिजली की गति से सर्वत्र फैल जाता है और गृहणियों को बात करने के लिए एक रोचक विषय मिल जाता है।

मुख्य भूमि तथा द्वीपों के बीच जहाजरानी की सेवाएं जहां जहाजरानी निगम द्वारा संचालित होती हैं वहीं द्वीपों में अन्तर्द्वीपीय जहाजरानी सेवाओं का नियंत्रण स्वयं प्रशासन द्वारा मेरीन विभाग की देख रेख में किया जाता है। हिन्द महासागर के एक विस्तृत भाग में अंडमान व निकोबार द्वीप समूह फैले हुए हैं और एक द्वीप से दूसरे द्वीप में आने-जाने में बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है विशेष रूप से दक्षिण के द्वीप समूहों से आवागमन में। अंडमान द्वीप समूह को विश्व की सबसे चंचल, उत्पाती व खतरनाक दस डिग्री स्थित समुद्र की तेज जल धारा, निकोबार द्वीप समूह से पृथक करती है। समुद्री यातायात के नियमानुसार केवल मज़बूत जहाजों व नावों को ही इस जलान्तराल को पार करने की अनुमति है जिनकी क्षमता निर्धारित की गई है। प्रशासन के पास ऐसे जहाजों व नावों की काफी कमी है।

प्रशासन के पास दक्षिण के द्वीपों में आने-जाने के लिए दो छोटे जहाज हैं। जिनके नाम "यारवा" व "ओंगी" हैं। ग्रेट निकोबार में भूतपूर्व सैनिकों की पुनर्वास बस्ती तथा अन्य द्वीपों की नयी बस्तियों से रक्षा कर्मचारियों के इन द्वीपों में आने-जाने के फलस्वरूप ये दो जहाज इस बढ़ते हुए आवागमन की पूर्ति नहीं कर सके जिसके कारण यहीं के निवासियों में काफी असंतोष था। मजगांव डाक ने दो छोटे जहाज "सन्तनली" और "चौरा" तैयार किये तथा इनके आ जाने से एक लम्बे समय से चली आ रही मांग की पूर्ति हुई और इससे आवागमन की सुविधा बढ़ी है।

एक द्वीप से दूसरे द्वीप में जाने वाली लिटिल अंडमान, दक्षिण अंडमान, मध्य अंडमान तथा उत्तरी अंडमान नौका सेवाएं भी पूर्ण रूप से सन्तोषजनक नहीं हैं। इनमें से कई द्वीपों में शाक-सब्जी, दूध तथा दूध की बनी चीजें प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। विशेष रूप से लिटिल अंडमान, नील तथा हैवलोक के द्वीपों में। यहां के द्वीपवासी इन चीजों को पोर्ट ब्लेयर में बेचने के लिए इन्हें नाव घाट (जेटी) पर लाते हैं किन्तु अक्सर नौकाओं का आने का कार्यक्रम रद्द हो जाने से इन गरीब कृषकों को मजबूरी में इन वस्तुओं को समुद्र में फेंकने के अलावा और कोई चारा नहीं रहता। ये वस्तुएं जल्दी खराब हो जाती हैं इन्हें न तो अधिक समय तक रखा जा सकता है और न वापस ही ले जाया जा सकता है। इससे लोग दुखी हो जाते हैं तथा उनमें शासन के प्रति कटुता आ जाती है। यह कितनी बड़ी विडंबना है कि पोर्ट ब्लेयर में उपरोक्त वस्तुओं की कमी के कारण एक ओर तो इन्हें कलकत्ता व मद्रास से मंगाया जाता है दूसरी ओर कुछ ही किलोमीटर की दूरी पर स्थित नेल तथा हैवलोक द्वीपों में इन्हें समुद्र में फेंकना पड़ता है।

इस बात की आवश्यकता है कि अंतर्द्वीपीय नौका सेवाओं के लिए पोर्ट ब्लेयर में एक

पृथक जहाजरानी निगम की स्थापना हो क्योंकि अब और अधिक निर्जन द्वीपों में भी बस्तियां बन रही हैं। यह निगम अंतर्द्वीपीय नौका सेवाओं में सुधार लाने के अतिरिक्त पुरानी नौकाओं को बदलने का काम तथा अन्य समस्याओं को सुलझाने का काम भी कर सकता है, यहां तक कि निगम बंदरगाह प्रबंध का काम भी कर सकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रशासन भी अब स्थिति की गंभीरता के प्रति जागरूक है और इस दिशा में संभवत: कुछ ठोस कदम निकट भविष्य में लिये जायेंगे।

प्रशासन के पास एक वातानुकूलित छोटा जहाज "तारमुगली" है। यद्यपि यह प्रशासन की आम सुविधा के लिए था किन्तु व्यवहारिक रूप में यह विभिन्न मुख्य आयुक्तों तथा उपराज्यपाल की व्यक्तिगत संपत्ति बन कर रह गया है। इसे सफेद हाथी कहा जाता है क्योंकि यह अक्सर बेकार खड़ा रहता है। केवल उसके रख-रखाव पर हजारों रूपया प्रतिदिन खर्च होता है। भले ही वह समुद्र में नहीं जा रहा हो। अब एक राजनीतिक ढांचा भी खड़ा हो गया है। कालांतर में पार्षद् लोग भी इसके प्रयोग की मांग करेंगे, जिससे परस्पर मनमुटाव व खींचा-तानी हो सकती है। इसमें कुछ सुधार कर इसको विदेशी पर्यटकों को अच्छे किराये पर दिया जा सकता है जिससे यहां पर आने वाले पर्यटकों की संख्या में वृद्धि हो सकती है और जिन दिनों पर्यटक नहीं आते उस समय प्रशासन इसका प्रयोग कर सकता है। वन विभाग के पास भी विभागीय अधिकारियों के प्रयोग के लिए एक नौका "सागर दुलाल" है तथा प्रशासन के पास एक अन्य नौका आदिवासियों से संपर्क करने के लिए है, जिसे "मिलाली" कहते हैं। सबसे दूर स्थित कैम्पल बे तक अब द्रुत गति से चलने वाले वाहनों को चलाने के प्रस्ताव पर विचार हो रहा है जिसमें डोरनीयर सेवा चलाने का प्रस्ताव है जो पोर्ट ब्लेयर, कार निकोबार व कैम्पल बे के बीच चलेगी। इसी प्रकार समान रूप से जल व थल में चलने वाले वाहन अन्य द्वीपों के लिए भी शुरू किए जायेंगे।

पोर्ट ब्लेयर तथा मुख्य भूमि के बीच चलने वाले जहाजों तथा अंतर्द्वीपीय छोटे जहाजों से नौकाओं के लिए ठहरने का उचित स्थान बनाने तथा माल लादने, उतारने व रखने के लिए बंदरगाह पर इन सुविधाओं का होना, इन सेवाओं में सुधार लाने की दृष्टि से, नितान्त आवश्यक है। अब यह काम अंडमान हारबर वर्क के तत्वाधान में, जो कि केन्द्रीय जहाजरानी मंत्रालय का अंग है, किया जा रहा है। इसका गठन एक मात्र इसी उद्देश्य से किया गया है कि बन्दरगाह पर जहाजों के आने-जाने की सुविधा के लिए वे आवश्यक निर्माण कार्य करें। प्रकृति ने इन द्वीपों को अनेक सुन्दर बन्दरगाह दिये हैं, जो तूफानों से पूर्णतया सुरक्षित हैं तथा जहां किनारे तक समुद्र काफी गहरा है। किसी भी बन्दरगाह पर मशीनी उपकरणों से रेत हटाने की आवश्यकता नहीं पड़ती केवल कैम्पल बे पर जहां संभवत: ऐसा करना पड़े यदि बड़े जहाज वहां आयें। कुछ स्थानों पर बन्दरगाह को तूफानों से बचाने के लिए एक कृत्रिम बांध की आवश्यकता है, जो लहरों को तोड़ सके उनमें प्रमुख स्थान हैं हट बे (लिटिल अंडमान) तथा कैम्पल बे (ग्रेट निकोबार) रंगत (मध्य अंडमान) तथा मूस

(कार निकोबार), हट बे में यह काम 1977 में पूरा हो गया और कैम्पल बे में भी यह काम शीघ्र पूरा हो जायेगा ।

मुख्य भूमि से आने-जाने वाले जहाजों तथा अंतर्द्वीपीय जहाजों व नौकाओं के रुकने की व्यवस्था क्रमानुसार पोर्ट ब्लेयर में हाडो तथा फिशरी जेटी पर की गई है । सामान चढ़ाने व उतारने के उपकरण हाडो तथा हट बे में दिये गए हैं ।

पोर्ट ब्लेयर में हाल ही में राष्ट्रपति ने निर्जल गोदी (ड्राई डौक) व अवतरण मंच (स्लिपवे) का उद्घाटन किया था, इससे जहाजरानी की सेवाओं में काफी सुधार होने की आशा है । अब जहाजों की छोटी व बड़ी सभी प्रकार की मरम्मत का काम पोर्ट ब्लेयर में हो सकेगा । इसके अतिरिक्त जहाजों की समय-समय पर जांच तथा वार्षिक निरीक्षण भी यहां हो सकेगा तथा किसी दुर्घटना के कारण जल्दी में आवश्यक मरम्मत भी की जा सकती है । इससे पूर्व ये सब काम कलकत्ता में हुआ करते थे ।

इन द्वीपों के विकास के कारण अंडमान व निकोबार द्वीप समूह में जहाजों के आवागमन की सुरक्षा के लिए आवश्यक तथा प्रदर्शन उपकरणों की विशेष आवश्यकता थी । चूंकि यह क्षेत्र अन्तर्राष्ट्रीय जहाजरानी के मार्ग में पड़ता है अत: उनके मार्ग दर्शन के लिए भी ये उपकरण उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं । लाइट हाउस व लाइट शिप के विभाग ने यह दुरूह कार्य बड़ी लगन व तत्परता से किया । इसके कर्मचारियों ने दुर्गम तथा सांपों से भरे स्थानों में जान हथेली पर रखकर आंधी व तूफान में समुद्र की बड़ी-बड़ी लहरों के थपेड़े सहकर ये समुद्री मार्ग सूचक यंत्र स्थापित किये । विभाग के "सागर द्वीप" जहाज ने निर्माण सामग्री विभिन्न स्थानों तक पहुंचाने तथा इन प्रकाश गृहों के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । कुल दस प्रकाश गृह, सात स्थानीय प्रकाश स्तंभ तथा दस बिना प्रकाश के तैरते हुए पीपे हैं । ये अन्तर्राष्ट्रीय मार्ग पर चलने वाले जहाजों के लिए भी बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं विशेष रूप से तूफानी मौसम में । भारत का दक्षिणी छोर, जिसे पहले पिगमैलियन पाइन्ट कहा जाता था, वह इन्दिरा पाइन्ट के नाम से जाना जाता है, इसी मार्ग के समीप पड़ता है और इसी के समीप गलतिया नदी भी बहती है । पिगमैलियन एक राजा था जो हाथी दांत से स्वनिर्मित एक परी-सी सुन्दरी की मूर्ति पर इतना मोहित हो गया कि उसकी प्रार्थना पर भगवान ने उसे जीवन दे दिया जिसको उसने परिणय सूत्र में बांध लिया । गलतिया दूध की तरह सफेद जल परी थी जिसने अपने मारे गये प्रेमी को नदी के रूप में परिणत कर दिया । यहां पर वे दो नाम इस सुन्दर व परम रमणीय क्षेत्र में दिव्य व अलौकिक अनुभूति पैदा करते हैं । सारा वातावरण संगीतमय है । इन्दिरा पाइन्ट पर निर्मित प्रकाश स्तंभ से अपनी धुरी पर घूमती प्रकाश किरणें सुदूर सुमात्रा तक जहाजों का पथ आलोकित करती हैं । आंधी-तूफान में फंसे जहाज सभी इसी प्रकाश स्तम्भ के सहारे अपने मार्ग पर चल पाते हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि मानो वे सब वैदिक मंत्रों का उच्चारण करते हुए पुकार रहे हों ।'मां मुझे अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चलो, तमसो मा ज्योतिर्गम्य ' ।

हाल के वर्षों में आधुनिकतम उपकरण विकिरण संकेतक (रेडियो वीकन्स) एक कार निकोबार के कीटिंग पाइन्ट स्थित प्रकाश गृह में तथा दूसरा ईस्ट आइलैंड के प्रकाश गृह में है जिसमें 500 वाल्ट की क्षमता की बिजली प्रयुक्त होती है और जो हर मौसम व हर दिशा में 500 किलोमीटर की दूरी पर प्रकाश किरणें फेंकता है । यह उपकरण आधुनिकतम वैज्ञानिक तकनीक से युक्त है । यह पूर्णतया स्वचालित है तथा किसी भी हालत में इसमें कोई गड़बड़ी नहीं आ सकती ।

8. सड़क तथा परिवहन

अंग्रेजी शासन काल में प्रशासन की अधिकांश गतिविधियां केवल पोर्ट ब्लेयर या दक्षिण अंडमान द्वीप पर केन्द्रित रहीं । अधिकांश सड़कों का निर्माण यहां लाए गए स्वतंत्रता-सेनानियों तथा अन्य कैदियों द्वारा किया गया, क्योंकि बहुत बड़ा मजदूर दल मुफ्त में काम करने के लिए सुलभ था । जापान के अधिपत्य के समय इस तरफ कुछ और अधिक ध्यान दिया गया । इस बात को देखते हुए कि उनका कार्य काल बहुत कम रहा, उस पर भी उनके ऊपर युद्ध के बादल मंडरा रहे थे, फिर भी सड़कें बनाने में उन्होंने बहुत बड़ा योगदान दिया ।

देश की आजादी के पश्चात सारे अंडमान व निकोबार द्वीप समूह में योजना बद्ध ढंग से सड़कों का जाल-सा बिछा दिया गया है । उसका एक कारण यह भी था कि विभिन्न पुनर्वास योजनाओं के अन्तर्गत इन द्वीपों को दिस्थापितों को बसाने के लिए चुना गया था । कई नए द्वीपों में पहली बार लोग बसे, जिससे वहां पर विकास के लिए आवश्यक कदम उठाने के लिए उचित पृष्ठ भूमि आवश्यक थी । इन द्वीपों के द्रुत विकास के लिए जल तथा थल की एक समन्वित यातायात योजना बहुत आवश्यक बन गई, न केवल आवश्यक सेवाएं बनाए रखने के लिए वरन् द्वीपों में व्यवसाय व व्यापार को बढ़ाने के लिए भी, जिससे कि ग्रामीण व शहरी जीवन-स्तर की विषमता मिट सकती है ।

"अंडमान ग्रेन्ड ट्रन्क रोड" सड़कों की विस्तार योजना की सबसे महत्वपूर्ण सड़क है । इस सड़क ने बृहद अंडमान के चार बड़े द्वीपों, दक्षिण अंडमान, बाराटांग, मिडिल अंडमान तथा उत्तरी अंडमान को आपस में मिलाना है ताकि यात्री पोर्ट ब्लेयर (दक्षिण अंडमान) से दिगलीपुर (उत्तर अंडमान) तक 343 किलोमीटर की दूरी तय कर सकें । इस सड़क के उपयोग के लिए विभिन्न द्वीपों के बीच आने वाली जल धारा को बड़ी नाव में मोटर गाड़ी को लादकर तारण की व्यवस्था है, जिसे फेरी सर्विस कहा जाता है । प्रारम्भ में सड़क का काम पूरे जोर-शोर से चला किन्तु उसके बाद काम ठप्प पड़ गया । सड़क को जरावा आदिवासियों के सुरक्षित क्षेत्र के बीच से होकर जाना था । जरावा लोगों को यह बात बिल्कुल पसन्द नहीं थी कि उनके शान्त जीवन में इस प्रकार का कोई हस्तक्षेप हो । उन्होंने बुलडोजर के ड्राइवर को तीर फेंक कर मार दिया । आगे का काम भारत सरकार के आदेश से रोक देना पड़ा तथा लगभग पांच वर्ष तक यह मामला समाज शास्त्रियों, मानव

शास्त्रियों, अंडमान प्रशासन तथा भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों के बीच विशेष चर्चा का विषय बना रहा। एक संयुक्त उच्च स्तरीय दल ने घटना स्थल का निरीक्षण किया, चूंकि बाकी कई टुकड़ों में सड़क का काम पूरा हो चुका था, जिसमें तारण-सेवा का काम भी सम्मिलित था। इस बात का निर्णय लिया गया कि बिना जरावों को अधिक छेड़छाड़ किये कार्य पूरा कर लिया जाये। इस प्रकार बस एवं तारण-सेवा द्वारा पोर्ट ब्लेयर को मायाबन्दर से जोड़ने का उद्घाटन समारोह इन द्वीपों के यातायात के इतिहास में एक महान कदम है। ग्रेन्ड ट्रन्क रोड की प्रगति विभिन्न द्वीपों में निम्न प्रकार है :-

ग्रेन्ड ट्रन्क रोड	*द. अंडमान*	*बाराटांग*	*म. अंडमान*	*उ. अंडमान*	*योग*
सड़क की लम्बाई	110	22	122	89	343
तैयार सड़क की लम्बाई	110	22	122	33	287

अब यह सारी योजना सीमान्त सड़क संस्थान को सौंप दी गयी है जिसने ग्रेट निकोबार में बहुत अच्छा कार्य किया।

दूसरी योजना ग्रेट निकोबार की थी जहां पर सीमान्त सड़क संस्थान ने उत्तर से दक्षिण तथा पूर्व से पश्चिम की दो बड़ी योजनाओं का काम हाथ में लिया था क्योंकि यहां पर चालीस किलो मीटर उत्तर-दक्षिण सड़क के किनारे बड़ी संख्या में भूतपूर्व सैनिकों का पुनर्वास किया गया था। एक अन्य प्रस्ताव के अनुसार पश्चिमी तट पर और अधिक भूतपूर्व सैनिकों को बसाने की योजना थी। तदनुसार यह निश्चय किया गया कि 11000 एकड़ बंजर भूमि को आबाद किया जाये। इसके लिए आवश्यक था कि पूर्व पश्चिम सड़क का निर्माण किया जाये। यह सड़क ऊंची पहाड़ियों व गहरे नालों के बीच लगभग सात करोड़ रूपये की लागत से बड़े परिश्रम, लगन व अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए बनाई गयी। इसी बीच किसी ने तत्कालीन प्रधान मंत्री को लिखा कि यदि पश्चिमी तट पर लोग बसाये गये तो इससे पर्यावरण बिगड़ जायेगा। इससे यह योजना रूक गई तथा विशेषज्ञों के एक दल से कहा गया कि वे इस समस्त क्षेत्र के पर्यावरण के मामले का अध्ययन कर अपनी संस्तुति दे।

सारे अंडमान व निकोबार द्वीप समूह में 722 किलोमीटर पक्की व 57 किलोमीटर कच्ची सड़क पूरी कर दी गई है और 37 किलोमीटर सड़क पर काम प्रगति पर है। प्रारम्भ में प्रशासन के पास केवल पांच छोटी मोटर गाड़ियां थीं, जो पैट्रोल से चलती थीं। पिछले कुछ वर्षों में इनमें धीरे-धीरे वृद्धि होती गई और इस समय राज्य परिवहन सेवा के अन्तर्गत 113 मोटर गाड़ियां प्रति दिन नौ हजार किलोमीटर की दूरी पूरी कर आठ द्वीपों में चल रही हैं। यातायात संबंधी वाहनों की स्थिति इस प्रकार है :-

मोटर साइकिल और स्कूटर	*ट्रक*	*टैक्सियां*	*बसें*	*कार व जीप*	*अन्य*
2,297	845	123	172	1,208	50

लोगों की बढ़ती हुई मांग को देखते हुए और अधिक बसें खरीदने का प्रस्ताव है। विदेशी पर्यटकों की आवश्यकता की पूर्ति के लिए दो अत्यलंकृत गाड़ियां भी शीघ्र लाई जायेंगी।

9. वायु सेवा

सन् 1977 तक कलकत्ता व पोर्ट ब्लेयर के बीच केवल एक हफ्ते में दो बार "वाइकाउन्ट" हवाई जहाज की सेवा उपलब्ध थी। इस छोटे जहाज में अधिक पैट्रोल रखने की क्षमता नहीं थी। अतः हवाई उड़ानें रंगून होकर आती जाती थीं। ताकि वहां पर वह अतिरिक्त पैट्रोल भर सके। इसका एक सुरक्षित पक्ष भी था यदि मौसम की खराबी के कारण हवाई जहाज पोर्ट ब्लेयर न उतर सके तो वह रंगून लौट कर आ सकता था। इसके कारण अन्तर्राष्ट्रीय उड़ानों की पास पोर्ट, स्वास्थ्य प्रमाण पत्र, आदि सभी औपचारिकताएं पूरी करनी पड़ती थीं जिसके कारण जन-साधारण के लिए आना-जाना बहुत कठिन समस्या थी। इन द्वीपों में "बोइंग" हवाई जहाज की सेवा उपलब्ध कराने का प्रस्ताव भारत सरकार के पास बहुत समय से विचाराधीन था किन्तु उसे लागू करने में कुछ खतरा था। पोर्ट ब्लेयर के हवाई मैदान पर उड़ने व उतरने के लिए केवल एक ही दिशा थी क्योंकि दूसरी ओर ऊंची पहाड़ी थी। इसके अलावा हवाई अड्डे की लम्बाई भी इस जहाज के लिए निर्धारित लम्बाई से कुछ कम थी। अतः बोइंग सेवा उपलब्ध कराने के लिए निश्चय किया गया कि बोइंग हवाई जहाज पर छोटे वायवीय टायर (न्यूमैटिक टायर) लगा दिये जायें। इस फेरबदल के बाद 1977 के अन्त तक बोइंग सेवाएं इन द्वीपों को उपलब्ध हो गईं तथा कलकत्ता और पोर्ट ब्लेयर के बीच वायु सेवा शुरू हो गई। इसके कारण बहुत शीघ्र ये द्वीप विश्व के पर्यटन के नक्शे में आ गये और यहां आने वाले पर्यटकों की संख्या में बहुत वृद्धि हो गई। भारतीय विमान सेवा कलकत्ता तथा मद्रास से सप्ताह में पोर्ट ब्लेयर के लिए लगातार आठ दिन सेवाएं उपलब्ध करा रही है। शीघ्र ही दिल्ली तथा पोर्ट ब्लेयर के बीच भी एक सीधी उड़ान होगी। यह भी संभव है कि आने वाले वर्षों में कार निकोबार एक अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा बन जाये जहां से लोग बैंकाक या सिंगापुर जा सकें। पोर्ट ब्लेयर व कार निकोबार के बीच वायुदूत की सेवाओं की भी मांग की जा रही है।

हैलीकॉप्टर की सेवाएं उपलब्ध होने से सुदूर विभिन्न द्वीपों में रहने वाले लोगों को एकाकी जीवन की कटुता से छुटकारा मिला है। अब डाक सेवा भी हैलीकॉप्टर द्वारा उपलब्ध है जो लोगों को अपने परिजनों की कुशल क्षेम प्राप्त करने में वरदान सिद्ध हो रही है। सुदूर

कैम्पल बे को द्रुत गति के आवागमन के साधनों से जोड़ने का प्रस्ताव है जिसमें एक स्थिर पर वाली 'डोरनीयर' सेवा चलाने की व्यवस्था भी शामिल है ।

हवाई जहाज चलाने के लिए एक प्रशिक्षण केंद्र भी, निकट भविष्य में, इन द्वीपों में खोला जा रहा है ।

10 व्यापार व वाणिज्य

निकोबार द्वीप समूह में नारियल की बहुत अच्छी पैदावार होती है और यहां की पूरी आर्थिक व्यवस्था केवल इसी पर टिकी है । निकोबारी जनजाति के लोग एक मजबूत सामाजिक व्यवस्था में गुथे हुए हैं और उन्होंने सरकारी संघ की भी स्थापना की है । उनकी सभी आवश्यक वस्तुएं भी उन्हें इसी समिति द्वारा उपलब्ध कराई जाती हैं । सुन्दर प्रबन्ध, सामुदायिक जीवन तथा जनजाति के आन्तरिक कड़े अनुशासन के कारण वे इन सहकारी संस्थाओं को लाभ पर चलाने में समर्थ हुए हैं ।

आजादी के बाद जादवेद ट्रेडिंग कंपनी ने सम्पूर्ण निकोबार द्वीप समूह के समस्त व्यापार पर ऐसा एकाधिकार जमाया कि स्वयं प्रशासन को अपने कर्मचारियों को खाने-पीने की दिन प्रति दिन की आवश्यक सामग्री देने के लिए इस कंपनी पर निर्भर रहना पड़ता था । पहले निकोबार द्वीप समूह में कुछ चीनी व्यापारी व्यापार करते थे । किन्तु जापान द्वारा इन द्वीपों पर अधिपत्य जमाने के बाद अधिकांश व्यापारी भाग गये और जो रह गये, देश की आजादी के बाद वे भी चले गये और इस रिक्त स्थान को जादवेद कंपनी ने भर लिया । कंपनी ने निकोबारी जनजाति को सामान देने तथा उनके नारियल, शैल तथा अन्य समुद्री व वस्तुओं को खरीदने का एकाधिकार प्राप्त कर लिया । यह कंपनी जादवेद लोगों के परिवार की बताई जाती है जिन्होंने निकोबार के लोगों के साथ घनिष्ठ संबंध स्थापित कर लिये हैं जिनमें शादी ब्याह भी शामिल है । इस कंपनी का मुख्यालय कलकत्ता में है । यद्यपि कंपनी तथा इससे सम्बद्ध अन्य बहुधन्धी व्यापारिक संस्थाओं तथा व्यक्तियों की धन सम्पत्ति तथा व्यापार देश के अन्य हिस्सों तथा थाईलैंड में बताया जाता है । इन द्वीपों में भी उन्होंने धन सम्पत्ति जोड़ी है जिसमें वे अंशदारी हैं ।

जादवेद कंपनी की गतिविधियां कुछ प्रशासकों को पसन्द नहीं आईं क्योंकि उनका विचार था कि इससे यहां की जनजातियों को भविष्य में नुकसान हो सकता है । संभवत: उनके व्यापार का विशेषाधिकार तथा कम्पनी के पदाधिकारियों का वायु सेवा के वायुयानों का उपयोग उन्हें पसन्द न आया हो । तत्कालीन मुख्य आयुक्त महाबीर सिंह पहले अधिकारी थे जिन्होंने कंपनी की स्वच्छंद गतिविधियों पर अंकुश लगाने का प्रयत्न किया, किन्तु स्वयं अदालतों के झंझटों में फंस गये । उनका एकाधिकार समाप्त करने के मामले अदालतों में चलते रहे । कहा जाता है अंत में कंपनी ने स्वेच्छा से निकोबार में अपना कारोबार समाप्त करने का प्रस्ताव रखा, जिसे सरकार ने स्वीकार किया तथा कंपनी की क्षति पूर्ति के लिए

कुछ मुआवजा भी उसे दिया गया ।

किन्तु कहानी यहीं समाप्त नहीं होती यद्यपि सहकारी संघ व सहकारी समितियों ने कंपनी का स्थान ले लिया किन्तु कुछ सांसद जो इन द्वीपों में संसद की विभिन्न कमेटियों के साथ आए वे उसे केवल कागजी कार्यवाही मानते हैं । उनका शक था कि यह कंपनी भी ईस्ट इंडिया कंपनी की तरह यहां पर अपनी जड़ जमाये हुए है और अभी भी वह असली मालिक बनी हुई है । निकोबारी जनजाति के लोगों पर कैप्टनों का पूर्ण नियंत्रण है और कैप्टन स्थिति से पूर्णतया संतुष्ट व खुश प्रतीत होते हैं और प्रशासन भी इस मामले की गहराई में नहीं जाना चाहता क्योंकि हो सकता है उसको दुविधा व उलझन का सामना करना पड़े । किन्तु कुछ सांसद इस मामले में खुलकर बोले हैं और वे तो यहां तक कहते रहे कि जनजाति के लोगों की पैदावार यद्यपि सहकारी समितियों के द्वारा जमा की जाती है परन्तु वह अन्त में इसी कंपनी को बाजार भाव से कम कीमत पर बेची जाती है । मुख्य प्रश्न है कि क्या निकोबारी जनजाति के आम लोगों को उनकी पैदावार का उचित मूल्य मिल रहा है या नहीं, इस बात को सरकार को देखना होगा कि उचित मूल्य उनको मिले क्योंकि जनजाति के लोगों के अधिकारों की रक्षा करना सरकार का विशेष उत्तरदायित्व है ।

सरकारी समिति ने अच्छा लाभ अर्जित किया है और सहकारी समितियों के इतिहास में पहली बार इस समिति के पास एक जहाज है जिसका नाम "नीकोट्रेड" है । सहकारी समिति को जहाज चलाने की अनुमति देने में (वाणिज्य विधि) मरकनटाइल एक्ट के अनुसार कुछ आपत्तियां थी जिसके लिए अधिनियम को संशोधित किया गया ।

ग्रेट निकोबार द्वीप में भूतपूर्व सैनिकों ने धान तथा अन्य फसलों की बहुत अच्छी पैदावार प्राप्त की है किन्तु उन्हें आवश्यकता से अतिरिक्त अनाज की बिक्री की समस्या का सामना करना पड़ा । अभी तो खाद्य एवं आपूर्ति विभाग ने सरकार द्वारा निर्धारित मूल्यों पर इसे खरीद लिया । चूंकि अब कुछ नये छोटे जहाज इस द्वीप में आने-जाने के लिए सुलभ किये जा रहे हैं उससे आशा की जाती है कि इस द्वीप में समुचित व्यापार की सुविधायें बढ़ेंगी ।

अंडमान द्वीप समूह में पोर्ट ब्लेयर मुख्य व्यापारिक केन्द्र है । यहां के बाजारों की दुकानें विभिन्न प्रकार के सामान से भरी रहती हैं । शायद ही ऐसी कोई वस्तु हो, जो यहां न मिलती हो और अन्य बड़े महानगरों में मिलती हो । देश की बड़ी-बड़ी कंपनियों ने अपनी शाखायें यहां पर खोली हैं । आधुनिकतम फैशन की वस्तुएं भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं और कभी-कभी तो सरकार द्वारा जब्त की गई तथा नीलाम द्वारा बेची गई विदेशी वस्तुएं भी बाजार में आ जाती हैं । स्थानीय सब्जियों, फल, मछली, नारियल, सुपारी, विभिन्न प्रकार के शंख, सीप, उनसे बने आभूषण, टेबुल लैंप, बहती लकड़ी की कलात्मक आकृतियां, लकड़ी, बांस तथा केन के साज-सामान इत्यादि लोगों के लिए, विशेष रूप से पर्यटकों के लिए,

खरीददारी एक लुभावना दृश्य प्रस्तुत करता है। व्यापारी वर्ग भी काफी चतुर व बुद्धिमान है तथा मुख्य भूमि के बाजार स्थिति की समुचित जानकारी रखता है।

अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह खाद्य पदार्थों के मामले में आत्मनिर्भर नहीं हैं तथा इसी कमी की पूर्ति प्रशासन नागरिक आपूर्ति विभाग द्वारा मुख्य भूमि से आयात कर की जाती है। यह विभाग समस्त सरकारी व्यावसायिक योजनाओं का नियंत्रण करता है। चावल, गेहूं तथा चीनी जैसी आवश्यक सामग्रियां केन्द्रीय सरकार के खाद्य निगम के मद्रास, विशाखापटनम तथा कलकत्ता स्थित भंडार गृहों से निर्धारित मात्रा में, बशर्ते कि उपलब्ध हों, लाई जाती हैं। वर्ष में 236 सस्ते गल्ले की दुकानों से करीब 14,247 मी. ट. चावल 6,352 मी. ट. गेहूं तथा 3,570 मी. ट. चीनी जनता को वितरित की जाती है।

दूसरी आवश्यक सामग्री व्यक्तिगत दुकानदारों, उपभोक्ता भंडार तथा सप्लाई एन्ड मार्केटिंग फेडरेशन द्वारा सीधे मुख्य भूमि से मंगाई जाती है। बावजूद इसके कि कुछ अवांच्छनीय व्यापारी जैसा कि पहले लिखा गया है कि जहाज रानी की सेवाओं में विघ्न पड़ने पर मनमाने दाम वसूल कर लेते हैं किन्तु साधारण तौर पर अधिकांश व्यापारी स्वेच्छा से आत्म संयम द्वारा निर्धारित दामों से अधिक कीमत वसूल नहीं करते। वैधानिक रूप से वस्तुओं पर कीमत का कोई प्रतिबन्ध नहीं है और व्यापारी बाजार भाव के मुताबिक जो चाहे कीमत वसूल कर सकता है। लेकिन पोर्ट ब्लेयर में एक गैर सरकारी समिति है जिसमें सरकारी अधिकारियों के अतिरिक्त उपभोक्ता तथा व्यापारियों के प्रतिनिधि संयुक्त रूप से आवश्यक वस्तुओं के मूल्य निर्धारित करते हैं। व्यापारी जहाज से आये सामान का चालान व अन्य विवरण लेकर आता है और समिति उन्हें उचित लाभांश देकर वस्तु को बेचने की कीमत निर्धारित कर देती है जिसका यह पूर्णतया पालन करता है।

आपूर्ति विभाग द्वीपों में स्थानीय धान व चावल के सरकार द्वारा निर्धारित मूल्य पर खरीदारी करने का एकमात्र विभाग है। विभाग के पास चार गोदाम घर कमोर्टा, कैम्पल बे, कार निकोबार तथा नेल द्वीप में हैं। विभाग की गतिविधियों में अधिक विस्तार होने के कारण यह अनुभव किया जा रहा है कि विभाग को और अधिक अधिकार दिये जायें, जिससे वह अपने उत्तरदायित्व पूर्ण रूप से निभा सके। इसके लिए यहां पर नागरिक आपूर्ति निगम के गठन पर गंभीरता पूर्वक बात चल रही है।

11. उद्योग

यहां पर शिक्षित नवयुवकों में दिन प्रतिदिन बेरोजगारी बढ़ रही है, जो सभी के लिए एक चिन्ता का विषय है। सौभाग्य से योजना बनाने वाले समस्या से परिचित हैं। इस समस्या के समाधान के लिए आवश्यक है कि ग्रामीण उद्योग धन्धों का द्रुत गति से विकास हो ताकि बेरोजगारों को लाभकारी योजनाओं में लगाया जा सके। दैवयोग से अंडमान व निकोबार द्वीप समूह वनों, नारियल के बगीचे तथा समुद्री भोज्य पदार्थ एवं अन्य वस्तुओं

से साधन सम्पन्न हैं, जो यहां पर उद्योगों की स्थापना में चाहे लघु उद्योग हों या घरेलू उद्योग, कच्चा माल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कर सकते हैं।

यहां पर लकड़ी के पांच कारखाने हैं, जो बड़े तथा मझोले उद्योगों की श्रेणी में आते हैं। इनमें चार तो निजी क्षेत्र में हैं और एक सरकारी है। इनके द्वारा बनाया गया माल, धन जो लगाया गया तथा रोजगार जो उपलब्ध किया गया उसके विवरण निम्न प्रकार हैं : -

उद्योग का नाम	*माल का विवरण*	*कितनी पूंजी लगी (करोड़ों में)*	*स्थापित क्षमता (करोड़ों में)*	*निर्मित माल का मूल्य (करोड़ों में)*	*कितनों को रोजगार मिला*
1	2	3	4	5	6
1. अंडमान टिम्बर इन्डस्ट्रीज लि., बम्बू फ्लैट, दक्षिण अंडमान	वाणिज्य परती लकड़ी (कोमर सिविल प्लाई वुड)	23.4	6.18	5.39	1220
2. जय श्री टिम्बर प्रोडक्ट्स, बकुतल्ला, मध्य अंडमान	वाणिज्य परती लकड़ी एवं कुन्दा तख्ता (कमर्शियल एवं ब्लोक बोर्ड)	2.02	6.00	3.70	1125
3. एशियन वुड्स एवं पोलीमर प्रा. लि., लोंग आईलैंड, म. अंडमान	वाणिज्य परती लकड़ी व पृष्ठावरण (कमर्शियल प्लाईवुड व बैनीयरस)	0.92	3.00	2.00	800
4. वैस्टर्न इन्डिया मैच कं. लि., हैडो, पोर्ट ब्लेयर	दियासलाई की तीलियां	0.99	9.00	3.00	1000
5. चैथम सौन मिल, चैथम पोर्ट ब्लेयर (सरकारी)	चिरी लकड़ी	(आंकड़े उपलब्ध नहीं)			750

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि लकड़ी पर आधारित उद्योग अच्छे पनप रहे हैं। सरकारी क्षेत्र में चलने वाली एक मात्र आरा मिल में लगाई पूंजी तथा उत्पादन संबंधी आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं किन्तु अन्दाज लगाया जा सकता है कि सरकारी क्षेत्र में चलने वाले उद्योगों की भांति यहां भी स्थिति उत्साहवर्धक नहीं होगी। फिर भी एशिया की सबसे बड़ी व पुरानी आरा मिल होने के कारण चिरी लकड़ी द्वीप से बाहर भेजने में इसने सराहनीय कार्य किया। यह दृश्य बहुत लुभावना होता है। किस प्रकार पेड़ों के बड़े-बड़े तने प्रशिक्षित हाथियों द्वारा आसानी से ट्रकों में लादे जाते हैं फिर मिल में एक तरफ लगभग समूचे पेड़ मशीन उपकरणों से कारखाने के अन्दर प्रवेश करते हैं तथा दूसरी तरफ अत्यन्त पतले तख्ते व बल्लियां निकलती हैं। जब इस प्रकार परिवर्तन की प्रक्रिया चलती है उसमें लकड़ी की बरबादी भी अधिक नहीं होती जो निम्न तालिका से स्पष्ट है -

चैथम आरा मिल में लकड़ी का आयात व उत्पादन

वर्ष	*आयात*	*उत्पादन*	*प्रतिशत*
1	2 –	3	4
1981-82	19,294	9,560	49.5
1982-83	20,738	9,396	45.3
1983-84	16,821	7,657	45.5
1984-85	17,951	8,065	44.9
1985-86	21,196	10,559	50.0
1986-87	20,682	11,161	54.0

सरकार ने इन द्वीप समूहों को उद्योग धन्धों की दृष्टि से पिछड़ा क्षेत्र घोषित किया है और एक करोड़ रूपये तक की लागत का उद्योग प्रारम्भ करने पर पूंजी पर सहायता की रियायत दी जाती है। इस प्रकार उद्योगों ने 1980-81 व 1982 -83 में 39. 74 लाख रूपये की सहायता प्राप्त की, जो मुख्यतया बड़े उद्योगों को मिली। इसी बीच इन बड़े उद्योगों ने पचास प्रतिशत परिवहन सम्बन्धी सहायता की कुल राशि 27.32 लाख रूपये प्राप्त की। अब तो पूंजी पर सहायता का अनुपात पन्द्रह प्रतिशत से बढ़ाकर पच्चीस प्रतिशत तथा परिवहन के भाड़े पर पचास प्रतिशत से बढ़ाकर पचहत्तर प्रतिशत कर दिया गया है किन्तु इन सुविधाओं में प्राप्तकर्त्ता बड़े उद्योगपति हुए हैं, जो पहले ही से इन द्वीपों में जमे हुए थे तथा युक्ति द्वारा इस सहायता राशि को लेने में समर्थ हो गये थे।

नये उद्योग लगाने वालों के लिए गाराचरामा में एक औद्योगिक बस्ती बनाई गई किन्तु

10 में से अधिकांश कार्यशालाएं तथा 15 भूखंड खाली पड़े हुए हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि कच्चा माल कुशल कारीगर तथा माल बेचने के लिए उपयुक्त बाजार आदि की समस्या का सही मूल्यांकन नहीं किया गया। उसका परिणाम यह हुआ है कि परियोजनाएं जहां की तहां रह गई हैं।

राजकीय बहुशिल्पी (पोलिटेकनीक) प्रशिक्षण केंद्र भी पहली बार इन द्वीपों में सन् 1984 में स्थापित किया गया। इसका मूल उद्देश्य ग्रामीण तथा जनजाति के विद्यार्थियों का कल्याण था। इस योजना के अंतर्गत यहां एक आधुनिकतम भवन कक्षों का निर्माण किया गया है जिसमें आधुनिक यंत्रों से युक्त एक कर्मशाला है जहां पर व्यावहारिक ज्ञान अर्जित करने की सुविधा है। यहां पर रसायन, भौतिकी, मशीनी, विद्युत, लोक अभियांत्रिकी, प्रायोगिक यांत्रिकी इत्यादि विषयों पर प्रशिक्षण की सुविधा है। यह संस्था दिल्ली स्थित बोर्ड आफ टेकनिकल एज्यूकेशन से संबद्ध है।

एक अन्य बहुशिल्पी प्रशिक्षण केंद्र मायाबन्दर में शुरू किया जा रहा है जिसमें होटल प्रबंध कौशल (होटल मेनेजमेंट) खान-पान आकारिकी (केटरिंग टेक्नोलोजी) समन्वित काष्ठ आकारिकी (इंटीग्रेटेड टिम्बर टेकनोलोजी) पुनरारंभ ऊर्जा स्त्रोत (रिनिवेवुल एनर्जी सोरसेज) तथा समुद्री आकारिकी (मैरीन टेकनोलीजी) जैसे नये विषय होंगे।

इन द्वीपों में कुछ लघु उद्योगों की इकाइयां हैं, जो अच्छी प्रगति कर रही हैं। उसमें सम्मिलित हैं, आरा मशीन, लकड़ी के साज-सामान, धान के छिलके से तेल निकालने की मशीन, नारियल के रेशे के उद्योग, ईंट बनाना, टायरों को पकाकर नया बनाना, आइस कैंडी, बिस्कुट व डबल रोटी बनाना, लोहार गिरी, छापाखाना, गाड़ियों की मरम्मत, शैलों से जेवरात व सजाने की वस्तुएं बनाना, स्टेनलेस व अल्यूमिनियम की कन्डियां तथा बांस व केन से विभिन्न साज-सामान बनाना।

कुछ स्थानीय लोगों ने समुद्री शैल से अनेक सुन्दर चीजें बनाने का काम अपना लिया है। वे लोग बहुत सुन्दर जेवरात, टेबल लैम्प तथा सजावट की अनेक सुन्दर वस्तुएं तैयार करते हैं। समुद्र में बहकर किनारे पर लगी लकड़ी काफी मात्रा में मिलती है। पानी में बहते रहने के कारण उनमें अनेक प्रकार की कलात्मक आकृतियां आ जाती हैं, जिन्हें द्वीपों के कलाकार कारीगर थोड़ा-बहुत काट-छांट कर व पालिश से चमका कर इन्हें नया स्वरूप प्रदान कर देते हैं, जिन्हें यहां पर बाहर से आये पर्यटक बड़े चाव से खरीदते हैं। उद्योग विभाग द्वारा भी वहां पर एक सुसज्जित प्रदर्शन कक्ष है, जिसमें द्वीपों में उपलब्ध विशेष वस्तुएं रखी गई हैं, जो उचित दामों पर बेची जाती हैं। कुछ निजी व्यापारिक संस्थान इन द्वीपों में टेलीविजन सेट बनाने की ईकाई लगाने जा रहे हैं। दस हजार रंगीन व दस हजार साधारण सेट बनाने का प्रस्ताव है। कार निकोबार के लोगों को उनके नारियलों का, जिन्हें काटकर वे गरी (कोपरा) बना लेते हैं, अच्छा मूल्य नहीं मिलता है। विषुवत् रेखा पर स्थित होने के कारण यहां साल में लगभग नौ माह तक वर्षा होती है, जिसके कारण आसमान

पर प्रायः बादल छाये रहने से धूप बहुत कम आती है तथा हवा में नमी भी बहुत रहती है। परिणामस्वरूप निकोबारी लोगों के लिए धूप में कोपरा सुखाना संभव नहीं रहता और उसको आग की भट्टी में सुखाना पड़ता है और इस प्रक्रिया में धुएं से गरी (कोपरा) का रंग काला पड़ जाता है जिसके लिए बाजार में उन्हें उचित दाम नहीं मिलते। इस समस्या के समाधान के लिए प्रशासन यहां पर एक बिजली द्वारा गरी (कोपरा) सुखाने का संयंत्र लगाने का विचार कर रहा है। नारियल के रेशों के प्रयोग के लिए भी उद्योग लगाने की योजना पर कार्य हो रहा है।

इस क्षेत्र में औद्योगिक प्रगति के लिए कुछ इच्छुक उत्साही युवक उद्यमियों को आगे लाने के लिए 1983 में एक उच्चस्तरीय दल पोर्टब्लेयर पहुंचा। इस दल की संस्तुति के आधार पर तीस चुने हुए उद्योग लगाने के इच्छुक उत्साही युवक उद्यमियों के लिए औद्योगिक विकास की योजनाएं, इन्टरप्रिन्यूरियल डेवलेपमेंट इन्स्टीट्यूट आफ इंडिया, स्टेट बैंक आफ इंडिया तथा पश्चिम बंगाल सलाहकार संस्थान के संयुक्त सहयोग से चलाई जा रही हैं।

विभिन्न लघु उद्योग तथा घरेलू उद्योगों में प्रशिक्षण देने के लिए इन द्वीपों में 10 प्रशिक्षण केन्द्र खोले गये हैं। 6 बड़ी औद्योगिक इकाईयों के अलावा लघु उद्योग के क्षेत्र में 558 इकाइयां अंडमान व निकोबार द्वीप समूह के विभिन्न स्थानों पर काम कर रही हैं। उनमें से अधिकांश 459 इकाइयां केवल दक्षिण अंडमान में हैं। 35 कारखाने भी काम कर रहे हैं जिसमें लगभग 4847 मजदूर कार्य करते हैं।

सातवीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत और अधिक मझली इकाईयां इन द्वीपों में लगने वाली हैं, जिनमें एक लघु सीमेंट का संयंत्र, एक आक्सीजन एसीटिलीन संयंत्र, ठोस ईंधन (सोलिड फ्यूल) संयंत्र आदि सम्मिलित हैं, जिनसे आशा की जा सकती है कि इन द्वीपों के शिक्षित बेरोजगार युवकों की समस्या कुछ सुलझ जायेगी।

लिटिल अंडमान द्वीप में लाल तेल के खजूर के पौधों को लगाने में जो महान सफलता मिली है उससे खाने के तेल के देश में उत्पादन के विकास की असीम संभावनाएं बढ़ गई हैं। यहां पर एक वनस्पति घी को तैयार करने का संयंत्र लग सकता है ताकि वनस्पति घी न केवल द्वीपवासियों को परन्तु देश में अन्यत्र भी उचित कीमत पर सुलभ हो सके। इससे खाने के तेलों को विदेशों से मंगाने पर विदेशी मुद्रा में वर्तमान 1300 करोड़ रूपये की राशि में पांच सौ करोड़ रुपये की कटौती हो सकती है, यदि 1.2 हेक्टर भूमि पर लाल तेल खजूर के पौधे लगाए जायें।

यह क्षेत्र नारियल के उत्पादन में देश में चौथे स्थान पर है। वर्तमान समय में नारियल के तेल की बहुत थोड़ी मात्रा, व्यक्तिगत रूप से कुछ लोगों द्वारा तैयार की जाती है। इन द्वीपों में नारियल का तेल बनाने के कुछ बड़े व मझोले उद्योग लगाने की अच्छी संभावनाएं हैं।

इन द्वीपों में एक औद्योगिक विकास प्रोत्साहन तथा निवेश निगम की स्थापना का प्रस्ताव भी विचाराधीन है, जिसकी अंश पूंजी तीन करोड़ होगी। विकास आयुक्त लघु उद्योग एवं उद्योग विकास मंत्रालय के अतिरिक्त सचिव की अध्यक्षता में एक उच्च स्तरीय दल ने अपने अंडमान के पिछले भ्रमण में उपरोक्त निगम के बनाये जाने की संस्तुति की। प्रस्तावित निगम सभी प्रकार के उद्योग स्थापित करने में हर प्रकार की सहायता देगा, जिसमें कच्चा माल, माल की बिक्री तथा वित्तीय सहायता सम्मिलित है और वह विभिन्न प्रकार की अन्य सहायता के वितरण में भी मदद करेगा।

अंडमान व निकोबार उद्योग प्रोत्साहन एवं निवेश निगम की स्थापना तथा खादी तथा ग्रामोद्योग आयोग से सहायता और अन्य योजनाओं के कार्यान्वयन से इन द्वीपों में अनेक घरेलू तथा लघु उद्योग की इकाइयों को लगाने की संभावनाएं बढ़ जायेंगी।

12. विद्युत-शक्ति

अंग्रेजों ने रौस द्वीप को अपना मुख्यालय बनाया और वहां पर निवास, गिरजाघर व कार्यालयों के लिए बहुत सुन्दर भवनों का निर्माण किया। वहां पर खेल-कूद तथा अन्य मनोरंजन के साधन भी जुटाये। द्वितीय महायुद्ध के प्रारंभ होने से पूर्व उन्होंने पहली बार इस द्वीप में विद्युतीकरण की दिशा में कदम उठाया। भाप द्वारा चलाया जाने वाला पचास किलोवाट का एक दिशधारा जनित्र (डी. सी. जनरेटर) लगाया।

स्वतंत्रता के बाद भारत सरकार ने पोर्ट ब्लेयर शहर का विद्युतीकरण करने की योजना स्वीकार की तथा 1951-52 में दो प्रत्यावर्ती जनित्र (ए. सी. जनरेटर) जो भाप द्वारा संचालित होते थे, लगाये गये। जिसके लिए स्थानीय आरा मिल से निकली बेकार लकड़ी प्रयोग में लाई गई। बाद में खाड़ी वनस्पति (मैनग्रोव) का भी प्रयोग किया गया। प्रशासन ने अब लगभग यहां की आबादी के 90 प्रतिशत भाग को बीस बिजली घरों की 13,902 किलोवाट क्षमता से बिजली उपलब्ध करा दी है। ग्रामीण विद्युत योजनाओं ने भी अच्छी प्रगति की है। 390 ग्रामों में से 327 ग्रामों को बिजली दे दी गई है।

यहां के लोगों की तथा औद्योगिक इकाइयों की दिन-प्रतिदिन बिजली की बढ़ती मांग की पूर्ति करने के लिए और अधिक बिजली पैदा करने की आवश्यकता है। केन्द्रीय सरकार ने 17.92 करोड़ रुपये की अनुमानित लागत पर एक कोयले से चलने वाला उष्मीय विद्युत केन्द्र (थर्मल पावर स्टेशन) स्थापित करना स्वीकार किया है। इस दिशा में सभी संबंधित विभागों ने प्रारंभिक कार्यवाही शुरू कर दी है। अंडमान गोदी निर्माण विभाग (हार्बर वर्क) द्वारा होप टाउन में एक गहरे पानी के जहाज घाट का काम शुरू कर दिया है, जो मुख्यतया इस बिजली घर के लिए कोयला उतारने आदि में प्रयुक्त होगा। इस समय इन द्वीपों की कुल विद्युत प्रतिष्ठापित क्षमता 8.67 मेगावाट है जो वर्तमान आवश्यकता की पूर्ति करने में असमर्थ है। इस कमी को पूरा करने के लिए प्रशासन शीघ्र ही 12.5 मेगावाट के डी.

सी. सेट चैथम पर लगा रहा है । इसी तरह तीन डी. सी. सेट 1000 किलोवाट के उत्तरी व मध्य अंडमान में, पांच सेट 312.5 कि. वा. की क्षमता के लिटिल तथा दक्षिणी अंडमान के लिये तथा चार 1000 कि. वा. क्षमता के कैम्पल बे में लगाने पर कार्य किया जा रहा है । इसके अतिरिक्त छोटे-छोटे बिजलीघर पिलोमिलो, रटलैंड, ईस्ट व इन्टरव्यू द्वीपों पर लगाए जा रहे हैं ।

पिछले दिनों तेल तथा प्राकृतिक गैस आयोग द्वारा यहां समुद्र में तेल के कुएं खोदने के समय उन्हें गैस के समुचित भंडार मिले किन्तु इस उष्णीय विद्युत परियोजना के आयोजकों को इस बात का पता नहीं था, जब तक कि उनसे यह नहीं कहा गया कि वे इस गैस का सदुपयोग इस परियोजना में कर सकते हैं । अब इस परियोजना में कोयला व गैस दोनों के प्रयोग का प्रावधान किया जा रहा है ।

प्रशासन इन द्वीपों में ऊर्जा के अन्य स्त्रोतों को ढूंढने की आवश्यकता से अच्छी तरह से परिचित है । ऊर्जा जुटाने तथा नवीनीकरण के स्त्रोतों के इन द्वीपों में , वायु संचालित संयंत्रों द्वारा प्राप्त बिजली के कुंओं से दमकल के द्वारा जल खींचना, सिंचाई करना, सौर प्रकाश बोल्टीय पट्टों, सोलर फोटो वोल्टेक पैनलों द्वारा गांवों का विद्युतीकरण, सौर उष्णीय (सोलर थर्मल) संयंत्र का मछ्ली सुखाने के लिए प्रयोग, लकड़ी के कारखाने तथा समुद्र के खारे पानी को साफ कर पेय योग्य बनाना तथा वन और खेती से उपलब्ध बेकार माल से गोबर गैस (बायोगैस) तैयार कर उसका प्रयोग करना आदि कार्य सम्मिलित हैं । केन्द्रीय सरकार ने 3.5 करोड़ रुपये का प्रावधान दक्षिण अंडमान के किसी उपयुक्त स्थान पर पांच मैगावाट की क्षमता का ओसन थर्मल कनवर्जन प्लांट यानी कि समुद्र की लहरों से बिजली बनाने के संयंत्र के निर्माण कार्य के लिए किया है । भारतीय औद्योगिक संस्थान (आई. आई. टी.) मद्रास के विशेषज्ञों के एक दल ने इन द्वीपों का भ्रमण किया तथा इस संयंत्र की संस्तुति की है ।

एक वायु-चालित दमकल (पम्प) कृषि प्रशिक्षण संस्थान छोलदारी में निर्मित किया गया है, जो संतोषजनक रूप से चल रहा है । ऐसे ही दस संयंत्रों को निकोबार द्वीप समूह में निकट भविष्य में लगाने की योजना है ।

बी. एच. ई. एल. की बंगलौर शाखा के एक विशेषज्ञ दल ने, जो कि सौर प्रकाश बोल्टीय पट्टी (सोलर फोटो बोल्टैपिक पैनेल) के प्रवर्तक थे, इन द्वीपों का भ्रमण किया और उन्होंने इन द्वीपों के दुर्गम आदिवासी ग्रामों में इस प्रणाली के सफल प्रयोग की आशा प्रकट की है ।

13. आकाशवाणी

आकाशवाणी पोर्ट ब्लेयर स्थानीय प्रशासन व द्वीपों की जनता के बीच सूचना प्रसारण का सबसे महत्वपूर्ण माध्यम है, इस काम को वह पूरे उत्तरदायित्व के साथ निभा रहा है ।

सभी प्रकार की सूचनाएं, जिसमें आने वाले मौसम व समुद्री तूफानों की जानकारी भी सम्मिलित है, आकाशवाणी द्वारा प्रसारित की जाती है । द्वीपों में स्थित पुलिस व रेडियो स्टेशनों को इस बात की पूरी छूट है कि वे सभी प्रकार के स्थानीय समाचार (बेतार वायरलैस) द्वारा सीधे आकाशवाणी को भेज सकें । इस प्रकार आकाशवाणी विभिन्न द्वीपों की घटनाओं से भी प्रशासन को अवगत कराता है । दुर्भाग्य से आकाशवाणी की प्रसारण क्षमता केवल पैंसठ किलोमीटर होने के कारण दस के. डब्लू. एस. डब्लू.के प्रसारण यंत्र तथा एक के. डब्लू. एम. डब्लू. का प्रसारण यंत्र निकोबार में लगाया जायेगा ।

6 अतिरिक्त बहुत कम क्षमता के प्रसारण यंत्र दिगलीपुर, मायाबन्दर, रंगत (हट बे), नानकोरी और कैम्पल बे में लगाये जायेंगे । अतः आकाशवाणी पोर्ट ब्लेयर हिंदी तथा अंग्रेजी के अतिरिक्त निकोबारी, बंगाली, तमिल, तेलुगु, मलयालम आदि भाषाओं में भी अपने कार्यक्रम प्रस्तुत करता है । अंडमान व निकोबार द्वीप समूह को लघु भारत, ठीक ही कहा गया है क्योंकि भारत के लगभग सभी प्रदेशों के लोग यहां पर बसे हैं। इस प्रकार ये द्वीप भारत की सामूहिक संस्कृति की एकता का प्रतिनिधित्व करते हैं ।

14. दूरदर्शन

इन द्वीपों में दूरदर्शन के कार्यक्रम के प्रसारण के लिए विशेष व्यवस्था के फलस्वरूप द्वीपवासियों की विचारधारा में आमूल परिवर्तन हो गया है । सुदूर द्वीपों में अपराधियों व भूतपूर्व कैदियों के वंशजों के रूप में एकाकी जीवन बिताने की हीन भावना से मुक्त होकर आज वे अपने देशवासियों के सुख दुःख में समान रूप से भागी बनकर गौरवान्वित अनुभव करते हैं । अकेले इस सुविधा ने उन्हें राष्ट्रीय मुख्य धारा से जोड़ने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है । वर्तमान समय में 6 कम शक्ति के दूरदर्शन के प्रसारण यंत्र रंगत, मायाबन्दर, दिगलीपुर, हट बे, नानकोरी तथा कार निकोबार में लगभग पूर्ण हो गये हैं ।

15. संचार

प्रशासन के पास पुलिस बेतार (वायरलैस) की सुविधा उपलब्ध है, जिससे वह आवश्यक काम के लिए केन्द्र सरकार से संपर्क रख सकता है । विभिन्न द्वीपों में बेतार की चौकियां (वायरलैस स्टेशनों) का जाल-सा बिछा हुआ है, जो प्रशासन को दैनिक घटनाओं से अवगत कराता है । यह बेतार की चौकियां स्थानीय जनता के लिए भी वरदान सिद्ध हुई हैं क्योंकि इन दुर्गम स्थानों के लोग आपातकाल में, विशेष रूप से जब कोई रोगी सख्त बीमार हो, इनके द्वारा प्रशासन को सूचना भेज सकता है ।

कार निकोबार में उपग्रहों (सैटलाइटस) की गतिविधियों को आंकने की दृष्टि से वहां पर विशेष उपकरण लगाए गए हैं । उसी सिलसिले में पोर्ट ब्लेयर में एक सूक्ष्म तरंग केन्द्र (माइक्रो वेव स्टेशन) बनाया गया है। उपग्रह (सैटलाइट) के सूक्ष्म संपर्क (माइक्रो लिंक) द्वारा जुड़ने से अब पोर्ट ब्लेयर से दूरभाष पर सीधे दिल्ली तथा अन्य नगरों में

बातचीत की जा सकती है । इन द्वीपों की संचार व्यवस्था में यह एक महत्त्वपूर्ण कदम है, क्योंकि इससे पहले मुख्य भूमि से बातचीत केवल रेडियो, टेलीफोन द्वारा संभव थी । कोई भी व्यक्ति रेडियो पर बातचीत सुन सकता था और अक्सर आवश्यक व गुप्त बातें भी लोगों को मालूम हो जाती थीं ।

द्वीपों में कुल मिलाकर दूरभाष के छः मिलान केन्द्र हैं, उनमें सर्वाधिक 701 तार पोर्ट ब्लेयर में हैं बाकी 44 कार निकोबार, 32 विम्बर्लीगंज, 38 रंगत, 24 मायाबन्दर, तथा 22 नानकोरी में हैं ।

टेलेक्स की सुविधा इन द्वीपों को उपलब्ध कर दी गई है । 2000 लाइनों का एक बिजली द्वारा संचालित मिंलान केंद्र (एक्सचेंज) शीघ्र ही पोर्ट ब्लेयर में लगाया जायेगा । पोर्ट ब्लेयर को एस. टी. डी. सुविधा मिलने तथा शीघ्र ही 16 दूसरे स्टेशनों पर ट्रंक सुविधा बढ़ाये जाने के फलस्वरूप ये द्वीप दूरसंचार के क्षेत्र में सफलता के कगार पर पहुंच जायेंगे ।

16. सूचना तथा प्रेस

प्रशासन के पास एक सूचना-प्रसारण विभाग है, जो प्रशासन की गतिविधियों के बारे में जनता तथा अन्य प्रचार माध्यमों को अवगत कराता है । यह विभाग इन द्वीपों में पर्यटकों की व्यवस्था की देखरेख भी करता है तथा उनके लिए दृश्य दर्शन के कार्यक्रम भी आयोजित करता है । प्रशासन का एक जन सम्पर्क आयुक्त पर्यटकों के मार्गदर्शक के लिए अंडमान हाउस, कस्तूरबा गांधी मार्ग, दिल्ली में भी रहता है ।

प्रारम्भ में इन द्वीपों में कोई समाचार पत्र नहीं था । प्रशासन को अनेक वैधानिक उत्तरदायित्वों के लिए, जैसे कि न्यायालय संबंधी समन आदि व ठेकों के लिए, सर्वसाधारण को सूचित करने में बहुत कठिनाई होती थी । इसलिए सरकारी तौर पर प्रशासन को एक समाचार पत्र "डेली टेलीग्राम्स" निकालना पड़ा । अब कुछ वर्षो से उसी का हिंदी संस्करण "द्वीप समाचार" भी निकलने लगा है । इनमें द्वीपों के तथा देश विदेश के सभी तरह के समाचार छपते हैं । हवाई जहाज की सेवाओं में निरन्तर सुधार के फलस्वरूप अब मुख्य भूमि के दैनिक समाचार पत्र भी प्रायः प्रतिदिन पहुंच जाते हैं ।

अब कई साप्ताहिक समाचार पत्र छपने लगे हैं । साप्ताहिक अंग्रेजी समाचार पत्र "लाइट आफ अंडमान" द्वीपों की तथा स्थानीय लोगों की समस्या को उजागर करने में बहुत सक्रिय रहा है । अन्य अंग्रेजी साप्ताहिक हैं अंडमान टाइम्स, व अंडमान पीपुल क्रूसेड तथा दो अंग्रेजी पाक्षिक हैं, अंडमान हेरल्ड तथा इन्फोर्मेशन बुलेटिन । तमिल भाषा में चार साप्ताहिक समाचार पत्र अंडमान चौथी, थीपारवायम, अंडमान एक्सप्रेस तथा अंडमान अलाइ ये सभी पत्र-पत्रिकाएं पोर्ट ब्लेयर से निकलती हैं । एक पाक्षिक बंगाली भाषा में 'द्वीपवाणी' प्रकाशित होता है । एक हिंदी साप्ताहिक, द्वीप मंथन तथा एक हिंदी मासिक

पत्रिका 'द्वीप कथा' भी प्रकाशित होती है ।

स्थानीय अखबार वालों को शिकायत है कि प्रशासन द्वारा "डेली टेलीग्राम" समाचार पत्र का प्रकाशन स्वच्छ व स्वतंत्र पत्रकारिता की परम्परा के विरूद्ध है और इस कारण स्थानीय पत्र पत्रिकाएं प्रगति नहीं कर सकतीं, क्योंकि वे कभी भी साधन सम्पन्न प्रशासन के साथ इस मामले में मुकाबला नहीं कर सकतीं ।

17. बैंक

अंडमान व निकोबार द्वीप समूह विभिन्न प्रकार के उद्योग, कृषि, बागवानी व अन्य व्यावसायिक गतिविधियों के कारण आर्थिक प्रगति के दरवाजे पर पहुंच गये हैं । बैंक का कारोबार भी पिछले वर्षों में कई गुना अधिक बढ़ गया है ।

स्टेट बैंक आफ इंडिया, स्टेट कोआपरेटिव बैंक लिमिटेड, सिंडिकेट बैंक तथा केनरा बैंक भी इन द्वीपों में कार्य कर रहे हैं ।

आय-व्यय का लेखा जोखा

द्वीपों के राजस्व तथा व्यय के बजट में काफी वृद्धि हुई है और विशेष रूप से व्यय में तीव्र वृद्धि हुई है और अन्तर करीब 60. 56 करोड़ से ऊपर हो गया है । द्वीपों के वर्तमान पिछड़ेपन तथा दुर्गमता के संदर्भ में यह खर्चा अवश्यंभावी प्रतीत होता है । मुख्य भूमि से दूरी तथा विशाल क्षेत्र, जिसमें ये द्वीप फैले हैं, जैसे कारणों से प्रशासनिक व्यय निश्चित रूप से बढ़ जाते हैं । पिछले कुछ वर्षों के आंकड़े निम्न प्रकार हैं ।

राजस्व आय तथा व्यय

(लाख रुपयों में)

वर्ष	*आय*	*व्यय*
1980-81	7,38,86	34,17,13
1981-82	8,07,91	38,71,14
1982-83	9,71,57	46,92,77
1983-84	9,08,83	46,46,08
1984-85	10,12,67	60,07,67
1985-86	15,98,92	57,81.62
1986-87	10,01,82	70,58,12

18. पंचवर्षीय योजना

अंग्रेजों द्वारा इन द्वीपों का खाली किया जाना, जापान का अधिपत्य, अंग्रेजों द्वारा पुनः कब्जा और अंग्रेजों का भारत छोड़ना तथा अन्त में आजादी, पर्दे पर चलचित्रों की तरह यह घटनाक्रम इन द्वीपों में बहुत द्रुत गति से चलता रहा। फिर इन द्वीपों में विशाल जन समूह का मुख्य भूमि से इस तरह से उमड़ना, जिस प्रकार तूफान के समय हवा के कम दबाव के क्षेत्र में चारों ओर से तेज हवाएं आती हैं, इन सब कारणों से इन द्वीपों के लिए किसी योजनाबद्ध परियोजना को बनाना नितान्त असंभव था। घटना क्रम इतनी तेजी से बदल रहा था कि उसको समझना बहुत कठिन था और भविष्य में स्थिति क्या आकार लेगी इसका आभास लगाना और भी दुष्कर था। परिणामस्वरूप सारी तस्वीर धूमिल होने के कारण प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ये द्वीप योजनाबद्ध विकास के कार्यक्रमों में सम्मिलित नहीं किए गए। प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय भी यद्यपि ये द्वीप औपचारिक रूप से योजना के अन्दर सम्मिलित नहीं थे फिर भी काम चलाने के लिए केवल 85 लाख रुपये दिए गए जिसमें से केवल पन्द्रह प्रतिशत खर्च किया जा सका। लेकिन द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल में केन्द्रीय सरकार ने इन द्वीपों के विकास में विशेष ध्यान दिया। पंचवर्षीय योजनाओं के प्रारंभिक काल में व्यय का प्रतिशत बहुत कम रहा क्योंकि द्वीपों में काम करने की आधारभूत ईकाई नहीं थी, अधिक वर्षा के कारण काम करने का समय कम रहता था तथा बहुत सी आवश्यक वस्तुएं यहां लाना बहुत कठिन था, क्योंकि मुख्य भूमि के व्यापारी इन अनजान द्वीपों में जहाज से माल भेजने का खतरा नही उठाना चाहते थे। जैसे समय बीतता गया परिस्थितियों में भी सुधार होता गया।

विभिन्न पंचवर्षीय योजना काल में इन द्वीपों के विकास के लिए उपलब्ध धन राशि में निरन्तर वृद्धि होती रही। द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल के केवल 6 करोड से सातवीं पंच वर्षीय योजना काल के लिए 2,90 करोड रुपये का प्रावधान किया गया। विभिन्न योजना काल में दिया गया धन तथा व्यय इस प्रकार रहा।

पंचवर्षीय योजना	*प्रावधान (लाख रुपयों में)*	*व्यय (लाख रुपयों में)*
द्वितीय	603.135	364.876
तृतीय	979.320	636.202
चतुर्थ	1400.000	1469.995
पांचवीं	3372.000	2120.702
छटी	9660.500	1,00,06.439
सातवीं	2,85,00.000	

सातवीं पंचवर्षीय योजना में लगभग 285 करोड़ रुपये होने का अनुमान है। सन् 1985-86 के लिए कुल 33.50 करोड़ रुपये का प्रावधान था। किन्तु जब से तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने इन द्वीपों के विकास में रुचि ली, तब से द्वीपों के विकास के लिए देय धन राशि में काफी वृद्धि होने लगी है।

अब विकास योजनाएं सर्वांगीण विकास पर विशेष महत्व दे रही हैं। द्वीपों की समस्याओं पर वास्तविक दृष्टिकोण अपनाने तथा परस्पर सहयोग बढ़ाने के लिए अंडमान, निकोबार तथा लक्षद्वीप के द्वीप विकास अधिकरण के रूप में एक उच्चस्तरीय निर्णायक समिति का गठन किया गया है, स्वयं प्रधानमंत्री इसके अध्यक्ष हैं, संबंधित मंत्रीगण व उच्चस्तरीय अधिकारी इसके सदस्य हैं। इसका एक विशेष लाभ यह हुआ है कि द्वीपों के समन्वित विकास की रूपरेखा का स्वरूप उभर कर सामने आया है जिसमें पर्यावरण जैसे संवेदनशील विषय को महत्व दिया गया है।

सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक जीवन की झांकी

आज अंडमान व निकोबार द्वीप समूह को लघु भारत कहा जाता है। देश के हर कोने से यहां पर आए हुए लोग विभिन्न फूलों से पिरोई माला की तरह पूर्ण प्रेम व सद्भाव के साथ मिलजुल कर रहते हैं। आदिवासियों को छोड़कर दक्षिण अंडमान के अधिकांश लोग "लोकल" (भूमिपुत्र) वर्ग में आते हैं जिनमें 1857 के प्रथम स्वतंत्रता के युद्ध के स्वतंत्रता-सेनानियों के वंशज, दूसरे अन्य कैदी, व्यापारी व सरकारी कर्मचारी, जो कैदी बस्ती के दिनों में इन द्वीपों में आए, तथा उनके वंशज सम्मिलित हैं।

आजादी के बाद इन द्वीपों में देश के विभिन्न भागों से लोग एक बाढ़ की तरह आ गए। कुछ लोग तो विशेषकर दक्षिण भारत तथा रांची (बिहार) से रोजी-रोटी की तलाश में आए और अन्य भारत सरकार की पुनर्वास परियोजनाओं के अंतर्गत लाए गए। इनमें सबसे बड़ी संख्या बंग्लादेश (पूर्वी बंगाल) से आए विस्थापितों की थी जो पुनर्वास योजना के अंतर्गत दक्षिण, मध्य व उत्तरी अंडमान में बसाए गए। अन्य लोग विशेष संधि द्वारा बर्मा तथा श्री लंका से लाए गए। तमिल लोगों के अतिरिक्त भारत सरकार की पुनर्वास योजना के अन्तर्गत लाये गए लोगों में भूतपूर्व सैनिक भी सम्मिलित हैं। भूतपूर्व सैनिकों को ग्रेट निकोबार द्वीप में और शेष को विभिन्न द्वीपों में बसाया गया।

सन् 1981 की जनगणना के अनुसार अंडमान व निकोबार द्वीप समूह की कुल आबादी 1,88,741 थी जिसमें 1,58,267 अंडमान जिले की तथा 30,454 निकोबार जिले की थी। अंडमान द्वीप समूह की आबादी के आंकड़े बड़े विचित्र प्रतीत होते हैं। वे कभी तो एकाएक बढ़ जाते हैं, कभी बिल्कुल घट जाते हैं जो कैदी बस्ती के बनने-उजड़ने, द्वितीय विश्वयुद्ध के दिनों द्वीपों का अंग्रेजों द्वारा खाली किया जाना तथा देश की स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद लोगों का इन द्वीपों में आना आदि घटनाओं से संबंधित हैं किन्तु निकोबार द्वीप समूह में ऐसा कुछ नहीं हुआ। वहां की जनसंख्या नियमित रूप से बढ़ती रही सिवाय 1951 की जनगणना में जब कि जनसंख्या कुछ घट गई थी। उसका कारण जापान का इन द्वीपों पर अधिपत्य था। उन दिनों अधिकांश चीन तथा मलेशिया के व्यापारी इन द्वीपों को छोड़कर चले गए थे। सन् 1901 से किस प्रकार जनसंख्या बढ़ी वह निम्न तालिका से स्पष्ट है :-

जनगणना का वर्ष	*अंडमान*	*निकोबार*	*योग*	*अन्तर का प्रतिशत*
1	2	3	4	5
1901	18,138	6,511	24,629	–
1911	17,651	8,818	26,469	+7.34
1921	17,814	9,272	27,086	+2.37
1931	19,223	10,240	29,463	+8.78
1941	21,316	12,452	33,768	+14.61
1951	18,962	12,009	30,971	–8.28
1961	48,985	14,563	63,548	+105.19
1971	93,468	21,665	1,15,133	+81.17
1981	1,58,287	30,454	1,88,741	+63.97

अंडमान जिले की जनसंख्या की एक अन्य विचित्र बात है, महिलाओं की संख्या का अनुपात कम होना । उसका मुख्य कारण है कैदी बस्ती-जहां पर कि स्वतंत्रता-सेनानी व अन्य कैदी अकेले थे । कैदी बस्ती के प्रबन्ध में लगे अधिकांश कर्मचारी भी बिना परिवार के आए थे और बाद के वर्षों में रोजी-रोटी की तलाश में रांची (बिहार) से लोग आए तो वे भी बिना अपने परिवारों के आए । प्रतिकूल जलवायु, पेयजल की कमी तथा द्वीपों का पिछड़ापन इन सब बातों के कारण प्रारंभ में लोगों को परिवारों को लाने का साहस ही नहीं हुआ । जैसे-जैसे कैदी बस्ती का विकास हुआ, महिला कैदी लाई गई तथा अन्य सुविधाओं के बढ़ने से दूसरे लोग भी अपने परिवारों को लाने लगे और इस प्रकार महिला आबादी का प्रतिशत बढ़ने लगा । निकोबार द्वीप समूह में महिलाओं की आबादी में असाधारण उतार-चढ़ाव का मुख्य कारण वहां पर बाहर से आये लोगों की आबादी के कारण हुआ है । जापान के अधिपत्य के दिनों चूंकि अधिकांश बाहर से आए हुए लोग, जो बिना परिवार के थे, भाग गए इसलिए निकोबार जनजाति के लोगों ने अपना पारम्परिक 1000 पुरुष पर 900 स्त्रियों का अनुपात कायम रखा । वर्तमान समय में विभिन्न परियोजनाओं जैसे कि भूतपूर्व सैनिकों के पुनर्वास, रक्षा तथा अन्य कार्य के लिए मजदूरों व कर्मचारियों के आने से निकोबार द्वीप समूह में स्त्रियों के अनुपात में गिरावट आ गई है । निम्न तालिका से यह बात स्पष्ट हो जाती है :-

महिलाओं की जनसंख्या का अनुपात
(एक हजार पुरुषों पर महिलाओं का अनुपात)

वर्ष	*अंडमान व निकोबार द्वीप समूह*	*अंडमान जिला*	*निकोबार जिला*
1	2	3	4
190,1	318	197	841
1911	352	197	825
1921	303	146	768
1931	495	348	881
1941	574	433	891
1951	625	889	900
1961	617	554	872
1971	644	615	784
1981	760	750	811

जैसे-जैसे अधिक सुविधाएं सुलभ होती गईं तथा अधिक द्वीपों में बस्तियां बनीं, अंडमान द्वीप समूह में आबादी का घनत्व बढ़ने लगा किन्तु अब भी अनेक द्वीप ऐसे हैं जहां पर कोई आबादी नहीं है ।

निकोबार द्वीप समूह में आबादी सदैव काफी रही है, जिसकी पुष्टि तेरहवीं शताब्दी के बाद के लगभग सभी विदेशी भ्रमणकर्ताओं के संस्मरणों से होती है । अंडमान व निकोबार द्वीप समूह में कार निकोबार ही अकेला ऐसा द्वीप है, जो आबादी की दृष्टि से सबसे अधिक घना बसा हुआ है । यह बात तालिका से स्पष्ट हो जाती है :-

2. लोकल (भूमि पुत्र)

ऐसे देश में जहां धर्मांधता तथा अक्सर होने वाले साम्प्रदायिक दंगों से मन क्षुब्ध व व्यथित हो उसी देश के इस कोने में विभिन्न धर्मों, सम्प्रदायों के बीच परस्पर प्रेम सद्‌भाव व भाईचारा देखकर मन को एक दिव्य शान्ति की अनुभूति होती है । किन्तु इसकी एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि है । पुरानी कहावत है - "संकट में दुश्मन भी एक हो जाते हैं", अंडमान के संबंध में यह कहावत पूर्ण रूप से चरितार्थ हुई थी । यहां पर सभी जाति, धर्म व देश के विभिन्न अंचलों से लोग जेल में डाले गये और बाद में उनमें से कुछ कैदी बस्ती में रहने लगे जहां वे जाति, धर्म व अन्य सामाजिक बंधनों से मुक्त अन्य भूतपूर्व कैदी परिवारों से खान-पान तथा शादी-ब्याह द्वारा दूध में पानी की तरह मिल गये ।

आबादी का घनत्व

वर्ष	*अंडमान व निकोबार द्वीप समूह का घनत्व (एक वर्ग कि.मी. पर आबादी)*	*कार निकोबार द्वीप की आबादी का घनत्व*
1	2	3
1901	3	उपलब्ध नहीं
1911	3	''
1921	3	उपलब्ध नहीं
1931	4	''
1941	4	''
1951	4	''
1961	8	77
1971	14	105
1981	23	120

इस प्रकार के पारस्परिक संबंधों ने एक नये समाज को जन्म दिया, जिसमें लोग जाति, धर्म तथा सामाजिक बड़प्पन के पूर्वग्रह से मुक्त थे। ऐसे लोगों का नामकरण "लोकल" (भूमि पुत्र) शब्द से किया गया। यह नाम अंग्रेज प्रशासकों द्वारा दिया गया है क्योंकि भारतीय समाज में इस नए समाज के निर्माण में उनका सीधा हाथ था और इस वर्ग को भविष्य में किन समस्याओं का सामना करना पडेगा उससे भी वे अच्छी तरह से अवगत थे। सच बात तो यह है कि तत्कालीन मुख्य आयुक्त कर्नल वीडन ने "लोकल" का नाम दिया और कहा कि इस नए समाज को अपने स्वतंत्र अस्तित्व तथा अपने अधिकारों की रक्षा के लिए संगठित होकर संघर्ष करना पड़ेगा। सन् 1926 में उसने एक "लोकल बोर्न एसोसिएशन (भूमि पुत्र संस्था) के बनाने में सक्रिय भाग लिया। इसी समाज में पैदा हुए एक कर्मचारी को इस संस्था का अध्यक्ष नियुक्त किया गया। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि बाद में जो मुख्य आयुक्त आए उन्होंने इस संस्था को प्रोत्साहन नहीं दिया। संभवत: इस का एक कारण यह हो सकता है कि चूंकि अधिकांश कर्मचारी इस वर्ग के नहीं थे अत: वे उनको नाराज नहीं करना चाहते हों।

इस प्रकार इन भूमि पुत्रों (लोकल) की दक्षिण अंडमान द्वीप में विशेष रूप से पोर्ट ब्लेयर तथा उसके समीप के गांवों में जनसंख्या बढ़ती गई। अब वे लोग भी, जो यद्यपि इस वर्ग में नहीं आते थे तथा यहां पर सरकारी पदों पर या व्यापार के लिए आए थे, इन भूमि

पुत्रों के परिवारों से मिलने-जुलने लगे, यहां तक कि शादी ब्याह भी रचाने लगे क्योंकि मुख्य भूमि से किसी भी दुल्हन का इस बदनाम कालापानी में आना असंभव था। इस प्रकार सब लोग जाति व धर्म की संकीर्णताओं को भूल गए। परस्पर सहानुभूति, सदाचार, सौहार्द, उदार भावना तथा भाईचारा जैसे सर्वत्र स्थापित मानवीय विशेष गुण जीवन दर्शन के सिद्धांत बन गए।

कैदी बस्ती के प्रारंभिक काल में अधिकांश कैदी उत्तर प्रदेश से आए और अधिकांश कर्मचारी भी उत्तर प्रदेश से ही आए, इसलिए होली, दीवाली यहां तक कि शादी ब्याह के रीति रिवाज भी उत्तर प्रदेश के अपनाए गए। इसी प्रकार हिन्दी, उर्दू के शब्दों के लिए सरल हिन्दुस्तानी अपनायी गयी और बोलचाल में लिंग भेद के क्लिष्ट व्याकरण को तिलांजलि दे दी गयी। इससे यह भाषा लोगों के लिए, विशेष रूप से दक्षिण भारत के लोगों के लिए सरल बना दी गयी। यदि देश ने कभी एक भाषा को पूरे देश के लिए सम्पर्क भाषा के रूप में स्वीकार किया तो वह हिन्दी भाषा का यही स्वरूप होगा, जिसे वर्षों के अनुभव व प्रयोग के बाद लोगों ने अपनाया है और जिसे सभी लोग अपनाएंगे। इसमें विश्वास करने के लिए केवल उनकी परस्पर वार्तालाप मात्र सुनने की आवश्यकता है। किस सरलता से वे इस बोली में बातें करते हैं। यहां तक कि दक्षिण भारत के एक ही भाषा के प्रदेश के बच्चे भी अपने घर में अपनी भाषा से अधिक परस्पर इस बोली में बात करना पसन्द करते हैं।

यहां बहुत से संभ्रान्त लोग हैं जिनका जन्म इन भूमि पुत्रों के परिवारों में हुआ। के. आर. गणेश, भूतपूर्व मंत्री, भारत सरकार भी इसी श्रेणी में आते हैं। उनके पिता रत्नम यहां पर एक प्रतिष्ठित व्यापारी थे जिनके नाम पर एक बाजार का नाम "रत्नम" मार्केट रखा गया है। भूतपूर्व संसद सदस्य लक्ष्मण सिंह, जिनके दादा 1857 के स्वतंत्रता-सेनानी थे, वे भी इसी वर्ग के थे।

यह बड़ी उत्साहजनक बात है कि यहां पर धर्म एक व्यक्तिगत आस्था का विषय माना जाता है। अपनी आस्थानुसार लोग मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर, गुरुद्वारा या बौद्ध मठ आदि में जाते हैं किन्तु सामाजिक क्षेत्र में किसी भी प्रकार का कोई भेद-भाव नहीं है और विभिन्न कट्टर धर्मावलम्बियों के बीच ब्याह होना इन द्वीपों में एक आम बात है। इस प्रकार हिन्दू लड़की का मुसलमान लड़के से तथा मुसलमान लड़की का हिन्दू लड़के से ब्याह करना इन द्वीपों के लिए बहुत साधारण बात है।

एक प्रतिष्ठित परिवार की एक कन्या वहां के भूतपूर्व वरिष्ठ अधिकारी, अतिरिक्त जिलाधीश स्वर्गीय हजरूद्दीन की पत्नी हैं तथा दूसरी कन्या शान्ता वहां के अन्य वरिष्ठ हिन्दू अधिकारी लक्ष्मण सिंह की पत्नी हैं। लेखक स्वयं एक ऐसे परिवार से बहुत अच्छी तरह परिचित है जहां पर चार बहनों में से तीन बहनें बड़े सुखपूर्वक क्रमशः हिन्दू, ईसाई व मुसलमान युवकों से ब्याही गई हैं। उनमें से चौथी कुआंरी लड़की का कहना था कि होली, ईद व बड़े दिन के सभी त्यौहार परिवार में बड़े उत्साह पूर्वक मनाए जाते हैं। जब लेखक

ने उससे प्रश्न किया कि तुम अभी तक कुआंरी क्यों हो तो हंसते हुए उसने कहा कि विभिन्न धर्मों के युवकों से शादी करना इतना प्रेरणादायक रहा है कि वह किसी अन्य नए धर्मावलम्बी युवक से शादी के प्रस्ताव की प्रतीक्षा कर रही है। इस प्रकार का सम्मिश्रण न केवल विभिन्न धर्मों तक सीमित है वरन् इसने आंचलिक सीमाओं के बन्धन भी तोड़ दिए हैं और उत्तर भारत व दक्षिण भारत के मूल के लोगों के बीच भी शादी-ब्याह आम बात बन गई है।

परन्तु आजादी के बाद बाहर से आने वालों की विशाल भीड़ ने स्थानीय लोगों का अस्तित्व खतरे में डाल दिया है जो सहसा अल्पमत में पहुंचा दिए गए हैं। बाहर से आने वाले लोगों को अपनी जात बिरादरी व अपने अंचल के लोगों के बीच दुल्हन ढूंढने में विशेष कठिनाई नहीं हुई है और इस प्रकार इन द्वीपों की सार्वभौमिकता में अन्तर आने लगा है। मुख्य भूमि से आने वाले लोग अपने साथ वहां की धर्मांधता तथा पूर्वग्रह भी साथ ले आये हैं।

यदि अपनी जात बिरादरी में ही शादी ब्याह करने की परम्परा उन लोगों द्वारा भी अपनाई गई जो शादी के बाद इन द्वीपों में आए तो इससे निश्चय ही कर्नल बीडन की साठ वर्ष पूर्व की भविष्यवाणी सच हो जायेगी कि "लोकल" की आने वाली पीढ़ियां अछूतों की तरह हीन भावना से देखी जा सकती हैं। अपने अस्तित्व को खतरे में देखकर स्थानीय लोग विचलित हैं और वे सब आज अपने व्यक्तित्व की तलाश में हैं। यहां के शिक्षित बेरोजगार नवयुवक भूमि पुत्र (लोकल) रोजगार के लिए प्राथमिकता देने की मांग लेकर एक मूक आंदोलन के प्रवर्तक बन गए हैं, क्योंकि उनकी आशंका है कि बाहर के लोग इन द्वीपों में आकर रोजगार के उनके मूल अधिकारों पर प्रहार कर रहे हैं। उनके अनुसार यह उनके पूर्वजों की तपस्या थी, जिन्होंने अपने खून पसीने के परिश्रम से जिसमें अनेक शहीद भी हो गए, इन सुदूर दुर्गम द्वीपों में खराब जलवायु व मौसम में हिंसक आदिवासी तथा अंग्रेज अधिकारियों की बेंतों की मार सहकर कैदी बस्ती बनाई। भूमि पुत्रों (लोकल) में एक तीव्र भावना बढ़ रही है कि वे अपने ही घर में अजनबी बनने की स्थिति में आ रहे हैं। वे किसी भी तरह दूसरी श्रेणी के नागरिक बनने को तैयार नहीं हैं। इन द्वीपों में एक लम्बी अवधि तक़ रहने के बीच लेखक ने इस संबंध में वहां के बुद्धिजीवियों, जन साधारण, युवाओं, महिलाओं तथा छात्रों से व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से चर्चा की। लेखक को यह जानकर बहुत अचंभा हुआ कि प्रशासन की वर्तमान नीतियों के प्रति उनमें बहुत असन्तोष है क्योंकि उनके अनुसार उनकी जितनी सहायता होनी चाहिए नहीं हो रही है। ऐसा प्रतीत होता है कि उनका विश्वास प्राप्त करने की दिशा में कोई ठोस कदम नहीं उठाए गए हैं, न तो उनकी आंतरिक भावनाओं को समझने का प्रयास किया गया है और न ही द्वीपों के विकास में उनका महत्वपूर्ण योगदान लिया गया है। सच बात तो यह है कि आजादी के बाद भी इन द्वीपों का प्रशासन अंग्रेजों की औपनिवेशिक पद्धति पर चलता रहा और जनता तथा सरकार के बीच की इस खाई को पाटने का प्रयास मुख्य आयुक्त महाबीर सिंह के अतिरिक्त किसी

और ने नहीं किया। किन्तु उनका कार्यकाल भी उन वांछनीय तत्वों ने घटा दिया जो उनकी आम जनता के प्रति सद्भावना को लोगों को शोषण करने की नीति में बाधक समझते थे। स्वाभिमान, आत्मसुरक्षा, तथा सद्व्यवहार की भावना जगाने के लिये कुछ कर गुजरने की भावना से कुंठित उनका मन अन्दर ही अन्दर कचोट रहा था और सहसा यह गुबार 1980 में पोर्ट ब्लेयर में एक विशाल प्रदर्शन के रूप में फूट पड़ा। इस दिन की स्मृति प्रत्येक दर्शक के हृदय पटल पर सदैव अंकित रहेगी। सभी पुरुष, महिलाएं बच्चे, वृद्ध, अपंग यहां तक कि अमीर घराने की महिलाएं सब अंडमान के इतिहास में पहली बार बाजार व सड़कों पर निकल आईं। ऐसा लगता था, सारा शहर सड़कों पर आ गया, इतना विशाल प्रदर्शन इससे पूर्व कभी देखने में नहीं आया। उन्हें स्वयं नहीं मालूम था कि उन्हें क्या चाहिये लेकिन उनके चेहरे से एक भाव अवश्य झलक रहा था कि कहीं कुछ गड़बड़ जरूर है जिसे तुरन्त सुधारना होगा। इस प्रदर्शन को देखकर स्वयं इसके आयोजक आश्चर्यचकित थे उन्होंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि यह जुलूस इतना बड़ा होगा। अपनी मांगों से भरा एक प्रतिवेदन उन्होंने प्रशासन को दिया। अब द्वीप विकास अधिकरण की स्थापना से आशा की जाती है कि इस दिशा में समुचित कदम उठाये जायेंगे।

3. धार्मिक व्यवस्था

अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह भारत के धार्मिक स्वरूप की मूल भावनाओं का सही प्रतिनिधित्व करते हैं यहां पर हिन्दुओं की काफी संख्या है और वहां पर अनेक मन्दिर भी हैं जहां त्यौहारों पर बड़े उत्साह पूर्वक पूजापाठ होती है। पोर्ट ब्लेयर में राधा गोबिन्द का मन्दिर बहुत बड़ी भीड़ एकत्रित करता है। जंगलीघाट में शिवजी व दुर्गा का मन्दिर है जहां पर नियमित रूप से लोगों की भीड़ कीर्तन भजन करती रहती है। दुर्गा पूजा का त्यौहार पोर्ट ब्लेयर तथा अन्य द्वीपों में जहां भी बंगाली लोगों की आबादी है, बड़े धूमधाम से मनाया जाता है। दुर्गा की बहुत सुन्दर मूर्तियां बनाई जाती हैं कुछ तो इसके लिए मूर्तिकारों को बाहर से मंगवाते हैं। तमिल तेलुगु व मलयालियों व महाराष्ट्रियों के विभिन्न तीज-त्यौहार भी बडे उत्साह के साथ मनाए जाते हैं। एक विचित्र बात इस संबंध में जो यहां पर देखने में आती है वह यह है कि कोई भी त्यौहार चाहे वह किसी भी वर्ग या धर्म का हो हिन्दू, मुसलमान, ईसाई सभी द्वीपवासी उसी उत्साह से उसमें भाग लेते हैं। पोर्ट ब्लेयर में एक सुन्दर गुरुद्वारा है। एक अन्य गुरुद्वारा ग्रेट निकोबार के कैम्पल बे में है।

इन द्वीपों में अनेक सामाजिक एवं धार्मिक संस्थाएं भी स्थापित की गई हैं जिनमें अधिकांश पोर्ट ब्लेयर में हैं। स्वामी विवेकानंद स्मारक समिति द्वारा पोर्ट ब्लेयर में एक शिक्षा संस्थान खोला है जहां पर गोष्ठियां तथा वाद-विवाद होते हैं। चिन्मयानन्द मिशन भी उसी प्रकार की संस्था चलाता है। यहां पर एक स्कूल आनन्दमार्गियों द्वारा भी चलाया जाता है। इन द्वीपों में "बहाई" संस्था भी कई वर्षों से काम करती आ रही है।

पोर्ट ब्लेयर में ईसाईयों की भी काफी संख्या है जिसमें रोमन कैथोलिक तथा मैथोडिस्ट

चर्च दोनों के अनुयायी सम्मिलित हैं। उनके बहुत सुन्दर गिरजाघर हैं तथा उनके शिक्षा एवं निःशुल्क सेवा संस्थान भी हैं जिनमें एक "कारमल गर्ल्स स्कूल" है जो कि काफी प्रसिद्ध है।

बिशप श्रीनिवासन इन द्वीपों में एक लम्बे समय तक रहने से स्वयं ही एक संस्था बन गए थे। वे मैथोडिस्ट चर्च के अनुयायी थे तथा इन द्वीपों के अतीत के इतिहास की उन्हें अच्छी जानकारी थी। कुछ ही वर्ष पूर्व उनकी मृत्यु हुई। उन्होंने लेखक को एक बड़ी रोचक कहानी सुनाई कि किस प्रकार अंग्रेजी शासन काल में एक सुकुमार कैदी लड़के को दयालु ईसाई पादरी ने बाहर भगा दिया जिससे इस बात की पुष्टि होती है कि यूरोपीय शासकों तथा ईसाई पादरियों के बीच बहुत तालमेल था। श्रीनिवासन के अनुसार एक बार कालापानी की सजा भुगतने के लिए आने वाले कैदियों में एक लड़का जिसकी अभी दाढ़ी-मूंछ भी नहीं निकली थी, अंग्रेज पादरी, जिसकी उस लड़के पर अचानक दृष्टि पड़ी, दया से उसका हृदय भर उठा। पादरी उसके भोलेपन से इतना अधिक प्रभावित हुआ कि उसने अधिकारियों से उसको छोड़ने का बहुत आग्रह किया। कानून के अनुसार उसे छोड़ा नहीं जा सकता था इसलिए एक गुप्त मंत्रणा के अनुसार एक मुसलमान पर्दानशीन् औरत के वेश में उसे बुर्का उड़ाकर विदेश में किसी अज्ञात स्थान के लिए चुपचाप प्रस्थान करा दिया।

वाराटांग द्वीप में रांची (बिहार) से आए बहुत से लोग कई वर्षों से रह रहे हैं उनमें अधिकांश लोगों ने ईसाई धर्म अंगीकार कर लिया है। अधिकतर लोग वन विभाग में मजदूर के रूप में काम करते हैं बाकी और दूसरी मजदूरी का काम करते हैं। ईसाई पादरियों ने उनके लिए वहां गिरजाघर, स्कूल आदि खोले हैं।

निकोबार द्वीप समूह की कहानी सर्वथा भिन्न है। जहां तक जीवनचर्या का संबंध है अंडमान तथा निकोबार द्वीपसमूह के लोगों में जमीन आसमान का अन्तर है। यहां तक कि दोनों का इतिहास भी भिन्न है। कार निकोबार द्वीप के निकोबारी लोगों को ईसाई बनाने के अथक प्रयास किए गए ताकि इन द्वीपों पर अधिपत्य स्थापित कर इन्हें उपनिवेश बनाया जा सके। बहुत पहले 1688 में दो ईसाई धर्म प्रचारक जो शायद "जेस्यूट" थे कमोर्टा द्वीप में रहते थे। उनका क्या हुआ इसके विषय में कोई जानकारी नहीं है। अठारहवीं सदी के आरम्भ में पांडुचेरी में रहने वाले फ्रांसीसी ईसाई धर्म प्रचारकों ने इन द्वीपों में रूचि दिखाई। फादर पितरे व फादर बोनटे1711 में निकोबार में पहुंचे किन्तु दोनों खराब जलवायु तथा बुखार से मर गए। सन् 1741 में फादर चार्ल्स दे मोन्टलमबेट आया किन्तु खराब जलवायु के कारण वह भी 1742 में लौट गया और शीघ्र ही मर गया।

सन् 1769 में डेनमार्क के छः ईसाई धर्म प्रचारक आए किन्तु खराब जलवायु तथा बीमारी से अधिकांश मर गए और 1787 तक केवल एक ईसाई धर्म प्रचारक कार्ध जीवित था, उसे भी बीमारी की हालत में वहां से ले जाना पड़ा। ग्यारह ईसाई धर्म प्रचारकों का थोड़े समय के अन्दर नुकसान होने से मोरे वियन मिशन का दिल ही बैठ गया। इतने बड़े

कष्ट व बलिदान पर भी वे एक भी व्यक्ति को ईसाई नहीं बना सके। सन् 1831 में एक अन्य डेनमार्क का धर्म - प्रचारक रोजन कार निकोबार पहुंचा किन्तु गंभीर रूप से बीमार पड़ जाने के कारण उसे भी 1834 में लौट जाना पड़ा। फ्रांसिसी धर्म - प्रचारकों सुपीज व गैलवर्ट ने ईसाई धर्म के प्रचार के लिए 1836 से 1845 तक अनेक प्रयास किए किन्तु वे सभी विफल रहे।

अंग्रेजों ने 10 अप्रैल 1866 को औपचारिक रूप से निकोबार द्वीप समूह पर अधिपत्य जमाया (संभवत: भारत का यही भाग था जिस पर उन्होंने अन्तिम बार कब्जा किया)। वे निकोबारियों से दोस्ती बढ़ाना चाहते थे किन्तु जो अंग्रेज वहां भेजा गया वह कुछ भी नहीं कर सका। निकोबारी समाज बिल्कुल अन्तर्मुखी है, ये सब ईसाई धर्म प्रचारक इतने वर्षों तक इस समाज पर किसी भी प्रकार का प्रभाव डालने में पूर्णतया असफल रहे। किसी अंग्रेजी कवि ने भारत के ग्रामीण जीवन के बारे में लिखा था "विदेशी गरजती सेनाओं को जाने दिया और फिर अपनी दुनिया में खो गए" इसी प्रकार यहां के निकोबारियों पर भी इन ईसाई पादरियों के प्रयासों का कोई असर नहीं हुआ। अंग्रेजों ने एक दक्षिण भारत के भारतीय ईसाई पादरी वेदाप्पन सोलोमन की सेवाओं का प्रयोग किया।

सोलोमन पोर्ट ब्लेयर के हाडो में एक मिशन स्कूल चला रहा था। उसने किसी तरह से निकोबार के कुछ अभिभावकों को अपने बच्चों को पढ़ने के लिए पोर्ट ब्लेयर भेजने के लिए राजी कर लिया, जहां पर उनके रहने की व्यवस्था भी कर दी गई। एक इतवार को इन लड़कों को लकड़ी लाने के लिए एक छोटी सी डोंगी में बन्दरगाह के दूसरे किनारे बम्बूफ्लैट भेज दिया गया। स्वाभाविक रूप से लड़कों को अपने घर की बहुत याद सताती थी। जैसे ही वे बन्दरगाह में पहुंचे, समुद्र तथा ताजी हवा ने उन्हें अपने प्यारे घर की मधुर-स्मृति से सहसा बेचैन कर दिया और कार निकोबार भाग जाने के लिए उन्होने डोंगी को खुले समुद्र की ओर मोड़ दिया। समुद्र की ऊंची लहरों के सामने भीषण व खतरनाक डिग्री पर समुद्र को पार करना। जिसकी आशंका थी वही हुआ। नाव तथा लड़कों का कहीं कोई निशान तक नहीं मिला। इस त्रासदी ने सोलोमन को बहुत उदास व दु:खी कर दिया। इन बच्चों को पोर्ट ब्लेयर लाने के पाप का प्रायश्चित करने तथा अभिभावकों को सान्त्वना स्वरूप कार निकोबार में एक स्कूल खोलना चाहता था। अंग्रेज तुरन्त राजी हो गए और उन्होंने सोलोमन को निकोबार में अपना प्रतिनिधि नियुक्त कर दिया।

सोलोमन ने निकोबारियों से मित्रता के संबंध जोड़ने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कार्य किया। यद्यपि वह वहां पर धर्म परिवर्तन कराने में सफल नहीं हुआ फिर भी वह इस जनजाति को महान नेतृत्व प्रदान कराने की दिशा में एक माध्यम अवश्य बना। इस नए नेतृत्व ने इन द्वीपों के इतिहास को एक नया मोड़ दिया। निकोबार के स्कूल में पढ़ने वाले विद्यार्थियों में एक होनहार तीव्र बुद्धि का प्रतिभावान बालक था, जिसको आगे पढ़ने के लिए रंगून भेज दिया गया जहां उसे ईसाई बनाकर उसका नामकरण कर निकोबार लौट

आया । नब्बे वर्ष की आयु में 1979 में मरने तक इन द्वीपों का भाग्य विधाता बना रहा है । निकोबारियों का तो वह मित्र, दार्शनिक व मार्गदर्शक सब कुछ था । वह सोलोमन का असली शिष्य था और कुछ बातों में तो वह सोलोमन से भी अधिक क्रियाशील था । निकोबारियों का धर्म परिवर्तन कर उन्हें ईसाई बनाने का काम तो अब तक विभिन्न देशों के ईसाई पादरी व धर्म प्रचारक न कर सके, जिसे स्वयं सोलोमन नहीं कर पाया वह रिचर्डसन ने पूरा कर दिखाया । जिस प्रकार स्वामी विवेकानन्द रामकृष्ण परमहंस के शिष्य थे उसी प्रकार का रिचर्डसन ने सोलोमन के शिष्य के रूप में सबसे बड़ा काम किया ।

यद्यपि सभी निकोबारियों ने ईसाई धर्म ग्रहण कर लिया, जो एक प्रकार से बिशप रिचर्डसन की व्यक्तिगत उपलब्धि है, जिसने ईसाई धर्म प्रचारकों के सदियों के स्वप्न को साकार किया किन्तु वह भी निकोबारियों को उनके पारम्परिक रीति रिवाजों तथा मान्यताओं से छुटकारा नहीं दे सका । यह केवल एक बाहरी स्वरूप का परिवर्तन था जब कि अंतर्रात्मा वही बनी रही । वे अब भी अपने मृतकों की पारम्परिक पूजा करते हैं तथा भूतप्रेत को भगाने के लिए तंत्र मंत्र करते रहते हैं । सूअर का बलिदान कर तथा उसके खून को शरीर में लगाने की व अपनी प्राचीन सामूहिक पूजा अब भी करते हैं । ईसाई धर्म अपनाने से उनकी जीवनचर्या में किसी प्रकार का अन्तर नहीं आया । कुछ निर्धारित दिनों में गिरजाघर जाने के अलावा शेष समय में वे अपने भूत-प्रेतों की पूजा में लगे रहते हैं ।

इन द्वीपों में विभिन्न धर्मों के अनुयायी की संख्या पिछले दशकों में इस प्रकार रही है :-

धर्म	*जनगणना*			
	1951	1961	1971	1981
हिन्दू	9,284	32,781	70,334	121,793
मुसलमान	4,783	7,398	11,655	16,188
ईसाई	9,494	17,973	30,342	48,274
सिख	126	241	865	991
बौद्ध	1,604	1,707	103	127
जैन	1	3	14	11
अन्य	5,669	3,445	2,020	1,357
योग	**30,961**	**63,548**	**1,15,333**	**1,88,741**

बौद्धों की संख्या में अप्रत्याशित कमी, बर्मा के लोगों का समझौतों के अंतर्गत स्वदेश लौट जाने के फलस्वरूप हुआ प्रतीत होता है।

5. प्रादेशिक - जनसंख्या

बंगाली

बंग्लादेश (पूर्वी बंगाल) से आए अधिकांश विस्थापित दक्षिण अंडमान, नेल, हैवलाक, मध्य अंडमान, उत्तरी अंडमान तथा लिटिल अंडमान में बसाए गए। अंडमान द्वीप समूह में बंगालियों की संख्या सबसे अधिक है। विस्थापितों के अतिरिक्त वैसे भी पश्चिम बंगाल के बहुत से लोग इन द्वीपों में पहले से रहते थे। यहां सेवारत अधिकांश सरकारी कर्मचारी भी बंगाल से आए। चोरी छिपे भी अनेक बंग्लादेश के बंगाली व अन्य यहाँ आते रहे और कुछ लोगों ने अनाधिकृत बस्तियां भी बना ली हैं उनमें से एक उत्तरी अंडमान के पश्चिम सागर में है जहां पर वनों को काट कर यह नाजायज बस्ती बनाई है जिसको खाली कराना प्रशासन के लिए एक कठिन समस्या बन गई है। दक्षिण अंडमान में वन्डूर के समीप भी ऐसी ही बस्तियां बनाई गई हैं।

ये बंग्लादेश (पूर्वी बंगाल) से आए विस्थापित जो इन द्वीपों में पुनर्वास योजना के अंतर्गत बसाए गए, बहुत ही संवेदनशील व भावुक व्यक्ति हैं। इन द्वीपों में इतनी लम्बी अवधि तक रहने पर आज भी उन्हें अपनी मातृभूमि की मधुर स्मृति विह्वल कर देती है। शस्यश्यामला बंगभूमि बहुत सम्पन्न है तथा भूमि की उपजाऊ शक्ति का तो कहना ही क्या है। बस नर्म भूमि में बीज फेंक दीजिए जो अंकुरित होकर धान की लहलहाती फसल दे देगा। सख्त जमीन को जोतने का प्रश्न ही नहीं है। गांव में ही या तो तालाब है या पास में बहती नदी है जहां पर्याप्त मछली उपलब्ध हो जाती है। कई कवियों ने इस महान भूमि की प्रशंसा के गीत गाए हैं। महान कवि गुरुवर रवीन्द्रनाथ टैगोर ने इस सुन्दर, सुनहली धरती को अपनी कविताओं में "सोनार बंग्ला" कहा है। खेती में कठिन परिश्रम की तो आवश्यकता ही नहीं सिवाय बोने व काटने के और पास में पर्याप्त मछली उपलब्ध होने के कारण अधिकांश बंगाली अपना समय मानव जीवन की सुन्दरतम अनुभूतियों को कलात्मक स्वरूप प्रदान करने के प्रयास में लगे रहते हैं, जो जीवन को वास्तव में रंगीन व सार्थक बनाते हैं। साधारण तौर पर प्रत्येक बंगाली जन्म से कलाकार होता है। उनका संगीत प्रेम, नृत्य, कला, साहित्य इत्यादि सारे विश्व में प्रसिद्ध है जिसका दिग्दर्शन उनके त्यौहारों पर होता है। इस प्रकार का दुखद जीवन जीने के बाद पुरानी पीढ़ी के लोग इस नए जीवन से, जिसमें कि जीने के लिए कड़ा संघर्ष करना पड़ता है, समझौता नहीं कर पा रहे है।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि पश्चिम पाकिस्तान से आए विस्थापित जो देश के सभी भागों में बिखर गए, विशेष रूप से अधिकांश लोग दिल्ली में बसे, उन्होंने केवल अथक परिश्रम व लगन से न केवल अपना अच्छी तरह पुनर्वास किया बल्कि उनमें से अधिकांश

की आर्थिक स्थिति पहले से भी कहीं अच्छी बन गई है। इस प्रकार से मजबूरी में घरों को छोड़ना उनके लिए एक प्रकार से वरदान सिद्ध हुआ, क्योंकि इसमें उनको अथक परिश्रम व लगन से अपने भाग्य को बदलने तथा बदलती हुई परिस्थितियों से समझौता करने का सुनहला अवसर मिला। ठीक इसके विपरीत बंग्लादेश (पूर्वी बंगाल) से आए विस्थापितों में से कुछ लोग आज भी कलकत्ता, हावड़ा पुल व दंडकारण्य के बीच रोजी-रोटी तथा आश्रय की तलाश में भटक रहे हैं और उनकी स्थिति अत्यन्त दयनीय है क्योंकि अभी तक देश के विभाजन के सदमे से वे अपने को मुक्त नहीं कर सके हैं।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, जो विस्थापित इन द्वीपों में बसाए गए उन्होंने बदलती परिस्थितियों से अभी तक समझौता नहीं किया है। इसका मुख्य कारण है उनकी सख्त परिश्रम न करने की आदत तथा शारीरिक रूप से भी वे इतने मजबूत नहीं हैं कि लम्बे समय तक कड़ा परिश्रम कर सकें। थोड़ी भी असुविधा से वे विचलित हो उठते हैं और सरकारी कर्मचारियों के लिए उन्हें रास्ते पर लाना एक विकट समस्या बन जाती है। जब भी उनकी बस्ती में किसी विशिष्ट व्यक्ति का आगमन होता है, वे अपनी दर्दभरी दास्तान सुनाने के लिए एकत्रित होते हैं तथा भरी सभा में ललित साहित्य व माधुर्य व करूण रस से परिपूर्ण एक प्रतिवेदन को भावावेश में पढ़ते हैं। प्रतिवेदन देश के विभाजन से प्रारम्भ होकर उनके दर-दर भटकने व ठोकर खाने के हृदय विदारक करुण दृश्य प्रस्तुत करता है जिसको पढ़ते-पढ़ते भाव-विभोर पाठक की स्वयं आँखें छलछला उठती हैं और यह नाटकीय दृश्य विशिष्ट अतिथि पर अमिट छाप छोड़ता है।

जहां भी ये जाएंगे "सोनार बंग्ला" सदैव इनके साथ रहेगा। उनका संगीत प्रेम तथा जीवन के प्रति एक दार्शनिक दृष्टिकोण उन्हें यहां की धरती पर टिकाए हुए है। दुर्गा पूजा के अवसर पर यहां के गांवों का समस्त वातावरण एक लघु बंगाल का बन जाता है। इससे वास्तव में उन्हें एक अनुपम शान्ति मिलती है और इसमें वे अपना सारा तन, मन व धन लगा देते हैं। कलकत्ता जाना इन सबके लिए तीर्थाटन की तरह है। गांवों में रहने वाला हर बंगाली कलकत्ता जाने का स्वप्न देखता है। जब भी अच्छी पैदावार होगी उनका पहला काम यही होगा कि अपनी आवश्यकतानुसार अनाज अलग रख कर शेष अनाज बेचकर प्राप्त धनराशि से प्रथम सुलभ पानी के जहाज से कलकत्ता के लिए प्रस्थान करना। लौटने पर वह वहां का आंखों देखा हाल बड़े रोचक व सरस शब्द चित्रों में प्रस्तुत करता है।

यहां पर बंगाली माध्यम से शिक्षा के अनेक विद्यालय हैं इस संबंध में उनकी कोई विशेष समस्या नहीं है एवं रवीन्द्र उच्चतर विद्यालय पोर्ट ब्लेयर शिक्षा के अतिरिक्त पोर्ट ब्लेयर के लोगों की सांस्कृतिक व कलात्मक प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देता है। पोर्ट ब्लेयर में अतुल समिति क्लब है जो विभिन्न प्रकार की गतिविधियों का केन्द्र है। यहां पर हिंदी नाटक का मंचन भी होता है जो बहुत पसन्द किया जाता है।

बंगाली लोगों को खाने पीने की कोई असुविधा नहीं है। चावल मिलने की कोई

कठिनाई नहीं है मछली भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है किन्तु वे समुद्र की मछली अधिक पसन्द नहीं करते और मीठे पानी की मछली के लिए तरसते हैं।

हिन्दी

भूमि पुत्र (लोकल) के अंतर्गत इस संबंध में काफी लिख दिया गया है और इसके अंतर्गत कोई विशेष वर्ग नहीं आता। इन द्वीपों के लोगों ने हिन्दी भाषा को एक संपर्क भाषा के रूप में अपना लिया है वैसे यह यहां की राजभाषा भी है। कुछ ही समय पूर्व जब प्रदेश परिषद् में किसी अधिकारी ने अंग्रेजी में बोलना प्रारंभ किया तो तमिल मूल के मरुधवानन्द जो तब डी. एम. के पार्टी के स्थानीय शाखा के अध्यक्ष थे इस पर आपत्ति उठाते हुए कहने लगे, "साहब यह हिन्दुस्तान है - हिन्दी में बोलिए" यहां पर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए हिन्दी साहित्य सम्मेलन संस्थान है और एक अन्य संस्थान "नवपरिमल" के नाम से है और इस संस्था ने हिन्दी के प्रचार व प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और संस्थान कवि-सम्मेलन व साहित्यिक गोष्ठियां आदि आयोजित करता रहा है तथा गैर हिन्दी लोगों की हिन्दी रचनाओं पर उन्हें सम्मान देता रहा है। इस संस्थान ने गैर हिन्दी क्षेत्र के हिन्दी लेखकों का सम्मान करने के अतिरिक्त तुलसी व सूर जयन्ती तथा प्रेमचन्द शताब्दी समारोह आदि मनाए हैं।

निकोबारी

अंडमान व निकोबार द्वीप समूह के मूल निवासियों में आदिवासियों की बहुत छोटी आबादी को छोड़कर, जोकि अब समाप्ति के कगार पर खड़े हैं, निकोबार द्वीपों में स्थित निकोबारी ही एकमात्र मजबूत व जिन्दा कौम है जिसकी मुख्य आबादी कार निकोबार द्वीप में है। अधिकांश इतिहासकार तथा मानवशास्त्री इनकी उत्पत्ति के विषय में किसी ठीक निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सके हैं। यह एक प्राचीन कौम है जो इन द्वीपों में रहती थी और ये मंगोल जाति के मूल से निकले प्रतीत होते हैं। कुछ लोग उनकी उत्पत्ति का मूल तिब्बती-बर्मी या मलेय जनजाति बताते हैं जब कि सर रिचर्ड वेम्पल द्वारा उन्हें इन्डोचाइना कौम के वंशज कहा गया है।

जिस प्रकार जल में मछली रहती है उसी प्रकार निकोबारी भी इन द्वीपों में घुल मिल गए हैं। पिछले पृष्ठों में हमने देखा है कि किस प्रकार एक के बाद एक विदेशी ईसाई धर्म प्रचारकों के दल इस धरती में समा गए लेकिन यह कितने आश्चर्य की बात है कि इसी अवधि में निकोबारी - जो यहां की प्रकृति के बच्चे हैं, इन द्वीपों में फलते-फूलते रहे। निकोबारियों को मलाया के समुद्री डाकुओं से, जो निरन्तर इन समुद्र तटों पर आते रहते थे, सदैव भय व आतंक बना रहता था। उन्होंने इन्हीं डाकुओं के साथ जहाजों को लूटना तथा नाविकों को मारना भी सीखा। नहीं तो वे कभी भी हिंसा नहीं अपनाते थे। मलाया के ये समुद्री डाकू अक्सर इनकी बस्तियों पर हमला बोल देते तथा उन्हें गुलाम बनाकर

दक्षिण पूर्व एशिया के बाजारों में बेच देते । यहां तक कि उन्होंने बेचारे गरीब सोम्पेन आदिवासियों तक को नहीं छोड़ा । वे इतने घबरा उठे कि उन्होंने मजबूरन जान बचाने के लिए घने वनों के अंदर शरण ले ली । अब भी मलाया की अनेक नावें यहां के समुद्रतट पर तस्करी का माल लेकर आती हैं ।

निकोबारी बहुत ही मस्त मौला तबीयत के लोग हैं । ए. एल. वटलर ने 1897 के सप्लीमेन्टरी अंडमान व निकोबार गजट में लिखा "कार निकोबार कें लोग दुनिया के सबसे अधिक सन्तुष्ट लोगों में अवश्य होंगे । प्रत्येक व्यक्ति अपने पड़ोसी के साथ पूर्ण बराबरी के स्तर पर रहता है । कभी-कभी थोड़ी बहुत बीमारी के अलावा न उन्हें कोई कष्ट है और न चिन्ता और जीवन निर्वाह के लिए कभी कोई संघर्ष नहीं करना पड़ता । नारियल व केवड़ा उनका मुख्य भोजन इतनी अधिक मात्रा में उपलब्ध है कि कोई भी बच्चा, जो पेड़ पर चढ़ने लायक हो, बिना परिश्रम के स्वयं अपना निर्वाह कर सकता है ।"

निकोबारियों ने अपना सामाजिक ढांचा इतना ठोस व मजबूत बनाया है कि वर्तमान कानून तथा कानूनी व्यवस्था इस को भेदने में अभी तक समर्थ नहीं हो सकी है । यह रीति-रिवाजों पर आधारित सरल लोकतंत्र का स्वरूप है सिवाय हत्या के मामलों को छोड़कर । आज भी वे बाकी सभी मामले आपस में कैप्टन या चीफ कैप्टन या कौंसिल की मदद से निबटा लेते हैं बशर्ते कि उनमें बाहर के लोग संबंधित न हों । वे तो चाहेंगे कि हत्या के मामले भी उन्हें उनकी जनजाति के नियमों के अनुसार निपटाने की सुविधा दी जाये किन्तु सरकार ऐसे किसी प्रस्ताव को कदापि नहीं मान सकती । इस संभावना से इन्कार नहीं किया जा सकता कि बहुत बार इस प्रकार के संगीन मामले उन्होंने निपटा दिए हों जिसकी हवा भी प्रशासन को न लगने दी गई हो । "वही सरकार सबसे अच्छी है जो सबसे कम शासन करती है" यह कहावत निकोबारियों के ऊपर पूर्ण रूप से लागू होती है जो इस बात को बिल्कुल पसन्द नहीं करते कि सरकारी तंत्र उनकी जीवनचर्या में किसी प्रकार का विघ्न डाले । जब भी कार निकोबार में कोई अति विशिष्ट व्यक्ति आता है वे यही कहते हैं कि उनकी कोई मांग नहीं । उनका केवल एक ही निवेदन होता है कि सरकारी कर्मचारियों की फौज को वहां से वापस ले लिया जाये ।

सदियों की परम्परा से मुखिया का स्थान बहुत बड़ा हो गया है । अंग्रेजों ने निकोबारी लोगों पर अपना प्रभुत्व जमाने तथा मुखिया का प्रभाव कम करने की दृष्टि से गांव के "मेलूनस" के साथ एक षड्यंत्र रचा ताकि अंग्रेज जो चाहते थे वह मेलूनस के मुंह से कहलाया जा सके । किन्तु उनकी यह चाल विफल रही । सरकार को कैप्टन के पद को मान्यता देनी पड़ी । यदि मृत्यु आदि के कारण यह पद रिक्त भी हुआ तो उत्तराधिकारी की नियुक्ति पर उन्होंने चुपचाप अपनी मुहर लगा दी । सन् 1931 की जनगणना के आख्यान में इस पद्धति के विषय में इस प्रकार लिखा गया है "प्रत्येक गांव के समूह या समूहों का अपना मुखिया होता है जो इस पद को या तो विरासत से प्राप्त करता है या सरकार द्वारा

नियुक्त होता है । मुखिया या चीफ आमतौर से वह व्यक्ति होता है जो अपनी विशेष सम्पन्नता के कारण, जोकि उसके द्वारा पाले गए सूअरों की संख्या तथा उसके नारियल के पेड़ों के बगीचे के आकार से आंका जा सकता है, समाज के अन्दर प्रभावशाली बन गया हो" ।

कार निकोबार द्वीप में निकोबारी लोग अक्सर नारियल या केवड़े ले जाते हुए, शकरकंद को खोदते हुए या मछली पकड़ते हुए देखे जा सकते हैं । वे खेलकूद, तैरना, नाव चलाना आदि के बहुत शौकीन हैं । बिशप रिचर्डसन का इन द्वीपों को सबसे बड़ा वरदान है पाश्चात्य खेलों का प्रचलन, जिन्हें अब यहां पर पूर्ण रूप से अपना लिया गया है । फुटबाल, वालीबाल, हाकी, बैडमिंटन, टेबल टेनिस, क्रिकेट आदि प्रत्येक खेल बड़े लगन व उत्साह से खेला जाता है, यहां तक कि महिलाएं भी इन खेलों में भाग लेती हैं । प्रत्येक ग्राम की महिला वालीबाल टीम वार्षिक अन्तर्ग्रामीण महिला वालीबाल प्रतियोगिता में भाग लेती है, जिसे देखने के लिए हजारों दर्शक आते हैं ।

खेलों का आम स्तर बहुत अच्छा है विशेष रूप से फुटबाल बहुत अच्छा खेलते हैं । यह अत्यन्त गर्व की बात है कि इन सुदूर समुद्र के मध्य स्थित कार निकोबार द्वीप के उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के छात्र अखिल भारतीय स्तर पर सुब्रतो फुटबाल प्रतियोगिता में हर वर्ष भाग लेकर अपने अच्छे प्रदर्शन द्वारा दिल्ली की जनता को प्रभावित करते हैं, दो बार तो वे सबको हराकर "शील्ड" ले गए हैं । अन्तिम बार वे 1884 में जीते थे । इसका असर देशों के सभी फुटबाल प्रेमियों पर पड़ा है । यदि इसी टीम को उच्च प्रशिक्षण देकर भारत का प्रतिनिधित्व करने अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर भेजा जाये तो संभवतः वर्तमान निराशाजनक प्रदर्शन में सुधार हो सकता है ।

वर्ष भर निकोबारी कोई न कोई त्यौहार मनाते ही रहते हैं या तो सामाजिक या धार्मिक । सामाजिक त्यौहार हंसी खुशी तथा मौज-मस्ती के वातावरण में मनाए जाते हैं जबकि धार्मिक त्यौहार भूत पिशाचों को ढूंढने, मनाने या भगाने के लिए मनाए जाते हैं । "कानाहा" का त्यौहार बारी-बारी से अलग-अलग गांवों में मनाया जाता है । त्यौहार के लगभग एक सप्ताह पूर्व दूसरे गांवों को निमंत्रण पत्र भेजे जाते हैं । निमंत्रण स्वीकार करने वाले व्यक्ति को सूअर का गोश्त, शकरकंद, केला, पपीता, कूवेन (रोटी व फल की खीर) जो कि दस व्यक्तियों के लिए पर्याप्त हो लानी होती है ।

कार निकोबार के लोग सूअरों को बड़े चाव से पालते हैं, यही एक जानवर है जो उनके सभी धार्मिक तथा सामाजिक कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । सूअर के बलिदान के बाद वे उसका खून अपने बदन पर मल लेते हैं । विशेष रूप से बच्चों के पेट पर मला जाता है । इनका विश्वास है कि इसको इस प्रकार लगाने से सूखा या अन्य उदर रोग से पीड़ित बच्चे ठीक हो जाते हैं । हमने अस्पतालों में मनुष्य के खून को दूसरे व्यक्ति में रुधिर चढ़ाने की क्रिया तो देखी है पर इस प्रकार से सीधे रक्त लगाना नहीं देखा । संभवतः कभी कोई भावी विज्ञानी शोधकर्त्ता इस प्रक्रिया के लाभ पर प्रकाश डाल सके ।

नाव का त्यौहार मनाने के लिए निकोबारी लोग सूअर को एक विशेष बाड़े के अन्दर एक महीने तक खूब खिलापिला कर मोटा करते हैं। त्यौहार के दिन इन्हें बाहर निकाल कर इनकी आंपस में लड़ाई कराई जाती है तत्पश्चात उनका बलिदान किया जाता है। रात देर तक यह सामूहिक नाच गाना चलता रहता है उसके बाद वास्तविक डोंगी (कैनों) का त्यौहार प्रारंभ होता है। इसमें चौरा ग्राम से डोंगी (कैनों) को कार निकोबार लाया जाता है और एक विशेष कुटिया में पूजा की जाती है। चौरा ग्राम समस्त निकोबारियों द्वारा बड़ी श्रद्धा से देखा जाता है।

निकोबारी लोगों का समाज बहुत स्वतंत्र है। वहां पर नवयुवकों व नवयुवतियों को मिलने-जुलने की न केवल खुली छूट है वरन् उन्हें अपनी मर्जी का जीवन साथी चुनने के लिए हर प्रकार से प्रोत्साहित किया जाता है। यह व्यवस्था बहुत अच्छी तरह से चल रही है। निकोबारियों में न तो बहुपति प्रथा है न बहुपत्नी प्रथा है। लेकिन कतिपय मामलों में जिसमें गांव का कैप्टन बहुत साधन संपन्न हो वह एक से अधिक विवाह कर लेता है किन्तु ऐसे मामले बहुत कम हैं। चूंकि इस जनजाति में रुपये पैसे का प्रचलन कम है तथा उपहारों के आदान-प्रदान के लिए सूअर विनिमय का काम करता है। यदि किन्हीं कारणों से दूल्हा निर्धारित सूअरों की संख्या दुल्हन के पिता को देने में असमर्थ हो तो उसे अपने ससुर ही के घर में रह कर काम करना पड़ता है। इस तरह के दृष्टान्त जहां पर दूल्हा-दुल्हन के घर जाता हो यहां पर आम बात है।

नानकोरी, कमोर्टा तथा कचाल में बिना विवाह की औपचारिकता के युवक व युवती का साथ-साथ रहना, जैसा कि पश्चिम के देशों में विशेष रूप से स्केन्डनेवियन देशों में होता है, आम बात है। यदि उनमें से किसी को लगे कि उनका जीवन साथी ठीक नहीं है तो बिना गिला शिकवे के वे अलग हो जाते हैं। रानी लक्ष्मी इस क्षेत्र की एक विशिष्ट व प्रतिष्ठित महिला हैं। वे वहां का सफल नेतृत्व करती हैं तथा उन्होंने समाज में अनेक परिवर्तन किए हैं तथा विवाह प्रथा भी धीरे-धीरे प्रचलित की है। प्रसवकाल आने के कुछ सप्ताह पूर्व पत्नी तथा पति दोनों के लिए सख्त मेहनत का काम करना वर्जित है। प्रसव से कुछ दिन या सप्ताह पूर्व दम्पति एक अलग "जन्म कुटिया" में रहने के लिए चले जाते हैं। पहला बच्चा पैदा होने के लगभग एक माह बाद तक आदमी को एक "लेटने वाली कुटिया" में एक बीमार की तरह लेटे रहना पड़ता है। जिस प्रकार अन्य महिलाएं उसकी पत्नी की देखभाल करती हैं उसी तरह पुरुष वर्ग उसको भी घेरे रहते हैं। लेकिन बाद में जो बच्चे पैदा होते हैं तब आदमी के लिए यह समय घटा कर केवल एक या दो दिन किया जाता है।

कुछ लोग निकोबारियों की धार्मिक प्रथाओं को एक प्रकार से भूत-प्रेतों की पूजा प्रथा मानते हैं। उनका अधिकांश समय उन अनगिनत भूत-प्रेतों को खुश करने या उन्हें मनाने में लगता है। ये भूत-प्रेतों की शक्ति आदमी की ग्रह दशा बदलकर नुकसान करने की शक्ति से डरते हैं और ऐसा विश्वास किया जाता है कि ये दुष्ट शक्तियां जान व माल की बहुत क्षति करती हैं। हटन ने 1931 की जनगणना के विवरण में लिखा "ये भूत-प्रेत न केवल अस्पष्ट

दुष्ट प्रेतात्माएं हैं बल्कि बुजुर्गों की नाराज प्रेतात्माएं भी हैं" । अच्छी प्रेतात्माओं को "ईविका" तथा दुष्ट प्रेतात्माओं को "ईवी" कहा जाता है ।

निकोबारियों में मृत्यु संबंधी अन्त्येष्टि क्रियाएं बहुत महत्वपूर्ण होती हैं । मृत व्यक्ति की प्रेतात्मा को डराने के लिए अन्त्येष्टि बड़े विस्तार पूर्वक की जाती हैं । जब कोई व्यक्ति मृत्यु के समीप हो तो उसे समुद्र तट पर एक निर्धारित स्थान पर बने मृत्युगृह पर लाया जाता है जिसे "इलपानाम" कहते हैं और उसे वहां मरने के लिए छोड़ दिया जाता है । जैसे ही रोगी मर जाता है, गांव के प्रत्येक समूह से मृत व्यक्ति के शरीर को लपेटने के लिए दो गज सफेद व दो गज लाल कपड़ा लिया जाता है । मृतक के शरीर को नारियल के पानी से स्नान करा कर उस पर कपड़ा लपेटा जाता है फिर इसे पुराने नावों के टुकड़ों पर सीधा खड़ा कर बांध दिया जाता है ताकि वह झुके नहीं तथा ले जाने में आसानी हो । मृतक के रिश्तेदार अपने हाव-भाव से शोक प्रकट करते हैं कि वे मृतक की लाश को गाड़ना नहीं चाहते और लाश को गांव की तरफ घसीटना चाहते हैं और दूसरे गांव वाले, जो काफी संख्या में होते हैं, उसे दफनाने की दिशा में ले जाने का प्रयास करते हैं । इस खींचतान में कभी-कभी लोगों को चोटें भी लग जाती हैं तथा लाश को भी क्षति पहुंच जाती है । ऐसा इसलिए किया जाता है कि उसके पूर्वजों की आत्मा को शान्ति मिल सके । यदि वह इलपानाम (मृत्युगृह) में न मर कर अपनी ही कुटीर में मरता है तो सारी कुटीर में आग लगा दी जाती है । मृतक की अन्य सम्पदा जैसे कि केवड़े व नारियल के बगीचे, बांस के पेड़ आदि को तीन साल तक कोई प्रयोग में नहीं ला सकता । चौरा द्वीप में हिन्दुओं की तरह गाँव के सभी पुरुष अपना सिर मुंडा लेते हैं ।

आधुनिक व्यक्ति संभवतः इन रीति-रिवाजों को असभ्य कहकर हंसी उड़ाए और उसे इससे सदमा भी लगे, वह इसे अत्यन्त क्रूर व जंगलीपन की संज्ञा दे सकता है किन्तु हमें इस बात को स्मरण करना होगा कि महासागर के बीच छोटे से द्वीपों में ये लोग विदेशियों के आक्रमण, संक्रामक रोग, बीमारियों, प्रतिकूल जलवायु का सामना कर आज भी जीवित हैं । हमने पिछले पृष्ठों में देखा कि किस प्रकार एक के बाद दूसरे ईसाई धर्म-प्रचारक इस खराब जगह पर मरते गए । वर्षों के अनुभव के बाद उन्होंने संक्रामक व छूत के रोगियों को पृथक रख कर तथा मृतक के साथ उसकी व्यक्तिगत चीजें भी दफनाने से बीमारी से बचने का एक विचित्र हल निकाला है । आज भी हमारे अस्पतालों में इस प्रकार की छूत की बीमारी के रोगियों को पृथक रखने की व्यवस्था है । चूंकि उनके पास ऐसे कोई साधन नहीं थे जिससे कि वे पता लगा सकते कि कौन सी बीमारी छूत की है व कौन सी नहीं है अतः एहतियात के तौर पर उन्होंने इसे आम नियम बना लिया जिसका उन्होंने पूरे मनोयोग से पालन किया है ।

मृतक व्यक्ति बड़ी श्रद्धा से पूजे जाते हैं तथा मृतकों को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए प्रत्येक गांव में बारी-बारी से दूसरे या तीसरे वर्ष एक त्यौहार मनाया जाता है जिसे "ओसुरी"

कहा जाता है । त्यौहार बड़ी धूम से मनाया जाता है तथा कई रातों तक गाना होता रहता है । लेखक भी ऐसे एक समारोह में सम्मिलित हुआ था । यह त्यौहार कई दिनों तक चलता है और अक्सर लोग उदर रोग के शिकार बन जाते हैं, क्योंकि वे अधिक मात्रा में अध-पका सूअर का गोश्त खाते व शराब पीते हैं और ऐसे में प्रशासन को उपचार की विशेष व्यवस्था करनी पड़ती है । कुश्ती व नावों की दौड़ भी आयोजित होती है जिसे देखने पूरे गांव उमड़ पड़ते हैं ।

भूत-पिशाचों को डराने के लिए एक मन्तर-जन्तर जानने वाले व्यक्ति की, जिसे 'म्यनलूनस' कहते हैं, मदद ली जाती है । ऐसा विश्वास किया जाता है कि उसमें इन्हें दूर ही से सूंघ लेने तथा भगा देने की शक्ति है । इन उपायों में एक का नाम "हेन्टा" है, जिसमें सुपारी के पेड़ की सूखी छालों पर या किसी तख्ते पर बड़े सुन्दर कलात्मक ढंग से छीलकर चिन्ह बनाए जाते हैं । दूसरा उपाय है "हेन्टा कोई" इसमें लकड़ी की ऐसी डरावनी आकृतियां बनाई जाती हैं जिन्हें अक्सर लोग चिड़ियों या जंगली जानवरों को भगाने के लिए बनाते हैं । किसी पुरानी कथा पर आधारित जानवर, पक्षी, मछली, मगरमच्छ, या आदमी के आकार लकड़ी पर खोदे जाते हैं या चित्रित किए जाते हैं । ये आकृतियां सदैव अत्यन्त डरावनी व भयानक होती हैं क्योंकि ऐसा विश्वास किया जाता है कि वे भूत-पिशाचों को भगा देगीं ।

निकोबारियों में अनेक प्रकार की जादू व परियों की कहानियां प्रचलित हैं जिन्हें वे सच मानते हैं । ये कहानियां अनेक प्रकार के जादू, अजीब जानवरों, परियों तथा दैवी घटनाओं के बारे में होती हैं । एक किंवदन्ती एक सुखी परिवार के बारे में है जब एक युवक व उसका पिता समुद्र में मछली पकड़ने गए, वे एक तूफान की चपेट में आ गए और नाव उलट गई । बाप तो समुद्र में डूब गया किन्तु जब लड़का डूब रहा था तो एक समुद्रपरी ने उसे बचा लिया और उसे वह अपने महल में ले गई जहां उसको बड़े सुख व ऐश्वर्य में रखा, क्योंकि वह उससे प्रेम करने लगी थी । किन्तु युवक अपने परिवार को न भूल सका और उसका हृदय उनसे मिलने के लिए तड़पने लगा । अतः उसने जलपरी को उसे उसके घर के समीप समुद्र-तट तक ले जाने के लिए राजी कर लिया । जब तक वह अपने घर से नहीं लौटे उसने समुद्र परी से कहा कि, वह उसकी वहीं प्रतीक्षा करे । उसे ज़िन्दा देखकर उसके परिवार वाले अपनी आंखों पर विश्वास ही नहीं कर सके और खुशी से उछल पड़े । किन्तु गांव वालों ने उसकी कहानी पर विश्वास ही नहीं किया और कहने लगे कि तुम समुद्र में मर चुके हो और तुम्हारा प्रेत हमें सताने आया है । यह कहकर उन्होंने उसे पत्थर फेंककर जान से मार दिया । निकोबारियों के कथनानुसार बेचारी जलपरी आज भी वहीं प्रतीक्षा में बैठी है और कभी-कभी तूफानी रातों में वे अब भी उसके रोने की आवाज सुनते हैं ।

निकोबारी बहुत सुन्दर कुटीरों में रहते हैं जिसकी वास्तुकला बड़ी उच्च कोटि की है । यह जमीन से पांच से सात फीट ऊंचाई पर स्तम्भों के सहारे पर होती है जिसका

गोलाकार फर्श होता है। कुटीर की छत भी अक्सर गोलाकार होती है जिसे घास या नारियल के पत्तों से छाया हुआ रहता है। घर का फर्श केन की पतली तीलियों से बनाया जाता है। जिसके बीच छोटे-से छेदों से सारे कमरे में हल्के हवा के झोंके आते रहते हैं जो इसे एक प्रकार से वातानुकूलित-सा बना देते हैं। भोजन अलग कुटिया में बनाया जाता है।

पहले तो वे लोग नंगे ही रहते थे किन्तु जैसे-जैसे समय बीतता गया वे भी बदलते गए। कुछ समय पूर्व तक पुरुष घर में एक पतली-सी लंगोटी पहनते तथा महिलाएं पेड़ की छाल व नारियल के पत्तों का कमर से घुटने तक का पेटीकोट पहनती थीं तथा ऊपरी हिस्सा वस्त्रहीन रहता था किन्तु अब वे आधुनिक बन रहे हैं। नित्य नए तरह के रंग-बिरंगे कपड़े पहनते हैं। किन्तु आज भी पुराने पहरावे की झांकी कुछ दूर की झोपड़ियों में अवश्य देखी जा सकती है।

उनके भोजन की क्रिया भी बदल रही है। उनका पारम्परिक भोजन है पनीर की तरह एक पतली लेई जो नारियल के गूदे, केवड़े, शकरकन्द को एक साथ उबाल कर उसे सूप की तरह मिलाकर बनाई जाती है। यह लेई काफी अर्से तक सुरक्षित रखी जा सकती है। इसके अतिरिक्त वे शकरकन्द, सूअर और मुर्गी भी खाते हैं। किन्तु अब वे चावल व अनाज भी पर्याप्त मात्रा में खाने लगे हैं।

नारियल उनका मुख्य भोजन है यहां तक कि सूअर व मुर्गियां भी उसी पर निर्भर रहती हैं। निकोबारी नशीले पेय पदार्थों के बहुत शौकीन होते हैं। नारियल से बनाई गई ताड़ी कई अवसरों पर पी जाती है। अब इन द्वीपों में बाहर के लोग भी काफी संख्या में आ रहे हैं जिसके परिणामस्वरूप अब शराब भी काफी बहने लगी है।

अपनी पुस्तक 'निकोबार आइलैंड' में डी. ह्वाइट हेड ने निकोबारियों के जीवन का दर्पण इन शब्दों में दिया है, 'काम, धार्मिक त्यौहार यहां तक कि अंत्येष्टि में भी वह मनोरंजन की तलाश में रहते हैं। कोई भी इतनी मस्ती के जीवन की आशा कहीं नहीं कर सकता सिवाय 'हैसपेरिडीज' में।

तमिल

तमिल लोगों की संख्या काफी है। उनकी आबादी के प्रमुख स्थान हैं पोर्ट ब्लेयर तथा उसके समीपवर्ती इलाके। बर्मा से देश-प्रत्यावर्तन के कारण आए हुए तमिल, सोलवे, रंगाचांग तथा चिड़िया टापू में बसाए गए। इसी प्रकार श्रीलंका से लौटाए गए तमिल कचाल व शैतानखाड़ी के रबड़ के बगीचों में बसाए गए। कुछ लोग लिटिल अंडमान में बसाए गए। उनके अन्य क्षेत्र हैं रंगत व ग्रेट निकोबार। उनकी मुख्य गतिविधियां पोर्ट ब्लेयर में केन्द्रित हैं जहां पर उनकी अनेक सामाजिक तथा सांस्कृतिक संस्थाएं हैं। उनका एक सुन्दर अलंकृत सामुदायिक सांस्कृतिक रंगमंच है जहां पर अकसर समारोह होते रहते हैं। तमिल भाषा में वे अनेक समाचार पत्र व पत्रिकाएं भी निकालते हैं। ये लोग काफी

परिश्रमी हैं, अधिकांश लोग मजदूरी करते हैं और कुछ लोग व्यापार व खेती करते है। स्थानीय सिनेमा हालों में तमिल चलचित्रों का प्रदर्शन अक्सर किया जाता है।

मलयालम

इन द्वीपों में केरल प्रदेश से आये लोगों की बहुत बड़ी संख्या है। इन द्वीपों की जलवायु, पेड़-पौधे इत्यादि सभी कुछ केरल की तरह हैं। अतः मलयाली लोग इन द्वीपों को बहुत अनुकूल पाते हैं। वे पूरे द्वीपों में फैले हुए हैं। दक्षिण अंडमान में कुछ परिवार माईतिलक में बसाए गए हैं जोकि जरावा सुरक्षित क्षेत्र के बहुत समीप है। उनके तथा जरावों के बीच काफी मनमुटाव है क्योंकि जरावा अपने क्षेत्र में किसी प्रकार की छेड़-छाड़ पसन्द नहीं करते। थोड़ी-सी बात उन्हें नाराज कर देती है और वे बदला ले लेते हैं। कुछ समय पूर्व जरावों ने उनके जानवर मार दिए क्योंकि वे उनके क्षेत्र में घुस गए थे।

अन्य मलयाली बस्तियां मध्य अंडमान के वैहापुर, त्रिवाचिकलम, पद्मनामापुर तथा शिवपुरम में हैं तथा कुछ परिवार उत्तरी अंडमान के केरलापुरम में बसाए गए हैं।

मलयाली लोगों की एक बहुत बड़ी संख्या सरकारी विभागों में है, लगभग नब्बे प्रतिशत आशुलिपिक मलयाली हैं। उनकी भी सांस्कृतिक संस्थाएं हैं तथा पर्व-त्यौहारों को बड़े उत्साह के साथ मनाते हैं।

तेलुगु

आंध्र प्रदेश से आए अधिकांश लोग पोर्ट ब्लेयर तथा उसके समीप के भागों में रहते हैं। उनमें से कुछ लोग व्यापार व अन्य व्यवसाय में लगे हुए हैं। अधिकांश लोग वन विभाग या अन्य स्थानों में मजदूर का काम करते हैं। इनमें अधिक लोग गरीब वर्ग के हैं। उनकी एक सांस्कृतिक संस्था है जो समय-समय पर अनेक धार्मिक, सामाजिक व सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत करती रहती है। उन्होंने पोर्ट ब्लेयर में एक सुन्दर सांस्कृतिक भवन का निर्माण भी किया हुआ है।

दक्षिण भारत के लोगों को उनकी रुचि के अनुकूल भोजन प्राप्त करने की कोई विशेष कठिनाई नहीं होती। वहां पर कई भोजनालय हैं जहां यह भोजन उपलब्ध रहता है।

यहा पर विभिन्न प्रदेशों से आए अनेक लोग हैं, जो अपनी-अपनी भाषा में आप से बातचीत करते हैं किन्तु दूसरों से सरल हिन्दी में बात करते है। विभिन्न भाषा बोलने वालों का विवरण दी गयी तालिका से स्पष्ट हो जाता है।

मातृभाषा के आधार पर आबादी 1971 की जनगणना के अनुसार

मातृभाषा	*पुरुष*	*स्त्री*	*योग*
आसामी	13	4	17
बंगाली	14,940	13,180	28,120
गुजराती	16	43	59
हिन्दी	11,716	6,783	18,499
कन्नड़	123	78	201
कश्मीरी	2	6	8
मलयालम	8,447	5,506	13,953
मराठी	76	39	115
उड़िया	211	39	250
पंजाबी	578	445	1,023
सिन्धी	5	2	7
तमिल	10,637	3,881	14,518
तेलुगु	6,555	2,806	9,361
उर्दू	1,390	1,098	2,488
औरैनिक	3	4	7
चीनी	4	2	6
कुर्गा कडयू	26	14	40
डोगरी	1	–	1
अंग्रेजी	42	32	74
नेपाली	798	368	1,166
खड़िया	2	2	4
कोंकनी/कुस्क/औरां	2,327	888	3,215
मनीपुरी/मेथी	1	–	1
मुन्डा	782	283	1,065
मुन्डरी	262	80	342
निकोबारी	9,276	8,679	17,955
सन्तली	2	3	5
वुल्लू	1	–	1
अन्य	1,500	748	2,248
योग	75,736	44,933	1,20,669

राजनीतिक

प्रारंभ में अंडमान की कैदी बस्ती का प्रशासन वैसे तो औपचारिक दृष्टि से मौलिमीन (बर्मा) के कमिशनर के अधीन था किन्तु वास्तव में सीधे भारत सरकार के आदेशानुसार कार्य कर रहा था। बाद में तो यह औपचारिकता भी छोड़ दी गई। तत्कालीन वायसराय लार्ड मेयो की हत्या के बाद प्रशासन का विकेन्द्रीकरण किया गया तथा एक नव सृजित पद चीफ-कमिश्नर के सीधे नीचे रखा गया। विभिन्न चीफ कमिश्नरों ने अपनी तत्कालीन आवश्यकताओं के अनुसार यहां का बहुत अच्छा विकास किया।

कैदी बस्ती होने के कारण किसी गैर-सरकारी लोगों या संस्थाओं को सत्ता के हस्तान्तरण का प्रश्न ही नहीं था। पोर्ट ब्लेयर के शहर का प्रशासन सीधे डिप्टी कमिश्नर के अधीन था और गैर-सरकारी लोग स्थानीय निकायों से कभी भी सम्बन्धित नहीं रहे। जापानी अधिपत्य के दिनों में प्रारंभ में वे प्रशासन के लिए एक परिषद् के गठन पर विचार कर रहे थे किन्तु जब उन्हें पता चला कि स्थानीय जनता में एकता नहीं है तो उन्होंने वह प्रस्ताव स्थगित कर दिया।

जापान सरकार ने इस आशय की औपचारिक घोषणा कर दी थी कि ये द्वीप नेताजी सुभाष चन्द्र बोस की आजाद हिन्द सरकार को विधिवत् हस्तान्तरित कर दिए गये हैं। लालकिले पर आजाद हिन्द के जवानों के विरूद्ध चलाए गए मुकदमों में देश के विख्यात वकीलों ने यही तर्क उठाया कि यह मामला अन्तर्राष्ट्रीय है तथा भारतीय अदालतों को इन मुकदमों की सुनवाई का कोई अधिकार नहीं है क्योंकि आजाद हिन्द फौज ने विधिवत् लड़ाई की घोषणा की थी। किन्तु सच बात यह है कि हस्तान्तरण केवल कागजी कार्रवाई थी।

आजादी के बाद भी एक लम्बे समय तक अंडमान निकोबार द्वीप समूह में सत्ता के विकेन्द्रीकरण तथा प्रशासन में जन प्रतिनिधियों को सम्मिलित नहीं किया गया। प्रारंभ में 1857 के स्वतन्त्रता-सेनानी का पोता लछ्मणसिंह का नामांकन संविधान सभा में एक सांसद के रूप में किया गया और बाद में बिशप रिचर्डसन को सांसद के रूप में मनोनीत किया गया किन्तु समय पर जहाजरानी की सेवा उपलब्ध न होने के कारण वे बहुत कम भाग ले सके। इन द्वीपों में उपनिवेशिय पद्धति का प्रशासन चलता रहा। चीफ कमिश्नर इन द्वीपों के मामलों में सर्वशक्तिमान अधिकारी था। बाद को चीफ कमिश्नर सलाहकार समिति गठित की गई किन्तु इन द्वीपों के मामले में ये कोई खास बात कहने में स्वयं को असमर्थ पाते। सच बात तो यह है कि अधिकांश सदस्य नामांकन द्वारा लिए जाते थे जो चीफ कमिश्नर की जी हुजूरी करने वाले होते थे। बाद को कुछ चुने हुए व्यक्ति भी गए किन्तु उनका कार्य भी वैसा ही रहा क्योंकि कोई भी प्रशासन को नाराज करने का साहस नहीं जुटा पाता था।

सरकारी कर्मचारी जो एक बड़ी संख्या में हैं, उन्होंने यहां के लोगों को राजनीति में बहुत अच्छी तरह प्रशिक्षित किया। यहां के मजदूर संगठनों ने, जिसमें वामपंथी लोगो का

प्रभुत्व है, विशेष रूप से सी. पी. आई. (एम.) का, राजनीतिक जागृति फैलाने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है ।

केंद्र पर सत्तासीन कांग्रेस पार्टी इन द्वीपों में सदैव प्रभावशाली रही है । चूंकि ये द्वीप केंद्र द्वारा अनुशासित हैं अतः उनके लिए यह आवश्यक था कि वे दिल्ली के साथ कदम से कदम मिलाकर चलें । के. आर. गणेश, भूतपूर्व मंत्री, भारत सरकार ने प्रारंभ में कांग्रेस के संगठन का अच्छा कार्य किया ।

नवंबर, 1982 में एक सौ दस वर्ष बाद मुख्य आयुक्त के पद का उच्चीकरण कर उपराज्यपाल बना दिया गया और एम. एल. कम्पानी प्रथम उपराज्यपाल बने तथा जनरल तीरथ सिंह ओबराय दूसरे उपराज्यपाल बने । इस परिवर्तन के साथ यहां पर लोकतंत्र की दिशा में प्रदेश परिषद् का गठन तथा पांच पार्षदों की उपराज्यपाल की सहायता के लिए नियुक्ति होना एक शुभारंभ है । यद्यपि शक्ति का केंद्र बिन्दु अभी भी उपराज्यपाल बना हुआ है और पार्षदों का काम मुख्य रूप से सलाहकार का है किंतु इस केंद्र शक्ति पर उनकी उपस्थिति मात्र से निरंकुश शासन पर रोक लगती है । पार्षदों को बंगले, कार, वातानुकूलित दफ्तर, मुख्य-भूमि जाने के लिए वायुयान से यात्रा आदि की अनेक सुविधाएं भी मिली हैं । लगभग सभी राष्ट्रीय स्तर की तथा कुछ क्षेत्रीय राजनैतिक दलों की शाखाएं इन द्वीपों में विद्यमान हैं ।

निकोबार द्वीप समूह

निकोबार द्वीप समूह के राजनीतिक इतिहास में अठाहरवीं तथा उन्नीसवीं सदी में यूरोप के देशों की राजनीति की एक झांकी मिलती है । औद्योगिक क्रान्ति के परिणामस्वरूप पश्चिम देश व्यापार के तथा देशों को हथियाने के लालच में पूर्व की तरफ पागलों की तरह भागने लगे । बारूद के आविष्कार ने उन्हें बन्दूक प्रदान कर दी थी जिसका पूर्व देश किसी प्रकार से मुकाबला नहीं कर सकते थे । उन्होंने विभिन्न देशों को बिना वहां के लोगों की प्रभुसत्ता की परवाह किए उन्हें हड़पने तथा वहां पर अपने उपनिवेश बनाने की नयी रणनीति बनाई । पश्चिम के भूखे देश एक के बाद एक पूर्वी देशों को निगलने लगे और परस्पर इन देशों के लिए ऐसे सौदेबाजी करते मानो कि ये देश न होकर कोई खरीद-फरोख्त की वस्तु हों ।

ब्रिटेन, फ्रांस तथा डेनमार्क की तीन अलग-अलग ईस्ट इंडिया कंपनियां अधिक से अधिक देशों में अधिपत्य जमाने की जी जान से कोशिश कर रही थीं और इस बात की होड़-सी लग गई थी कि पहले कौन पहुंचता है । इस दौड़ में चतुर अंग्रेज अधिक सफल रहे क्योंकि विभिन्न प्रकार के दांव-पेंच से उन्होंने चुपचाप भारत पर अधिपत्य जमा लिया । इन देशों पर अधिपत्य जमाने के लिए पश्चिम के देशों ने तीन वस्तुओं का विशेष प्रयोग किया । वे थे बाईबिल, चीरा लगाने का चाकू तथा बन्दूक । पहले वे ईसाई धर्म प्रचारकों

को भेजते तत्पश्चात् जाता डाक्टर और उसके अनुसार इनमें थोड़ा-बहुत परिवर्तन किया जाता था। जैसे कि कुछ स्थानों पर ईसाई धर्म प्रचारकों को ही ये सारे काम सौंप दिए गए। विशेष रूप से निकोबार द्वीप समूह के राजनीतिक इतिहास में इस नीति की झलक साफ नजर आती है।

निकोबार द्वीप समूह के बारे में अनेक प्राचीन यात्रियों के लेखों में जिक्र आया है। इशिंग अपनी सन् 678 ई. की यात्रा के विवरण में इन द्वीपों को नग्न लोगों का देश कहता है (लो-जेन-कुओं)। प्लोटेमी इन्हें नागाद्वीप कहता है जो कि हिंदी का शब्द है और नग्न लोगों के लिए प्रयुक्त होता है। इस बात के विश्वसनीय प्रमाण हैं कि इसका असली नाम 'नाकारम' एक भारतीय राजा का दिया हुआ था जो बाद में अपभ्रंश होकर निकोबार बन गया। सन् 1050 के तनजोर के शिलालेख में इन द्वीपों को लिखा गया है। इस शिलालेख के अनुसार चोल राजा राजेन्द्र द्वितीय ने दसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में अपने समुद्र पार के अभियान में इन द्वीपों को जीता था। भारतीय लोग कार निकोबार को 'कारद्वीप' तथा ग्रेट निकोबार को 'नागाद्वीप' तथा द्वीप समूह को 'नक्काबरम' के नाम से जानते थे। मारकोपोलो ने इन्हें 'निकूबरम' कहा। तेरहवीं सदी में भारतीयों द्वारा दिया हुआ यह नाम 'नकाबरम' अरब तथा यूरोप के लोगों में भी प्रचलित हो गया था। ईसाई धर्म के प्रचारक औडोरिक, जिसने इन द्वीपों का 1322 में भ्रमण किया वह इन्हें 'निकोबरम' कहता है। पन्द्रहवीं तथा सोलहवीं सदी में पुर्तगालियों ने इन्हें 'नकूबार' और 'निकोबार' के नाम से संबोधित किया। जब ईसाई धर्म प्रचारकों के प्रारम्भिक प्रयास असफल हो गए तो 1726 में फादर चार्ल्स दे मोन्टेलीमबार्ट ने फ्रांसिसी गवर्नर को एक पत्र लिखा जिसमें उसने इन द्वीपों में एक कारखाना खोलने का प्रस्ताव दिया और 1741 में फ्रांसिसी ईस्ट इंडिया के लिए उपयुक्त स्थान ढूंढने की दृष्टि से वह यहां पर आया। किन्तु 1742 में पान्डुचेरी वापस लौट गया जहां वह मर गया।

इसी समय डेनमार्क की ईस्ट इंडिया कंपनी का ध्यान भी कार निकोबार द्वीप की ओर गया। यहां एक उपनिवेश बनाने की योजना बनाई गई तथा इस उद्देश्य से एक अभियान दल ट्रावनकोर से 1755 में चला और यहां पर एक व्यापारिक ईकाई खोली गई तथा निकोबार द्वीप का नाम बदलकर फ्रेड्रिक द्वीप रखा गया। ज्वर से इसके सभी सदस्य मर गए। सन् 1769 में उन्होंने दूसरा प्रयास किया। इस बार सैनिक, सेवक तथा ईसाई धर्म प्रचारकों का एक दल नानकोरी पहुंचा किन्तु बीमारी के कारण उन्हें 1771 में इसका भी परित्याग करना पड़ा। इसके पश्चात डेनिस ईस्ट इंडिया ने कार निकोबार में रहने वाले ईसाई पादरी को अपना प्रतिनिधि नियुक्त कर लिया ताकि अन्य विदेशी ताकतों द्वारा इन द्वीपों पर अधिपत्य रुक सके। ईसाई धर्म प्रचारकों को निकोबार द्वीप के ऊपर अपनी प्रभुसत्ता जमाने का कोई अधिकार नहीं था। डेनिस ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा नानकोरी में रखी बन्दूकें भी धीरे धीरे मलाया के समुद्री चोर डाकू ले गए।

जब अन्य ईसाई धर्म प्रचारक कार निकोबार में रह रहे थे, एक डच साहसपूर्ण अभियानकर्ता विलियम बोल्ट ने कार निकोबार में आस्ट्रिया का झण्डा फहरा दिया। बाद को बोल्ट इन द्वीपों के लिए अपनी विशेष योजनाओं पर महारानी मेरिया थैरेसा की पूर्व स्वीकृति से एक जहाज लेकर इन द्वीपों की ओर चल पड़ा किन्तु जहाज समुद्र में भटक गया और टूट गया। उस के साथी बोनेट ने 1778 में नानकोरी, कार निकोबार, ट्रिंकट तथा कचाल पर अधिपत्य जमाया जिसकी विधिवत घोषणा भी की गई। बोल्ट का साहसिक प्रयास उस समय के अन्य यूरोप के देशों द्वारा किए गए प्रयासों के अनुरूप था। वे समझते थे कि पूरब देश की धरती पर झण्डा फहराना या कोई छोटा कारखाना खोल देना उस देश पर उनको स्वामित्व का अधिकार प्रदान करने के लिए यथेष्ट है।

लगता है बोल्ट की कार्यवाही से डेनमार्क के लोग नाराज हो गए। इन द्वीपों पर डेनमार्क का अधिकार पूर्ववत बने रहने के लिए इस बात का निर्णय लिया गया कि वहां एक नयी बस्ती बनाई जाये। सन् 1783 में बादशाह ने ईस्ट इंडिया कंपनी से समस्त अधिकार ले लिये। किन्तु डेनमार्क सरकार के निर्णय के अनुसार निकोबार के द्वीपों के लिए, एक अभियानदल भेजा गया जो बीमारी के कारण असफल रहा। सन् 1793 से लेकर 1807 तक डेनमार्क वालों ने यहां पर एक सशस्त्र निगरानी चौकी रखी।

सन् 1807 में नैपोलियन से युद्ध काल में अंग्रेजों ने इन द्वीपों पर ग्रेट ब्रिटेन के नाम से कब्जे की घोषणा की। किन्तु उनकी यह कागजी घोषणा भी 1814 में समाप्त हो गई जब कि युद्ध के अंत में ये द्वीप औपचारिक रूप से डेनमार्क को लौटा दिए गए। इस बीच फ्रांस ने भी इन द्वीपों पर अधिपत्य जमाने का प्रयास किया किन्तु वे विफल रहे। अन्त में डेनमार्क ने 1845 में इन द्वीपों में पांव जमाने का अन्तिम प्रयास किया। बूस को यहां भेजा जिसने डेनमार्क का झण्डा फहराने के लिए दो आदमियों को नियुक्त किया। सन् 1848 में डेनिस सरकार ने यहां के गढ़ को मजबूत बनाने के अधिकार का परित्याग कर दिया और निकोबार द्वीपों से बस्ती के शेष चिन्ह भी हटा लिए।

सन् 1849 से 1869 तक ये द्वीप स्वतन्त्र छोड़ दिए गए। केवल एक घटना इस बीच हुई और वह थी पोलैंड के एक अधिकारी द्वारा पोलैंड के मंत्रालय में 1867 में इन द्वीपों पर अधिपत्य जमाने की इच्छा जागृत करने की दिशा में एक असफल प्रयास।

इन द्वीपों पर कब्जा जमाने के लिए यूरोप के देशों की परस्पर लड़ाई से निकोबारी लोग काफी नाराज हो गए। उन दिनों सारे हिन्द महासागर से निकोबारी लोग लगभग समुद्री डाकुओं की तरह बदनाम थे। इस बीच निकोबार समुद्र तट के समीप समुद्र में लंगर डाले हुए जहाज के नाविकों पर अचानक आक्रमण की अनेक घटनाएं घटीं। सन् 1839 में एक नानकोरी के बन्दरगाह पर एक जहाज पर आक्रमण किया गया जिसमें से कुछ अधिकारियों को समुद्र तट पर ले जाकर मार दिया गया। चालीस आदमियों में से केवल पांच आदमी भागने में सफल हुए। इसी स्थान पर 1843 में एक छोटा जहाज, जो बंगाल

से आ रहा था उसके सभी पच्चीस नाविक मार दिए गए । सन् 1852 में एक अंग्रेज के जहाज पर डाका डाला गया जिसमें सभी नाविकों को मार डाला गया ।

सन् 1867 में एक छोटा जहाज 'फतेह इसलाम' पर ट्रिंकेट के पास धावा बोल कर 21 आदमियों को जान से मार डाला । भारत सरकार ने इसे सख्ती से लिया तथा उन्हें इसका सबक सिखाने के लिए एक अभियान दल भेजा गया तथा यहां की जनजाति के लोगों की झोपड़ियां जला दी गईं ।

यहां विशेष ध्यान देने योग्य बात है कि जहां दूसरे विदेशी लोग उपनिवेश बनाने में असफल रहे वहीं अंग्रेज सफल हो गए इसका एक मात्र कारण है भारतीय लोगों द्वारा अथक परिश्रम व बलिदान । दक्षिण-पूर्व एशिया, फिजी, मौरीशस, अफ्रीका इस बात के साक्षी हैं । सन् 1866 में डेनिस सरकार से विधिवत् इन द्वीपों का अपने नाम हस्तान्तरण कराने के पश्चात अंग्रेजों ने यहां पर औपनिवेशिक बस्ती बनाने का कार्यक्रम बनाया । भारत के महान स्वतन्त्रता-सेनानियों तथा अन्य कैदियों को अनेक विपत्तियों तथा खराब जलवायु का सामना करते हुए अथक परिश्रम द्वारा नानकोरी में इस बस्ती को सफलता पूर्वक बनाने का श्रेय जाता है ।

अंग्रेजों की समझ में आ गया कि निकोबार के लोग नारियल की तरह सख्त व ठोस घेरे में संगठित हैं जिसे तोड़ना असंभव था । अतः वे इन द्वीपों में प्रशासन चलाने में असफल रहे और उन्हें अपने नाममात्र के नियंत्रण से सन्तोष करना पड़ा । कैप्टनों ने इस बात को मान लिया कि जब भी कभी उन द्वीपों में कोई अन्य जहाज आयेगा तो वे बन्दरगाह पर अंग्रेजी झण्डा फहरा देंगे । अंग्रेज सद्भावना के इस प्रदर्शन से सन्तुष्ट थे । इस प्रकार इन द्वीपों में प्रशासन बहुत ढीला ढाला था केवल दो चार महीनों में कभी एक अभियान दल आता था ।

बिशप रिचर्डसन के रंगून से पढ़-लिख कर इन द्वीपों में लौटते ही स्थिति में सहसा बड़ा परिवर्तन आ गया । बिशप रिचर्डसन की पहले बचपन में पादरी सोलोमन ने तथा बाद को ईसाई धर्म प्रचारकों ने रंगून में काया-कल्प कर डाली और पूरा मस्तिष्क ही बदल दिया । अब वह अंग्रेजों का एक राजभक्त नागरिक था । कार निकोबार में एक असिस्टेंट कमिश्नर का पद था । जापानी अधिपत्य के पूर्व अंग्रेजी शासन काल का यहां पर अन्तिम पदाधिकारी एक अंग्रेज था जिसका नाम स्कौट था । द्वितीय महायुद्ध के दिनों तक जापानी अधिपत्य क्षेत्र में, अंग्रेज की 'वन थ्री सिक्स' एक जासूसी गुप्त संस्था के सदस्य के रूप में उसने इन द्वीपों में जापानियों को परेशान करने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी । प्रारंभ में जापानियों के स्थानीय निकोबार जनजाति के लोगों से मधुर सम्बन्ध थे किन्तु बाद को जब तोड़फोड़ की कार्यवाही होने लगी तथा भेदियों द्वारा गुप्त सूचनाएं भेजने के फलस्वरूप उनके जहाज हवाई हमलों में डूबने लगे तो वे निकोबारियों को शक की दृष्टि से देखने लगे तथा संदिग्ध व्यक्तियों को, जिनमें अधिकांश निर्दोष थे, मौत के घाट उतार

दिया। बिशप रिचर्डसन को भी गिरफ्तार किया गया। जिस दिन उसे मृत्यु दंड मिलने वाला था उसी दिन जापान ने हथियार डाल दिए। उसको छोड़ते हुए जापानी अधिकारी ने कहा कि वास्तव में तुम भाग्यशाली व्यक्ति हो।

अंग्रेजों द्वारा दोबारा कब्जा करने तथा भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के बीच अंग्रेजों द्वारा इन द्वीपों को भारत में न जाने देने के अनेक प्रयास किए गए, जो असफल रहे तथा ये द्वीप भारत के अभिन्न अंग बने रहे। आजादी के तुरन्त बाद अंडमान द्वीप समूहों पर अधिक ध्यान दिया गया तथा निकोबार के द्वीपों की उपेक्षा-सी की गई और जब नया मुख्य आयुक्त (चीफ कमिश्नर) पहली बार वहां गया तो उसका 'अंग्रेजी झण्डों' से स्वागत हुआ। जब उनसे बातें की गईं तो उन्होंने इस बात पर अनभिज्ञता प्रकट की कि 'अंग्रेज चले गए तथा भारत आजाद हो गया'। यह एक नाटकीय प्रदर्शन नहीं था वहां के आम लोगों को वास्तव में इसके विषय में मालूम नहीं था। यह बड़े सदमे व आश्चर्य की बात थी। तब से इन द्वीपों को राष्ट्रीय जीवन की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए सड़कें व नाव घाट (जेटी) बनाकर तथा स्कूल व अस्पताल खोलकर, निष्ठापूर्वक प्रयास किए गए हैं। किन्तु उनका जन-जीवन, दिनचर्या अभी भी पूर्ववत् है। बिशप रिचर्डसन ने वर्तमान प्रशासन को बहुत सहयोग दिया और स्वयं लेखक के साथ इन द्वीपों के विकास के संबंध में उनकी अनेक बार बातें हुई। अस्सी बरस के ऊपर होने पर भी वे बहुत चुस्त, ताकतवर व फुर्तीले थे।

कैप्टन का चुनाव प्रजातंत्र पद्धति से प्रारंभ किया जा रहा है, क्योंकि पढ़े-लिखे युवक परिवर्तन चाहते हैं किन्तु जनजाति के सख्त अनुशासन से बंधे होने के कारण वे खुलकर आगे आने को अभी तैयार नहीं हैं। आगे किस दिशा में हवा बहेगी यह केवल भविष्य ही बताएगा। वर्तमान समय में निकोबार द्वीप समूह की जनजाति राजनीति से अभी बहुत दूर है, उनकी कोई राजनीतिक पार्टी नहीं है, फिर भी उनके बीच एक मजबूत अनुशासन है। इनमें से एक सदस्य अवरडीन ब्लेयर अंडमान प्रशासन में पार्षद् है।

आदिवासी जनजातियां

जरावा

अब समय आ गया है, जब हम अतीत पर दृष्टिपात करें तथा इन द्वीपों के आदिवासियों के जीवन तथा गतिविधियों की गहराई में झांकें। आज अंडमान कालापानी न रहकर स्वर्ग बन गया है जिसे देखने के लिए अनेक पर्यटक भारत से ही नहीं वरन् सारे विश्व से उमड़ रहे हैं। बीसवीं सदी में जहां एक ओर, इन द्वीपों की जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ी है, वहीं दूसरी ओर आदिवासियों की जनसंख्या उतनी ही तेजी से नीचे गिरी है। इन द्वीपों के आदिवासियों के आधुनिक सभ्यता के संसर्ग में आने के कोई विशेष सुखद अनुभव नहीं रहे। सच बात तो यह है कि यह सम्पर्क उनके लिए अत्यन्त भयंकर तथा दुखदाई सिद्ध हुआ है। इससे अनेक संक्रामक तथा घातक रोग जैसे कि हैजा, चेचक, खसरा, क्षयरोग तथा योनि सम्बन्धी बीमारियां मिलीं, जिसमें अनेकों जानें गईं। आदिवासी जरावा, जिनका मानव-विज्ञानी नीग्रो जाति के अंतर्गत वर्गीकरण करते हैं, दक्षिण व मध्य अंडमान के बीच रहते हैं। ये लोग अभी भी खूंखार बने हुए हैं तथा प्रशासन द्वारा मित्रता व सद्भाव के संकेतों को सदैव ठुकराते रहे हैं। वे युगों पूर्व के स्वच्छन्द, स्वतन्त्र, घुमक्कड़ जीवन में आनन्दमय अनुभूति प्राप्त करते हैं। उनके जीवनयापन के मुख्य स्त्रोत हैं समुद्री भोजन, मछली, जंगली सूअर, कन्दमूल तथा शहद। ये लोग भोजन की तलाश में जंगल तथा समुद्र तट पर पूर्णतया नग्न अवस्था में विचरण करते रहते हैं तथा ये बहुत कुशल तैराक भी हैं। यदि कोई उनके पानी के स्त्रोत या शिकारगाह से छेड़-छाड़ करे या उनके इलाके में जंगली सूअर को मारे तो वह उनकी शत्रुता का शिकार बन जाता है। ऐसा बहुत कम हुआ है कि उन्होंने उसको छोड़ा हो। यद्यपि उनके क्षेत्र विशेष रूप से अलग कर दिए गए हैं और 'आदिवासी सुरक्षित क्षेत्र' के नाम से घोषित किए जा चुके हैं, लेकिन फिर भी अनेक बार देखा गया है कि अवांच्छनीय तत्व इन आदेशों की अवहेलना कर इन सुरक्षित क्षेत्रों में शिकार के लिए जाते हैं जिससे जरावा बहुत क्रोधित होते हैं। लोगों को इस क्षेत्र में अवैध रूप से जाने से रोकने के लिए एक विशेष पुलिस दस्ते का गठन किया गया है, जिसे बुश पुलिस कहते हैं। लेकिन दुर्भाग्य से लकड़ी के ठेकेदार जो इन क्षेत्रों में अवैध रूप से वृक्षों का कटान करते हैं तथा चोर ,शिकारी आदि बुश पुलिस को अपनी तरफ मिला लेते हैं। कुछ लकड़ी के बड़े ठेकेदार बुश पुलिस की सेवा अपने बचाव के लिए विधिवत मांग लेते

हैं। जिन का प्रयोग वे अवैध कटान में करते हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि इस प्रकार कुछ जरावा बुश पुलिस द्वारा अवश्य मारे जाते हैं। वास्तव में जरावों में बाहर के लोगों के प्रति बहुत अधिक अविश्वास है और भूतकाल में उनसे मित्रता बढ़ाने के सभी प्रयास निष्फल रहे हैं तथा उनकी दुश्मनी पूर्ववत बनी रही है।

जरावों की संख्या क्या होगी इस संबंध में अभी तक कोई विश्वसनीय जनगणना नहीं हो पाई है। अंग्रेजी शासन काल में इनकी जनगणना के समय इस काम के लिए विशेष अभियान दल भेजे गए किन्तु कोई विशेष सफलता नहीं मिली। मोटे तौर पर इनकी जनसंख्या 100 या 200 के बीच आंकी गई है। वे एक स्थान पर अधिक समय तक नहीं ठहरते हैं और अपनी झोपड़ियां आवश्यकतानुसार पानी व खाद्य पदार्थों को देखते हुए खिसकाते रहते हैं।

कुछ समय पूर्व बुश पुलिस के उत्साही हैडकांस्टेबल की सहायता से प्रशासन जरावों के एक दल के साथ कुछ मैत्री संबंध जोड़ने में सफल हुआ था किन्तु यह संबंध अधिक दिन नहीं टिक सके और शीघ्र ही एक घटना के कारण शत्रुता बढ़ गई। चार बंगालियों का एक दल अवैध रूप से उनके क्षेत्र में समुद्री शैल आदि जमा करने की दृष्टि से घुस गया और उन्होंने वहां समुद्र तट पर रात्रि विश्राम किया। दूसरे दिन बहुत सवेरे जब ठीक से उजाला भी नहीं हुआ था कि उन पर जरावों द्वारा अचानक आक्रमण किया गया जिन्होंने वहां पर उपस्थित तीनों को जान से मार डाला। चौथा व्यक्ति दीर्घ शंका के लिए कुछ दूरी पर झाड़ी के अन्दर था वहीं से उसने यह कांड देखा और भाग कर खाड़ी को तैरकर पार कर दूसरे द्वीप जा पहुंचा। फिर उसने पोर्ट ब्लेयर जाकर इस घटना को सुनाया। पुलिस एक बड़े सशस्त्र दल के साथ घटना स्थल पर पहुंची किन्तु उन्हें जरावों का कहीं कोई नामो-निशान तक नहीं मिला। वहां पर मारे गये व्यक्तियों के शरीर के कुछ अध जले अंग मिले जिससे कुछ लोगों ने अनुमान लगाया कि शायद उन्हें जरावा खा गए हों किन्तु ऐसा संभव नहीं है। अंडमान के हाल के इतिहास में उनके मानवभक्षी होने के कोई प्रमाण नहीं हैं।

लेखक द्वारा साहसिक यात्रा

इस दुर्घटना के बाद जरावों से पुनः सम्पर्क स्थापित करने के सभी प्रयास विफल रहे और धीरे-धीरे इस संबंध में जानकारी के साधारण अभियान भी बन्द कर दिए गए। आदिवासियों की कल्याण संबंधी एक उच्च स्तरीय बैठक में लेखक ने जरावों के साथ पुनः मैत्री संबंध जोड़ने की आवश्यकता पर बल दिया किन्तु प्रश्न था बिल्ली के गले में घंटी कौन बांधे, लेखक ने इस चुनौती को स्वीकार करते हुए जरावा क्षेत्र में जाने वाले प्रस्तावित अभियान दल का नेतृत्व करने के लिए अपनी सेवाएं अर्पित कर दीं। बाद में लेखक के अन्य मित्र, साथी तथा अधिकारियों तथा विशेष रूप से अधीन कर्मचारियों ने, जिन्होंने जरावों की हिंसा की कहानियां सुनी थीं, जो इनके बारे में अधिक जानकारी रखते थे तथा जिन्हें मालूम था कि यह कितना खतरनाक हो सकता है लेखक को इस अभियान में जाने से मना

करने लगे। किन्तु लेखक के लिए अब रुकने की कोई बात नहीं थी। लेखक हर्षातिरेक से ओत-प्रोत था कि यह प्रागैतिहासिक लोगों से मिलने का स्वर्णिम अवसर है जो दस हजार पूर्व के पाषाण युग में जी रहे हैं।

इस अभियान की विस्तृत योजना बनाई गई। क्या-क्या अप्रत्याशित घटनाएं हो सकती हैं, उन सभी पहलुओं पर विचार-विमर्श हुए। धनुषबाण के अकस्मात आक्रमण की स्थिति में क्या किया जाये या सम्पर्क स्थापित करने के पश्चात यदि पूर्ण गिरोह अकस्मात हिंसक रूप धारण कर ले तो बचाव की क्या नीति अपनाई जाये ? यदि उन्होंने मित्रता का व्यवहार किया तब उन्हें क्या उपहार दिए जायें ? कौन सा मार्ग अपनाया जाये ? गन्तव्य स्थान पर पहुंचने का समय क्या हो ? इन सब पहलुओं का विश्लेषण किया गया, उन पर विचार विमर्श के बाद योजना को अन्तिम रूप दिया गया।

रात्रि में अभियान दल ने आदिवासियों से संपर्क करने के जलयान 'मिलाली' में प्रस्थान किया। सवेरा होने से पूर्व इस दल ने स्ट्रेट द्वीप से एक छोटी नाव 'मिलाली' के साथ जोड़ ली ताकि समुद्र तट पर उतर कर जा सकें। दल ने पूर्वी समुद्र तट को छोड़ दिया तथा एक संकीर्ण जल मार्ग से पश्चिमी तट की ओर चल दिया। यह बहुत सुन्दर प्रभात था। समुद्र में आधे डूबे सुन्दर हरे-भरे कच्छ वनस्पति दूर तक फैले वनों की हरियाली व आसमान को छूती पहाड़ियां, ये सब एक स्वपनलोक की कल्पना साकार कर रहे थे और लगभग दो घंटे के बाद हम पश्चिमी समुद्र तट के खुले समुद्र में पहुंच गए।

यह बड़े आश्चर्य की बात थी कि आज समुद्र बहुत शान्त था क्योंकि पश्चिमी समुद्री तट इन दिनों बहुत अशान्त व उग्र रहता है, जहां पर जहाज से उतरना बहुत खतरनाक तथा कभी तो संभव ही नहीं होता। 'मिलाली' जलयान मन्थर गति से पश्चिमी तट के साथ-साथ 'फ्लैट' द्वीप की ओर अग्रसर हो रहा था और अब हम लोग जरावा लोगों के क्षेत्र में थे। हमसे कहा गया था कि लाल कपड़ा जरावाओं के लिए मित्रता का प्रतीक है। दल ने 'मिलाली' के मस्तूल पर एक लाल झंडा फहरा दिया और अपने माथों पर भी लाल कपड़ा बांध लिया। दल के सभी सदस्य सावधान थे तथा समुद्र तट की ओर आंखें फाड़ कर देख रहे थे। दल के लोगों के पास अच्छी दूरबीनें भी थीं। एकाएक एक सदस्य ने जो कि दूरबीन से तट की तरफ देख रहा था बताया कि दो काले बिन्दु से दूर नजर आ रहे हैं, उससे दूरबीन छीनकर दूसरे सदस्य ने उसकी बात की पुष्टि ही नहीं की बल्कि कौतुहल से चिल्लाया कि वे बिन्दु हिल रहे हैं। अब सब की आंखें तट की ओर थीं ओर जैसे 'मिलाली' आगे की ओर अग्रसर हुई, ये बिन्दु और स्पष्ट होकर मानव आकृति धारण करने लगे। सब आश्चर्यचकित थे, वे वास्तव में जरावा थे। सभी सदस्यों में भय व खुशी की एक मिली-जुली प्रतिक्रिया हुई। यह मिलन कैसा होगा ? सब के चेहरे पर एक अजीब सी घबराहट थी, जरावा क्या करेगें भाग जाएंगे, या आक्रमण करेंगे या स्वागत करेंगे, सभी अप्रत्याशित संभावनाएं अभी खुली हुई थीं।

जैसे-जैसे 'मिलाली' और समीप पहुंची हमने देखा कि जरावा 'मिलाली' की दिशा में अपनी झोपड़ियों की ओर दौड़ने लगे। अपने भोजन की तलाश में जो इधर-उधर थे, वे सभी दौड़ कर एक स्थान पर एकत्रित होने लगे। वे बड़े उत्साह से उछलकूद करते हुए कुछ बड़बड़ा रहे थे, संभवत: वे हमारे उद्देश्य के प्रति शंकित थे तथा आपस में विचार-विमर्श कर रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था कि उन्हें पूरा विश्वास हो गया कि हम उनको हानि नहीं पहुंचाएंगे। हमारी खुशी का ठिकाना न रहा जब शीघ्र ही वे नाचने गाने लगे तथा चिल्ला-चिल्लाकर हमारी तरफ हाथ हिलाकर आने का संकेत करने लगे। वे बहुत प्रसन्न मुद्रा में थे तथा यही भाव अपने विभिन्न संकेतों से प्रकट करने लगे। वे सभी अपनी घास-फूस की गुफाओं जैसी झोपड़ियों में एकत्रित थे और हमें इस बात का विश्वास दिलाने के लिए कि उनकी हमें मारने की कोई इच्छा नहीं है, उन्होंने अपने-अपने धनुष बाण दूर फेंक दिए, समुद्र में कूदकर 'मिलाली' की तरफ तैरने लगे। उनकी इस सद्भावना के उत्तर में हम भी नाव में उनकी झोपड़ियों की ओर प्रस्थान कर गए। वहां पर एक हलचल हो गई, खुशी से चिल्लाकर 'डडा डडा डडा' का उच्चारण करने लगे जो कि पंडितों द्वारा सामूहिक रूप से वेद मन्त्रों के पाठ की याद दिला रहा था। जैसे ही हम लोग समुद्र तट पर पहुंचे कुछ जरावों के बच्चे भय से झोपड़ियों की तरफ भागने लगे तथा कुछ पेड़ों पर बन्दरों की तरह चढ़ने लगे। लेकिन अपने माता-पिता द्वारा मुस्कराकर हमारा स्वागत करते हुए देख उनकी जान में जान आई और उनमें से कुछ वापस आ गए। सभी पुरूष व महिलाएं पूर्ण रूप से नग्न थे केवल कुछ पुरुषों ने अपने सीने के चारों ओर पेड़ की छालों का कवच सा पहना हुआ था ताकि तीर अन्दर न घुस सके। कुछ उत्साही नवयुवक हमें अपनी कुटिया में ले गए जहां जंगली सूअर का गोश्त व शहद रखा हुआ था।

जब हम नाव में 'मिलाली' की ओर आने लगे तो बहुत से जरावा पुरूष व महिलाएं भी हमारे साथ आने का आग्रह करने लगे। कुछ लोगों को नाव में चढ़ा लिया किन्तु स्थानाभाव के कारण बाकी लोगों को संकेत द्वारा बता दिया कि नाव दोबारा आएगी। कुछ लोग समुद्र में तैरकर आने लगे उन्हें भी सदस्यों ने संकेतों से बता दिया कि नाव दोबारा आएगी। नाव दोबारा भेजी गई और बहुत से जरावा उसमें आ गए। 'मिलाली' पर आते ही वे नाचने, गाने, उछलने व कूदने लगे तथा जलयान के विभिन्न हिस्सों में दौड़ने चिल्लाने लगे। उनमें एक जहाज के मस्तूल पर चढ़ने लगा और कुछ लोहे की चीजों को निकालने लगे। जरावा लोहे के टुकड़ों, छड़ों आदि के बहुत लालची होते हैं क्योंकि इसे वे तीर बनाने के प्रयोग में लाते हैं। एहतियात के तौर पर 'मिलाली' के कैबिन के सभी दरवाजे बन्द कर दिए गए ताकि जरावा वहां अन्दर की चीजों से छेड़ छाड़ न करें। दल ने भेंट स्वरूप लाये नारियल, केले आदि के उपहार एक लोहे के जालीदार कमरे में बन्द कर ताला लगा दिया था। उन्होंने इस कमरे के अन्दर झांका तो उपहारों को देखकर उनके मुंह पर खुशी की लहर दौड़ आई और वे खुशी से नाचने-कूदने लगे और कुछ तो जाली को तोड़ने का प्रयास करने लगे। सरदार बख्तावर सिंह के लिए जो प्रशासन के आदिवासियों के

विभाग की सम्पर्क शाखा से सम्बन्धित हैं, जरावों को नियंत्रण में रखने में बहुत कठिनाई हुई। उन्होंने उन्हें संकेतों द्वारा समझाया कि ये सब उन्हीं के लिए है। वे पुनः खुशी से नाचने लगे और जोश में सरदार जी की पगड़ी खोल दी, एक ने उनके सिर के बाल खोल डाले और एक अन्य उनकी तोंद थपथपाने लगा। वे उसको इस तरह से उलट-पलट कर देख रहे थे मानों कि वह एक आदमी न होकर संग्रहालय की वस्तु हो। दो लेखक की गोद में आकर बैठ गए एक अन्य लेखक के गले में बांहें डालकर झूलने लगा। एक महिला ने दल के मानव-विज्ञानी के चश्मे को देखने में उसको तोड़ ही दिया। कुछ ने तो अनेक प्रकार के सर्कस के से करतब दिखाए। एक आदमी दोनों पांवों को ऊपर कर बहुत देर तक दोनों हाथों के बल चारों ओर घूमता रहा।

कुछ देर के पश्चात जब उनका प्रारम्भिक जोश कुछ ठंडा पड़ गया, उनमें उपहार वितरण किए गए जिसे उन्होंने बड़ी प्रसन्नता से ग्रहण किया। वे हास्य विनोद से परिपूर्ण अपने विभिन्न करतबों से दल को हंसाते रहे तथा स्वयं भी हंसी से लोट-पोट होते रहे। एक ने सरदार जी से बड़ा अच्छा मजाक किया। उसने अपना उपहार चुपचाप अपनी पत्नी को दे दिया और ऐसी मुद्रा बना ली जैसे उसे उपहार मिला ही न हो, और फिर झट से दोबारा उपहार के लिए हाथ पसारने लगा। किन्तु उसकी शरारतपूर्ण मन्द मुस्कान सरदारजी की आंखों को धोखा न दे सकी क्योंकि जब सरदारजी ने उसे वह स्थान दिखा दिया जहां उसकी पत्नी ने वह सामान रखा था, वह जोर से ठहाका लगा कर हंसा इस में सब ने उसका साथ दिया और सारा वातावरण हंसी से गूंज उठा। ये लोग दवाईयों के, विशेष रूप से मरहम पट्टी के, बहुत शौकीन होते हैं। कई वर्ष पूर्व किसी गोली लगे व्यक्ति का मरहम पट्टी से उपचार किया गया था तबसे इसे वे एक जादू टोना सा समझते हैं। एक दो व्यक्तियों के साधारण घावों के उपचार में मरहम पट्टी क्या की गई कि सभी इसकी मांग करने लगे जिनके बदन पर कहीं कोई चोट का निशान भी नहीं था वे भी काल्पनिक घावों को दिखाकर पट्टी बंधवा लेते। इस बात में महिलाएं सबसे आगे थीं। इस क्रीड़ा में वे कितने प्रसन्न थे यह बात किसी से छिपी नहीं रही यद्यपि भाषा का बन्धन अवश्य था किन्तु उनके निश्छल व्यवहार, ठहाकेदार हंसी, और चमकीली आंखें सब कुछ समझा देती थीं।

यह बड़े आश्चर्य की बात है कि जहां एक ओर हमारी वर्तमान पीढ़ी विलास व ऐश्वर्य के प्रसाधन जुटाने की होड़ में अपनी समस्त मानसिक शान्ति व सन्तुलन खो बैठी है वहीं दूसरी ओर ये भोले-भाले आदिवासी हैं जिनके पास सर्वथा कुछ भी नहीं है फिर भी ये अत्यन्त प्रसन्न व सन्तुष्ट हैं। पूर्णतया नग्नावस्था में होने पर भी न उनमें किसी प्रकार का संकोच था न कोई हीन भावना। देखने वालों को भी इसमें किसी प्रकार की अश्लीलता नजर नहीं आती थी क्योंकि इन प्रकृति के स्वच्छंद प्राणियों को एक मूर्तिकार की कला कृतियों की भांति, उनकी कोमल, चमकीली त्वचा, सुडौल, सुगठित शरीर और चेहरे की दिव्य कान्ति उन्हें साधारण मानव के धरातल से ऊपर उठा देती है।

यह कितनी विडम्बना है कि जहां एक ओर इन द्वीपों के ये आदिवासी जनजाति के लोग आज भी पाषाण युग का जीवन यापन कर रहे हैं वहीं दूसरी ओर द्वीपों के अन्य लोग जो आधुनिकतम वैज्ञानिक उपलब्धियों से दूरदर्शन उपग्रह भू-केन्द्र द्वारा संचालित दूरभाष तथा उपग्रहों के मार्गदर्शन हेतु बने इलैक्ट्रोनिक संयंत्रों द्वारा उपलब्ध सुख-सुविधा प्राप्त कर रहे हैं।

यह दल काफी समय इनके मध्य रहा। आसमान काले बादलों से आच्छादित होने लगा था। भारी वर्षा होने की संभावना के संकेत नजर आ रहे थे अत: इन नए मित्रों से विदा की बेला आ चुकी थी। इस थोड़ी सी अवधि में हम एक दूसरे के हृदय के काफी पास आ चुके थे और उनकी अनुरक्ति तो और भी अधिक थी क्योंकि वे इस बात की जिद पर अड़ गए कि वे भी हमारे साथ'मिलाली' में चलेंगे किन्तु ऐसा करना असंभव था। बड़े प्यार दुलार से उन्हें समझाने का प्रयास किया गया कि उन्हें अपनी शिविर को लौट जाना चाहिए किन्तु वे उसके लिए तैयार नहीं थे। अन्त में उन्हें'मिलाली' से उतरने के लिए राजी कर लिया। छोटी नाव से उन्हें समुद्र तट पर छोड़ दिया। समुद्र तट पर पहुंचने पर उन्होंने एक बार हाथ हिलाकर विदाई दी और 'मिलाली' जलयान अपनी वापसी यात्रा पर चलने लगा।

इस मिलन ने सब के मन पर एक गहरी छाप छोड़ दी। लेखक के मन में बार-बार शंका उठती कि इन निरीह जनजातियों को अपनी दुनिया में लाने के प्रयास में हम उनके प्रति कहीं अन्याय तो नहीं कर रहे हैं किन्तु फिर सोचता मानव होने के नाते उनका भी वैज्ञानिक प्रगति पर विशेष रूप से स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धियों पर विशेष अधिकार है जो उन्हें मिलना ही चाहिए। इस प्रश्न का उत्तर पाना बहुत कठिन है। वर्षों से इस विषय पर मानव-विज्ञानियों तथा समाज शास्त्रियों के बीच परिचर्चा होती चली आ रही है। मानव-विज्ञानियों का कहना है कि इस जाति का संसार से, देर से या जल्दी से, लोप होना एक निश्चित सत्य है और हमारा यही प्रयास होना चाहिए कि उन्हें उनके प्राकृतिक वातावरण में जब तक संभव हो सके परिरक्षित रखें। समाजशास्त्री इसे निराशावादी दृष्टिकोण बताते हैं उनकी दलील है कि उन्हें धीरे-धीरे हमारे वर्तमान समाज में समावेश कर लिया जाये। उनका मुख्य तर्क है कि जब वन्य जीवन के लोप होने वाले प्राणियों तक के संरक्षण के लिए मृगविहार बनाए गए हैं तो आज के वैज्ञानिक प्रगति के युग में इन आदिवासियों का समावेश क्यों नहीं हो सकता है। उनका विचार है कि मानवतावादी पक्ष के अतिरिक्त हमारा वैधानिक उत्तरदायित्व भी बनता है कि जिन आदिवासियों को हमने अपनी आवश्यकता पूर्ति हेतु उनके शिकारगाह, वन, शिकार सभी कुछ छीन कर इस हीन अवस्था में छोड़ दिया उनका उचित पुनर्वास करना हमारा कर्त्तव्य बन जाता है। ऐसा लगता है कि यह परिचर्चा संभवत: चलती ही रहेगी किन्तु उससे पहले कि वे किसी एक परिणाम पर पहुंचें तब तक इन जातियों का पृथ्वी पर से लोप हो जाएगा।

कुछ घंटों के नौचालन के बाद अभियान दल खुले पूर्वी समुद्र में पहुंचा, तथा पोर्ट ब्लेयर की ओर अग्रसर हुआ तब अकस्मात वायु के प्रचण्ड वेग से बहने से बेचैनी होने लगी। झंझा अब तूफान में बदलने लगा था और दल ने अनुभव किया कि वह एक समुद्री चक्रवात के घेरे में फंस गया है। लहरें आसमान छूने लगीं और छोटा-सा जलयान 'मिलाली' शटलकॉक की तरह लहरों के बीच उछलता रहा। लहरें बड़ी गर्जना के साथ टकरा रही थी और पानी जलयान के कैबिन के अन्दर तक आ जाता। सभी वस्तुएं उलट-पुलट हो गईं, शीशे का सामान टूट गया, फ्रिज तक उलट गया। न तो लेट सकते, न बैठ सकते और न ही खड़े हो सकते थे। सभी यात्रियों व नाविकों को उल्टियां होने लगीं। सब गंभीरतापूर्वक सोचने लगे कि अब अन्त नजदीक ही है और किसी भी क्षण 'मिलाली' रसातल को जा सकती है किन्तु दक्ष नाविक 'मिलाली' को सकुशल बन्दरगाह के अन्दर ले जाने में सफल रहे। बन्दरगाह का प्रधान अधिकारी तथा उनके अधीनस्थ कर्मचारी बड़े चिन्ताग्रस्त हो दल की प्रतीक्षा कर रहे थे उसे सकुशल वापस आते देख उन्होंने ठंडी सांस ली। बन्दरगाह के अधिकारियों से एक बहुत बड़ी भूल हो गई थी कि चक्रवात आने से पूर्व उन्हें पता था कि 'मिलाली' समुद्र में है किन्तु वे चक्रवात आने की सूचना 'मिलाली' को देना भूल गए। इस चक्रवात के आने की पूर्व सूचना मिल चुकी थी तथा पोर्ट ब्लेयर के बन्दरगाह पर खतरा-संकेत दिया जा चुका था। नौसेना ने समुद्र में अपने जहाजों को संकट की सूचना देते हुए बता दिया था कि वे सुरक्षा के लिए किसी सुरक्षित स्थान पर शरण ले लें। ऐसा ही अन्य जहाजों के लिए भी किया गया। यह चक्रवात इतना भीषण समझा गया था कि आज बन्दरगाह के अन्दर की नौका सेवाएं भी स्थगित कर दी गई थीं। यह एक प्रकार से चमत्कार ही था कि छोटी-सी 'मिलाली' इतने बड़े चक्रवात को झेल गई संभवतः इस में जरावों की शुभ कामनाएं तथा दैवी कृपा थी जो दल के सभी सदस्य सकुशल बन्दरगाह तक पहुंच सके।

आकाशवाणी द्वारा इस स्मरणीय तथा सफल अभियान के समाचार के प्रसारण ने चारों और सनसनी फैला दी। लोग जरावों के विषय में सीधी जानकारी प्राप्त करने के लिए उमड़ पड़े। डेली टेलिग्राफ अखबार के मुखपृष्ठ पर यह समाचार छपा तथा भारत सरकार को भी इस सफल अभियान की सूचना दी गई। यह वास्तव में एक पथ-प्रदर्शक कार्य था जिसे विभिन्न अधिकारियों द्वारा कई बार दोहराया गया तथा एक दल तो कुछ जरावों को पोर्ट ब्लेयर ही ले आया तथा उन्हें कुछ दृश्य दर्शन कराकर, वापस वहीं छोड़ दिया गया। इस सम्पर्क ने संसार भर के मानव-विज्ञानियों में इनके प्रति एक विशेष इच्छा जागृत कर दी। भारत सरकार के वरिष्ठ अधिकारियों का एक दल 1984 में इन द्वीपों में आया। लेखक को डेली टेलीग्राफ में यह समाचार पढ़कर बड़ा सन्तोष हुआ कि उसके प्रयास व्यर्थ नहीं गये।

"अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह की पांच आदिवासी जनजातियों में से जरावों में अत्यन्त स्नेह, प्रेम, तथा सत्यनिष्ठा पाई जाती है। सामूहिक स्वामित्व, परस्पर सहयोग तथा

अतिथि सत्कार के महान गुणों से विभूषित होना श्लाघ्यनीय है ।" यह कथन प्रो. एल. पी. विद्यार्थी, जो एक विख्यात मानव-विज्ञानी हैं तथा मानवशास्त्री एवं मानवजाति विज्ञान के अन्तर्राष्ट्रीय संघ के भूतपूर्व अध्यक्ष रह चुके हैं, तथा प्रशासन की जरावा शाखा के तत्वाधान में सम्पर्क दल सदस्य के रूप में तरेसठ जरावों से सम्पर्क कर लौटने के बाद पत्रकार सम्मेलन में व्यक्त किया ।

ओंगी

लिटिल अंडमान के निग्रिटो नस्ल के ओंगी उन आदिवासी जनजाति के लोगों में से एक हैं जो अंग्रेजों की हिंसा के शिकार हुए । उन्होंने इस द्वीप में अंग्रेजों को आगे आने से रोका, किन्तु उनके धनुषबाण शक्तिशाली अंग्रेजों की बन्दूकों का मुकाबला नहीं कर सके । तत्पश्चात उन्होंने अंग्रेजों के सामने पूर्णतया आत्मसमर्पण कर दिया तथा इस जनजाति के लोगों ने जीवन निर्वाह के लिए स्वाभाविक आवश्यक परिश्रम व प्रेरणा शक्ति भी खो दी है ।

सन् 1893 में एम. लिपसक एक बहुत बड़ा फ्रांसिसी विद्वान आदिवासियों के जीवन की जानकारी प्राप्त करने के लिए लिटिल अंडमान आया । वह लिखता है कि ओंगियों का व्यवहार मित्रतापूर्ण था और महिलाएं भी बिना किसी संकोच या डर के जहाज पर आईं । उसके इन द्वीपों में पहुंचने के पूर्व तीन ओंगियों को जिनके नाम तोमिती, तावनाई तथा तवालाई तुदिलैंन थे', पोर्ट ब्लेयर ले जाया गया जहां से अन्य अंडमानी जनजाति के लोगों के साथ पोर्ट मैन उन्हें कलकत्ता ले गया । उन्हें वहां कलकत्ता शहर दिखाया गया । कलकत्ता की यह एक बड़ी घटना थी, वे सब शहर के लोगों की भीड़-भाड़ तथा परिवहन आदि देखकर बहुत उतेजित्त हुए । दुकानें, सर्कस, संग्रहालय सबने उन्हें आश्चर्यचकित किया । कलकत्ता के लोग भी इन आदिवासियों को देखकर बहुत रोमांचित हुए । उन्हें देखने के लिए लोगों की बहुत बड़ी भीड़ एकत्र हुई । दुकानदारों ने बड़े उत्साहपूर्वक उन्हें अपनी चीजें दिखाईं ।

इस यात्रा का मुख्य उद्देश्य था, आदिवासियों के मन में भौतिक सुख सुविधा के प्रसाधनों के प्रति उनकी आकांक्षा को जागृत करना । किन्तु यह उनके जीवन दर्शन की दिशा को मोड़ने में बिलकुल असफल रहा । अपने क्षेत्रों में लौटने पर वे इन्हें एक स्वप्न की तरह भूल गए । कई वर्षों तक उनको राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा में लाने के अनेक प्रयास किए गए जो कि विफल रहे । मानव-विज्ञानियों तथा समाजशास्त्रियों के बीच जरावों की जीवन पद्धति में परिवर्तन सम्बन्धी जिस मतभेद का पिछले पृष्ठों में विवरण दिया गया वह ओंगियों पर भी लागू होता है । विश्व की आधुनिक सभ्यता से उनके सामंजस्य के विषय में स्पष्ट नीति के अभाव में वे शीघ्र ही अपना अस्तित्व खो देंगे ।

इनकी समस्त आबादी अपनी रोजमर्रा की आवश्यकताओं के लिए अब पूर्णतया

प्रशासन पर आश्रित है । वे नाम मात्र के कपड़े पहनते हैं । पुरूष लोग एक पतली सी लंगोटी पहनते हैं और स्त्रियां नारियल के रेशे से बनी नारियल के आकार की गेंद को कमर से एक पतली डोरी के सहारे सामने से दो टांगों के बीच लटका देती हैं । जरावाओं के समान न तो उनमें आत्मविश्वास, आत्मसम्मान है और न ही उनकी तरह उनका शरीर लचीला, फुर्तीला, सुडौल, स्वस्थ व मजबूत ही है । ओंगी लोग हर समय यही सोचते रहते हैं कि कैसे प्रशासन से कुछ और सुविधाएं प्राप्त की जायें । अब उनके बदन में इतनी शक्ति नहीं रही कि वे दौड़ते हुए जंगली सूअर का पीछा कर सकें और न उसे मारने के लिए धनुष बाण से निशाना ही साध सकते हैं । एक बार तो उनकी मांग थी कि उन्हें बन्दूक चलाने का प्रशिक्षण देकर बन्दूकें दी जायें ताकि वे जंगली सूअरों का शिकार कर सकें, लेकिन प्रशासन ने इस मांग को स्वीकार नहीं किया ।

अधिकांश ओंगी अब एक आदिवासी जनजाति की बस्ती डिनोंग क्रीकि में रहते हैं । अधिकांश लोग कमजोर हैं और कुछ क्षय रोग से पीड़ित भी हैं । अब यहां पर प्रशासन द्वारा एक औषधालय की स्थापना कर दी गई है तथा उपचार के लिए प्रत्येक व्यक्ति का स्वास्थ्य सूचिका-पत्र रखा गया है ताकि ठीक उपचार हो सके । प्रशासन ने इनके आवास के लिए आधुनिक दो मंजिले भवन बना दिए हैं किन्तु खानाबदोश जीवन बिताने के अभ्यस्त होने से तथा छोटी छोटी गुफाओं की तरह घास फूस की झोपड़ी में रहने के आदी होने के कारण उन्हें इन बड़े आवासों में रहना अच्छा नहीं लगता और जब भी अवसर लगे ये चुपचाप समीप के घने जंगलों में खिसक जाते हैं और इस बस्ती के अधीक्षक के लिए उन्हें एकत्र कर एक स्थान पर लाना एक बड़ी समस्या बन जाती है । विशेष रूप से जब किसी अतिविशिष्ट व्यक्ति के बस्ती में आगमन की पूर्व सूचना काफी समय पहले न मिली हो ।

ओंगियों में बागवानी के प्रति रुचि जगाने की दृष्टि से उनकी बस्ती के समीप एक नारियल, केले, पपीता तथा कन्द-मूल आदि का फार्म बनाया गया तथा उन्हें इस फार्म में रोजाना मजदूरी पर काम करने के लिए प्रोत्साहित किया गया तथा एक दुकान भी खोली गई ताकि वे रुपए पैसे का लेन-देन भी समझ सकें । उन्होंने इस काम में कुछ रुचि दिखाई तथा अपनी बस्ती में भी एक बगीचा लगाने का प्रयास किया किन्तु अभी जितना उत्साह होना चाहिए वह नहीं है ।

उनकी आबादी में निरन्तर गिरावट आ रही है जिसकी पुष्टि निम्न आंकड़ों से होती है :-

जनगणना का वर्ष	*जनसंख्या*
1931	250
1951	150
1961	129
1971	112
1981	98

एक बार तो घट कर यह संख्या 90 तक आ गई थी किन्तु हाल के वर्षों में विशेष स्वास्थ्य सेवाओं के उपलब्ध होने से यह संख्या कुछ बढ़ गई है । ऐसे समय में जबकि देश आबादी के विस्फोट की समस्या से ग्रसित है, यह एक आश्चर्य की बात है कि इनकी जनसंख्या दिन-प्रति-दिन घट रही है । स्वास्थ्य विशेषज्ञों के अनेक दल यहां पर इस समस्या के अध्ययन के लिए आए । कुछ विशेषज्ञों की धारणा है कि संभवतः इनके भोजन की वनस्पतियों में कोई पत्ते ऐसे हों जो आबादी की बाढ़ पर रोक लगाते हैं । यदि यह बात सच हो तो इस देश की आबादी की समस्या का हल निकल सकता था किन्तु इस संबंध में बाद को किए गए अनुसंधानों में इस बात की पुष्टि नहीं हो सकी ।

लेखक स्वयं भी इन आदिवासी जनजाति के कल्याण कार्यों से सरकारी रूप से सम्बन्धित रहा तथा इनके जन जीवन का बहुत गहराई से अध्ययन किया । कम उत्पति का एक कारण जो लेखक को साफ नजर आता है वह है इनका शादी-ब्याह के मामलों में एक अनूठा रीति-रिवाज, जिसके परिणामस्वरूप यह होता है कि किसी नवयुवती की शादी बूढ़े व्यक्ति से हो जाती है तथा नवयुवक की शादी किसी बुढ़िया से । यदि किसी वृद्ध व्यक्ति की पत्नी का स्वर्गवास हो जाये तो उसे दूसरी शादी करने में प्राथमिकता दी जाती है और इसी तरह यदि कोई वृद्धा विधवा हो जाती है तो उसे दूसरी शादी में प्राथमिकता दी जाती है । ओंगी दम्पत्ति एक दूसरे के प्रति पूर्ण समर्पित व निष्ठावान रहते हैं उसका प्रत्यक्ष परिणाम है जन्म की दर में गिरावट ।

जैसा कि पहले कहा गया है यहां की ऊष्ण जलवायु में ओंगी कपड़े पहनना पसन्द नहीं करते । अब चूंकि वे आधुनिक सभ्यता के सम्पर्क में आ गए हैं तथा विशिष्ट व्यक्तियों का इनकी बस्ती में अक्सर आगमन होने के कारण इनके लिए वस्त्रों का प्रयोग आवश्यक हो गया है, कम से कम उस समय जब ये बाहर के लोग आते हैं, किन्तु जैसे ही ये लोग चले जाते हैं उनका पहला काम होता है इन वस्त्रों को फैंकना ।

जितना रुपया प्रशासन इनके ऊपर खर्च कर रहा है उनकी अल्प संख्या के संदर्भ में संभवतः उन्हें किसी पांच सितारे होटल में आराम से रखा जा सकता है । दुर्भाग्य से अधिकांश धनराशि लालफीताशाही में बरबाद हो जाती है और अन्तिम व्यक्ति को बहुत कम मिलता है । इस भीख ने इन्हें शारीरिक रूप से अकर्मण्य व मानसिक रूप से हीन भावना का शिकार बना दिया है । उन्हें आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में प्रयास की आवश्यकता है ।

सन्तनली

दुनिया के आश्चर्यजनक मानव हैं सन्तनली आदिवासी जनजाति के लोग, जिनका नाम गाइनी के विश्व कीर्तिमानों की पुस्तक में एक ऐसी जनजाति, जिसे आज तक कोई बाहरी मनुष्य नहीं मिल सका है, के रूप में लिपिबद्ध होना चाहिए । संभवतः यही एक मात्र ऐसा अजेय पक्ष है, जिसे आज का मनुष्य नहीं छू पाया है ।

दक्षिण अंडमान द्वीप के पश्चिमी तट के समीप एक द्वीप नॉर्थ सन्टीनेल है । जहां ये नीग्रिटो आदिवासी जनजाति के लोग रहते हैं । न तो यहां पर कभी कोई जनगणना हुई और न कभी किसी ने इस द्वीप में जाने का साहस ही किया । कुछ लोगों ने मोटा हिसाब लगाया कि एक व्यक्ति जो पूर्णरूप से वनस्पति पर निर्भर रहता हो उसे अपने प्राणों की रक्षा के लिए कितनी भूमि की आवश्यकता होगी, इस हिसाब से उन्होंने सन्तनली की जनसंख्या 250 तक होने का अनुमान लगाया है । सरकारी अनुमानों में उनकी संख्या 80 बताई गई है । किंतु ये सब अटकलें हैं ।

प्रशासन ने कई बार उनसे संपर्क स्थापित करने के प्रयास किए किंतु वे सब अभी तक पूर्णतया असफल सिद्ध हुए । संभवतः जीवित रहने की इच्छा शक्ति उन्हें आधुनिक सभ्यता के संपर्क में आने से रोक रही है ।

उनकी जितनी भी झलक अभी तक मिल सकी है उस आधार पर लगता है वे ओंगी, संभवत: अंडमानी व जरावों से भी कुछ और अधिक लंबे व हृष्टपुष्ट हैं । उनकी अद्भुत शारीरिक शक्ति का आभास उनके बहुत बड़े विशाल धनुषों तथा तीरों से मिलता है जिन्हें वे अपने लक्ष्य पर कुशलता से साधने में सफल होते हैं ।

कुछ समय पूर्व तत्कालीन सूचना व प्रसारण मंत्रालय का एक दल स्थानीय प्रशासन के कुछ अधिकारियों के साथ "मैन इन सर्च आफ मैन" का एक वृत चित्र बनाने इस द्वीप के समुद्र तट के समीप पहुंचने में सफल हुआ । वे वहां बालू तट पर कुछ केले, नारियल आदि रख कर वापस नाव पर आ गए, जो समुद्र तट से करीब दो सौ मीटर दूर खड़ी थी । कुछ समय पश्चात सन्तनली लोग समुद्र तट पर आए तथा बड़े उत्तेजित होकर उन लोगों से वापस जाने का इशारा करने लगे । उनके क्षेत्र में इस प्रकार घुस आने से वे अत्यन्त क्रोधित थे तथा प्रचण्ड रूप से अपना आक्रोश व्यक्त करते हुए उनकी तरफ तीर छोड़ने लगे । एक तीर कैमरामैन के पांव में लगा, सौभाग्य से गंभीर चोट नहीं आई । वे तीर चलाते समय अपना लक्ष्य आसमान की ओर करते हैं क्योंकि तीर परवलयिक उड़ान भरता है इसलिए उसकी गति व लक्ष्य में विशेष नियंत्रण की आवश्यकता होती है । उपरोक्त वृत चित्र में यह घटना क्रम स्वाभाविक रूप में निदेशक या प्रस्तुतकर्ता के बिना निर्देशन के, देखा जा सकता है फिर भी कभी दुर्लभ अवसर पर पश्चिमी तट पर जलयान में जलयात्रा करते हुए उनकी कुछ झलक मिल जाती है किन्तु आज भी उनकी जीवनचर्या, रहन-सहन आदि सब कुछ एक पहेली बनी हुई है ।

अंडमानी

अंग्रेजों के इन द्वीपों में आने के पूर्व अंडमानी आदिवासी जनजाति के लोग पोर्ट ब्लेयर तथा उसके पास दक्षिण अंडमान में रहते थे । वे भी जरावाओं की तरह बहुत खूंखार व हिंसक थे तथा उनकी जनसंख्या भी काफी थी । कैदी बस्ती बनाने में अंडमानियों ने सबसे

पहले अंग्रेजी प्रशासन से टक्कर ली । अंग्रेजी राज की इन द्वीपों में स्थापना के प्रयास का इन्होंने घोर विरोध किया किन्तु उनके धनुष बाण अंग्रेजों की बन्दूकों का मुकाबला नहीं कर सके । योग्यतम की उत्तरजीविका के सिद्धान्त के अनुसार दुर्बल को सबल के समक्ष घुटने टेकने ही पड़ते हैं किन्तु इसके लिए इन्हें एक बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी ।

खुले आसमान के नीचे ये प्रकृति के वरदपुत्र स्वच्छन्द, स्वतंत्र, रोगमुक्त स्वस्थ जीवन का आनन्द ले रहे थे । किन्तु बाहरी दुनिया से सम्पर्क के कारण उनमें हैजा, चेचक, खसरा जैसी महामारियों तथा क्षयरोग व यौन रोग जैसे संक्रामक रोग फैल गए । जिसके कारण अनेक जानें गईं । वे इन रोगों के विषय में पूर्णतया अनभिज्ञ थे तथा उनके शरीर में इन रोगों के लिए बिल्कुल असंक्रमण्यता नहीं थी ।

उन्हें अंग्रेजों का अधिपत्य स्वीकार करना पड़ा और अंग्रेजों ने उनका प्रयोग कैदी बस्ती के कैदियों की देख-रेख करने में किया । उन्हें सन्तुष्ट रखने तथा उनकी चंचल प्रकृति पर नियंत्रण रखने की दृष्टि से अंग्रेजों ने उन्हें अफीम का आदी बना दिया । रतिरोग तो वास्तव में अंग्रेज सिपाहियों का उपहार था ।

जब से अंग्रेज इन द्वीपों में आए अंडमानी, जो कि निग्रिटो जनजाति श्रेणी के हैं, दिन प्रतिदिन तीव्र गति से घटते गए । सरकारी आंकड़ों से इस तथ्य की पुष्टि होती है ।

जनगणना का वर्ष	*जनसंख्या*
1864	3000
1911	200
1931	90
1951	23
1961	19
1971	24
1981	28

उपरोक्त आंकड़ों से इस बात की पुष्टि हो पाती है कि इन आदिवासी जनजाति के लोगों का अस्तित्व अवसान के कगार पर है और जब तक इस दिशा में कोई सकारात्मक कार्यवाही नहीं की जाती स्थिति में सुधार होने की आशा बहुत कम है ।

यह सन्तोष की बात है पिछ्ले कुछ वर्षों में इस दिशा में कुछ कदम उठाए गए हैं । वनवासी भ्रमणशील जीवन का मजबूरन परित्याग करने के पश्चात ये लोग पोर्ट ब्लेयर के आसपास यों ही आवारों की तरह भटकते रहे, इनके निवास का कोई निर्धारित स्थान नहीं था । अब उन्हें पोर्ट ब्लेयर से करीब बीस किलोमीटर दूर स्ट्रेट द्वीप में बसाया गया है । वहां पर उनके लिए आवासगृह बनाए गए हैं तथा वहां पर कृषि व बागवानी करने की भी अच्छी संभावना है, किन्तु उनकी रुचि इसमें अधिक नहीं है, वैसे भी प्रशासन से मुफ्त भोजन सामग्री आदि लेने की उनकी आदत-सी बन गई है । आदिम जाति सेवक संघ की ओर से

एक सामाजिक कार्यकर्त्ता भी है जो उनकी देख-रेख करता है और एक डाक्टर भी निर्धारित तिथियों पर इस बस्ती में आता रहता है। जब भी इस आदिवासी जनजाति में नवजात शिशु का जन्म होता है वह अखिल भारतीय स्तर का समाचार बन जाता है जिसका प्रसारण रेडियो, टेलीविजन तथा अन्य समाचार पत्रों में होता है। इस समय इनकी संख्या 29 है। अभी कुछ वर्ष पूर्व एक नवजात शिशु के असली प्रजनक के रूप में शंका व्यक्त की गई क्योंकि वह निग्रिटो जाति के आम अंडमानियों से भिन्न था। इससे इस द्वीप में बाहर के आदमियों की गतिविधियों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता प्रतीत होती है।

ये लोग हिन्दी बोल लेते हैं। इनका नेता लौका, जिसकी हाल ही में मृत्यु हुई बहुत सक्रिय व्यक्ति था वह पहले बुश पुलिस में भी रहा। जापान के इन द्वीपों पर अधिपत्य के दिनों बताया जाता है कि वह अंग्रेजों के गुप्त भेदिए के रूप में काम कर रहा था।

सोम्पेन

ग्रेट निकोबार के आदिवासी जनजाति के लोग जिन्हें "सोम्पेन" कहा जाता है वे बिल्कुल ही भिन्न वर्ग के हैं। अंडमानी, ओंगी, जरावा व सन्तनली जो कि नीग्रिटो वर्ग के आदिवासी जनजाति के हैं उनके ठीक विपरीत सोम्पेन मंगोली वर्ग के अंतर्गत आते हैं। वे लोग अत्यन्त भीरू व शर्मीले हैं यहां तक कि किसी अन्य व्यक्ति की, जो उनकी जाति का न हो, नजर पड़ते ही वे गायब हो जाते हैं।

सोम्पेन लोग ग्रेट निकोबार के द्वीप की नदियों के किनारे घने जंगलों में छिपकर रहते हैं। इन्होंने घने जंगलों के बहुत अन्दर अपनी झोपड़ियां बनाई हैं, जो चारों ओर से वनस्पति से घिरे होने के कारण दूर से नजर नहीं आतीं। ये लोग कृषि से पूर्णतया अनभिज्ञ हैं और मुख्यतया नारियल, केले, केवड़ा, कन्दमूल के अलावा मछली, जंगली सूअर, छिपकली आदि से अपना जीवनयापन करते हैं। यह लोग शहद भी बहुत चाव से खाते हैं। इन्होंने शहद निकालने की विशेष कला सीखी है। छत्ते से मधुमक्खी को बिना भगाए ये आराम से शहद भिकाल लेते है। वे एक विशेष प्रकार की पत्तियों का रस अपने बदन पर मल लेते हैं जिसकी सुगन्ध से मधुमक्खियां उन्हें नहीं काटतीं यद्यपि वे उनके चारों ओर मंडराकर गुनगुनाती रहती हैं।

दो पत्थरों को परस्पर रगड़ कर ये आग पैदा कर लेते हैं। अपने प्रयोग के लिए ये लोग बांस व पेड की छालों का प्रयोग करते हैं जिन्हें छीलकर वे बर्तनों का रूप देते हैं। पानी के लिए भी वे मोटे बांस का प्रयोग करते हैं। ये लोग समुद्र तट पर बहकर आए बांस व लकड़ी के टुकड़ों से अपनी डोंगी स्वयं बनाते हैं और उसके साथ एक अन्य बांस अलग से जोड़ देते है, जिससे कि नाव उलट न सके। पुरुष लंगोट व महिलाएं पत्तियों या पेड़ की छालों के पेटीकोट पहनती है।

उनके शर्मीले स्वभाव तथा बाहरी लोगों से भय के कारण, जो भय संभवतः उस

समय से चला आ रहा है जब मलाया के समुद्री डाकुओं द्वारा उन्हें गुलाम के रूप में दक्षिण पूर्व एशिया में बेचा जाता था, प्रशासन के लिए इन आदिवासी जनजातियों से सम्पर्क स्थापित करना संभव नहीं हो पाया है। यही एक प्रमुख कारण रहा है कि अभी तक इनकी कोई ठीक जनगणना संभव नहीं हो पाई है। ऐसा अनुमान था कि इनकी जनसंख्या बहुत ही कम है। किन्तु अब कुछ ऐसा आभास हो रहा है कि इनकी संख्या अधिक है। अब प्रशासन उनकी संख्या 214 बताता है। सन् 1931 की जनगणना में उनकी संख्या 200 बताई गई थी और 1951 में 20 बताया गया और 1961 में यह संख्या बढ़कर 71 कर दी गई। यदि हम 1951 की संख्या को आधार मानें तो 1961 की संख्या असंभव बन जाती है। हम इन जनगणना के आंकड़ों पर किसी प्रकार का भरोसा नहीं रख सकते।

सीमान्त सड़क संस्थान की "यात्रिक" शाखा ने इन आदिवासियों के बीच मैत्री संबंध जोड़कर तथा सम्पर्क द्वारा उनको प्रशासन के समीप लाने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारत सरकार के पुनर्वास मंत्रालय द्वारा ग्रेट निकोबार में यात्रिक को पूर्वी तट से पश्चिमी तट तक एक सड़क निर्माण का कार्य सौंपा गया था। इस परियोजना के सम्पादन के लिए इनके लिए जंगलों के बीच शिखर स्थापित करना आवश्यक हो गया जो कि सोम्पेन आदिवासियों की बस्ती के समीप था। प्रारंभ में तो अपने इन पड़ोसियों की झलक मात्र पर सोम्पेन भाग उठते थे किन्तु धीरे-धीरे उनका विश्वास लौटने लगा जब उन्होंने देखा कि उनसे उन्हें किसी प्रकार की हानि नहीं हो रही है। सोम्पेन लोग घनी झाड़ियों में छिप कर यात्रिक लोगों की गतिविधि निहारते और कभी-कभी साहस कर खुले में भी कुछ क्षण के लिए आ जाते। यात्रिक के कर्मचारियों ने उन स्थानों पर जहां से सोम्पेन अक्सर आया जाया करते थे, उनके लिए कुछ उपहार रख दिए जिन्हें वे उठाने लगे और कुछ समय पश्चात् उनके बदले में वे लोग वहां पर शहद, नींबू आदि रख जाने लगे। इस प्रकार वस्तुओं का आदान-प्रदान कर एक मूल व्यापार प्रारम्भ कर दिया गया।

सोम्पेनों की कुछ बस्तियों में उनको भय व शर्म से मुक्त कर उनसे जन-सम्पर्क करने में हाल के वर्षों में विशेष सफलता मिली है। उनके बच्चों की शिक्षा के लिए एक स्कूल भी खोल दिया गया है।

पर्यटकों का स्वर्ग

बोंइग हवाई सेवा के प्रारंभ तथा आधुनिकतम वातानुकूलित पानी के जहाजों की सेवा में विस्तार के फलस्वरूप अंडमान व निकोबार द्वीप समूह अब बाहरी दुनिया के लिए सुलभ बन चुके हैं। अब तो एक द्वीप से दूसरे द्वीप में जाने के लिए हेलिकाप्टर सेवा भी उपलब्ध है। इसका एक रोचक पहलू समस्त विश्व के पर्यटकों द्वारा इन द्वीपों में बहुत बड़ी अभिरूचि प्रकट करना है। विश्व के पर्यटन के मानचित्र में प्रथम बार ये द्वीप प्रदर्शित हुए हैं और पर्यटकों में पहले कौन पहुंचे इस बात की होड़-सी लग गई है। विदेशी पर्यटकों के लिए इन द्वीपों में आने के नियमों में काफी ढील दे दी गई है। पहले कोई भी विदेशी नागरिक यहां बिना भारत सरकार के गृह मंत्रालय के अनुमति पत्र के बिना नहीं आ सकता था। अब उसकी आवश्यकता नहीं है लेकिन पोर्ट ब्लेयर पर उतरने के तुरन्त बाद आप्रवासन द्वारा पार-पत्र में छाप लगा दी जाती है और तत्पश्चात विदेशी पर्यटक चौदह दिन तक पोर्ट ब्लेयर नगरपालिका की सीमा के अंतर्गत रह सकता है। कुछ अन्य द्वीप भी विदेशी पर्यटकों के लिए खुले हुए हैं किन्तु इन द्वीपों में जाने के लिए कम से कम 6 सदस्यों का दल होना आवश्यक है। सुनहरे बालू से भरा समुद्र तट, स्वच्छ, साफ, चमकता समुद्र का पानी, जिसमें रंग-बिरंगी मछलियां विचरण करती हैं, समुद्र के अंदर अन्य रंगीन जीव जन्तु, आकर्षक श्रवाल (कोरल) तथा बहुरंगी फूल, पौधों आदि के आकार के समुद्री शैवाल (सी बीडस) इन्हें स्वप्न द्वीप की संज्ञा देते हैं विशेष रूप से विभिन्न उपकरणों के साथ गोता लगाना तथा समुद्र के अन्दर की रंगीन दुनिया को निहारना तथा उसके चित्र लेना बहुत आनन्ददायक है। अनेक द्वीप जो अभी खाली हैं वहां की चारों ओर सघन पुंजों की हरियाली, आधुनिक संसार के कोलाहल तथा प्रदूषण से दूर, शान्त, एकान्त वातावरण, आज के दुखी व क्लान्त मानव के मन को परम शान्ति, सुख व दिव्य अनुभूति प्रदान करता है। इस प्रकार के सुरम्य व आकर्षक वातावरण में समुद्र तट पर बिखरी सुनहली रजकणों में लेटा सारी दुनिया से बेखबर पर्यटक अपनी त्वचा को सूर्य की प्रखर किरणों से स्नान कराता हुआ मंत्र मुग्ध हो प्रकृति पुत्र बन जाता है।

हाल के वर्षो में मुख्य भूमि से भी बहुत से पर्यटक इन द्वीपों में आए। कालापानी का वह भयावह रूप जो विभिन्न कैदियों ने प्रदर्शित किया था उसके स्थान पर सुख व सुन्दरता का एक रम्य चित्र उभर कर आ गया है।

स्वतंत्रता-सेनानियों के द्वारा देश की आजादी के लिए महान त्याग, तपस्या व बलिदान देकर यहां स्थित सेलूलर जेल में भीषण यातनाएं सहने के कारण अब यह हर देशवासी के लिए महान तीर्थ बन चुका है। सेलूलर जेल की राष्ट्रीय स्मारक के रूप में घोषणा स्वतन्त्रता-सेनानियों को सबसे बड़ी श्रद्धांजलि है। सरकारी कर्मचारियों के भ्रमण अवकाश नियमों में सुधार करने से अनेक कर्मचारी सपरिवार इन द्वीपों को देखने आए जिससे उनके मन से अंडमान के संबंध में भ्रान्ति दूर हो गई। देश की आजादी के बाद आजीविका की तलाश में एक बहुत बड़ी संख्या में लोग मुख्य भूमि से आए तथा अपने परिजनों को यहां की सुन्दर सुख सम्पदा के विकास की संभावनाओं के विषय में लिखते रहे। इससे भी देशवासियों का ध्यान इस ओर गया।

पोर्ट ब्लेयर

पोर्ट ब्लेयर अंडमान व निकोबार द्वीप समूह के प्रशासन का मुख्यालय है। विश्व के सबसे सुन्दर व सुरक्षित बन्दरगाहों में इसकी गिनती होती है। ऊपर चारों तरफ पहाड़ों की हरियाली तथा नीचे नीले समुद्र से घिरा पोर्ट ब्लेयर कश्मीर या नैनीताल की तरह दिखाई देता है केवल जलवायु की दृष्टि से यह ऊष्ण तथा नम है। पहाड़ियों की ढलान पर बने बंगले व घर दूर से बहुत सुन्दर दिखाई देते हैं, विशेष रूप से रात्रि के समय। पोर्ट ब्लेयर में अन्य महत्वपूर्ण स्थान हैं अवरडीन, साउथ पॉइन्ट, शादी पुर (जहां अंग्रेजी काल में कैदियों का परस्पर विवाह होता था) नयांगांव, लम्बा लाइन, डेरी फार्म, मेरीन हिल्स, गोलघर, जंगलीघाट, दिलानीपुर, हाडो, अनारकली, बाबू लाइन, प्रेम नगर, बुनियादाबाद, रेडियो कालोनी तथा फौनिक्स बे।

हाडो मुख्य बन्दरगाह है जहां कलकत्ता तथा मद्रास से आने वाले बड़े जहाज लंगर डालते हैं। अंतर्द्वीपों के जलयानों के लिए नावघाट चैथम जेटी, फिशरीज जेटी और मेरीन जेटी पर हैं। मरम्मत आदि के लिए जलयान कलकता तथा मद्रास भेजे जाते थे किन्तु अब यहां सूखी गोदी के बन जाने से यह समस्या काफी सुलझ गई है। पोर्ट ब्लेयर में 73 किलो मीटर सड़कें हैं, जिनकी दशा सन्तोषजनक है। घोर वर्षा होने पर भी, पहाड़ी भूमि होने के कारण बारिश का पानी तुरन्त समुद्र में चला जाता है और कीचड़ वगैरह नहीं होता।

अंडमान व निकोबार द्वीप समूह के लोग खेल कूद में बहुत रुचि रखते हैं। पोर्ट ब्लेयर में एक बड़ा सुन्दर क्रीड़ा-स्थल है जिसका नाम जिमखाना मैदान है यहां पर रोज शाम को बड़ी भारी संख्या में नर-नारी हाकी या फुटबाल के खेलों को देखने के लिए एकत्रित होते हैं। खेलों का स्तर काफी ऊंचा है। दुर्भाग्य से दूरी के कारण उनकी प्रतिभा इन्हीं द्वीपों तक सीमित रह जाती है। यहां पर अनेक क्लब व अन्य संस्थाएं है जहां पर बैडमिन्टन, टेनिस, बिलियर्ड, टेबल टेनिस खेले जाते हैं। यहां पर विभिन्न प्रदेशों से आए लोगों द्वारा समय-समय पर अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। यहां स्थित तीन सिनेमा घरों में प्रायः हिन्दी चलचित्र दिखाए जाते हैं किन्तु कभी-कभी अन्य प्रादेशिक भाषाओं तथा

अंग्रेजी की फिल्में भी दिखाई जाती हैं।

पोर्ट ब्लेयर स्थित अवरडीन बाजार विभिन्न प्रकार की वस्तुओं से भरा रहता है तथा स्थानीय सब्जियां व फल भी यहां पर बेचे जाते हैं। यहां पर अनेक भोजनालय व ढाबे आदि भी हैं, जहां पर हर प्रकार का भोजन मिलता है उनमें विशेष रूप से दक्षिण भारत का स्वादिष्ट भोजन, अंडे, माँस, मछली तथा अन्य समुद्री भोजन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होता है। मृगमाँस विशेष रूप से स्वादिष्ट माना जाता है। यहां पर कोई मद्यनिषेध नहीं है।

सरकारी अतिथि गृहों के अतिरिक्त एक छोटी पहाड़ी के ऊपर सरकारी विश्राम भवन है और इसी के समीप एक सरकारी पर्यटक गृह भी बना है। एक विशेष पर्यटक विश्रान्ति भवन इन द्वीपों में पाये जाने वाले दुर्लभ पक्षी के नाम पर मैगापोटे नेस्ट बनाया गया है। मैगापोटे नेस्ट में वातानुकूलित कमरे उचित दर पर उपलब्ध हैं और उसी के अहाते में दो विशेष प्रकार के निकोबारियों की कुटीरनुमा घर बनाए गए हैं, जिनका मुंह बन्दरगाह की तरफ है तथा वहां से सम्पूर्ण बन्दरगाह का अत्यन्त नयनाभिराम दृश्य नजर आता है। ट्रैवल कारपोरेशन द्वारा कारवाइन कौव बालुतट के समीप सन्तूर बीच होटल, तथा एक अन्य वेलकम ग्रुप वे आइलैंड होटल मेरीन हिल्स पर बन्दरगाह के मुहाने पर बनाया गया है। सस्ते आवास के लिए 46 बिस्तरों वाला एक यूथ होस्टल हाल ही में बनाया गया है।

पोर्ट ब्लेयर पर्यटकों के देखने योग्य प्रमुख स्थल सेलूलर जेल के अतिरिक्त मानव शास्त्रीय संग्रहालय, मत्स्य संग्रहालय, चिड़ियाघर, उद्योग विभाग का कुटीर उद्योग का प्रदर्शन एवं विक्रय कक्ष तथा चैथम आरा मिल है।

इन द्वीपों का आश्चर्यजनक रूप अर्थात इन द्वीपों में आदिवासी जनजाति के लोगों का पाया जाना, जो आज भी पाषाण युग का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। पिछले पृष्ठों में इस पर काफी चर्चा की गई है। मानव शास्त्रीय संग्रहालय में आदिवासियों द्वारा नित्य प्रति के जीवन में प्रयोग में लाई जाने वाली विभिन्न वस्तुओं का बहुत अच्छा संग्रह किया गया है जैसे धनुष बाण, पेड़ों की छालों का बना आत्म रक्षा का कवच, नौकाएं, बर्तन, आभूषण तथा अन्य कलात्मक वस्तुएं। पर्यटकों को सलाह दी जाती है कि वे एक वृत्त चित्र "मैन इन सर्च आफ मैन" अवश्य देखें जो यहां के आदिवासियों के जीवन पर प्रकाश डालता है। इस वृत्त चित्र को यहां का पर्यटन विभाग निःशुल्क अक्सर दिखाता रहता है। इसको देखने से इस संग्रहालय का महत्व अच्छी तरह समझ में आ जाता है। पोर्ट ब्लेयर में एक छोटा सा मत्स्य संग्रहालय है जो इन द्वीपों की अपार समुद्री सम्पदा की क्षमता की झलकियां प्रस्तुत करता है। इसमें करीब 350 समुद्री जन्तुओं के नमूने प्रस्तुत किए गए हैं, जिसमें मृत शार्क का ढांचा बहुत डरावना लगता है। पोर्ट ब्लेयर में एक छोटा-सा चिड़ियाघर भी है इसमें इस द्वीप में पाए जाने वाले पक्षियों व जानवरों के अतिरिक्त अन्य जानवर व पक्षी भी रखे गए हैं।

प्रशासन के उद्योग विभाग द्वारा पोर्ट ब्लेयर में एक कुटीर उद्योगों का प्रदर्शन एवं

विक्रय कक्ष खोला गया है जिसमें स्थानीय लकड़ी, प्रवाहित काष्ठ, बांस, केन, सीप पर अनेक कला एवं शिल्प कला कृतियां बनाई जाती हैं और उचित मूल्य पर बेची जाती हैं। कभी स्थानीय शिल्पकार भी अपनी कलाकृतियों को यहां पर बेचने के लिए रख देते हैं। सीप से बने आभूषण बहुत सुन्दर लगते हैं तथा सीप से बनी अन्य वस्तुएं भी उतनी ही प्रसिद्ध हैं। लघु नावें तथा फर्श पर बिछाने के लिए नारियल की पत्तियों की चटाइयां भी यहां पर मिलती हैं। यहां पर अन्य स्थानीय लोगों की भी सीप तथा काष्ठ की अनेक दुकानें हैं जहां पर दुर्लभ कलाकृतियां मिलती हैं जिन्हें स्मृति चिन्ह के रूप में लोग खरीदते हैं।

चैथम आरा मशीन कारखाना एक छोटे से द्वीप चैथम में स्थित है जिसे एक पुल द्वारा पोर्ट ब्लेयर से जोड़ा गया है। लकड़ी का यह कारखाना एशिया में सबसे बड़ा है और अधिकांश काम स्वचालित यंत्रों से किया जाता है। यह दृश्य देखकर दर्शक स्तम्भित रह जाता है कि एक ओर से लगभग समूचे पेड़ के तने अन्दर प्रवेश करते हैं और दूसरी ओर उनकी पतली छिपटी बाहर निकलती हैं। वन विभाग द्वारा यहां पर एक विक्रय कक्ष भी खोला गया है जहां से आगन्तुक अनेक प्रकार की दुर्लभ लकड़ियों से बनी कलाकृतियां खरीद सकते हैं।

इन द्वीपों में लकड़ी के सम्पन्न वनों की झांकी प्राप्त करने के लिए विमको के कारखाने में जहां दियासलाई की तिलियां बनती हैं और बम्बूफ्लैट में अंडमान टिम्बर इन्डर्स्ट्रीज में जहां से परती लकड़ी (प्लाइवुड) विदेशों को भेजी जाती है, जाना श्रेयकर होगा।

अंडमान प्रशासन पर्यटकों के लिए दर्शनीय स्थानों के लिए संचालित पर्यटन व्यवस्था करता है जिसमें बन्दरगाह के अन्दर एक पोत विहार भी सम्मिलित है। इसे आसानी से प्रयोग में लाया जा सकता है। पोर्ट ब्लेयर बन्दरगाह की संसार के सुन्दरतम बन्दरगाहों में गिनती की जाती है। गहरी संकरी खाड़ी में समुद्र का पानी इतने अन्दर तक फैला हुआ है कि बड़े-बड़े जहाज आसानी से अन्दर तक आ सकते हैं। कच्छ वनस्पति (मैनग्रौव) के जंगल, चारों ओर हरियाली तथा पृष्ठभूमि में पहाड़ियों के नयनाभिराम दृश्य को देखकर पर्यटक सुधबुध खो बैठता है। इस परिभ्रमण में रौस तथा वाइपर द्वीप में जाना भी सम्मिलित है।

रौस द्वीप

सन् 1857 की क्रान्ति के स्वतन्त्रता-सेनानी कैदी के रूप में 1958 में प्रथम बार रौस द्वीप में लाए गए। बाद में यह अंग्रेजी शासन के मुख्यालय के रूप में विकसित हुआ तथा यहां पर अनेक कलात्मक तथा वास्तुकला के उत्कृष्ट नमूने वाले भवनों व गिरजाघरों का निर्माण हुआ। मुख्य आयुक्त का विशाल भवन, जो अब भग्नावस्था में है, पश्चिम व पूर्व की वास्तुकला का उत्कृष्ट व अनूठा सामंजस्य का परिचायक था जो विन्डसर कासल के समय बना था किन्तु इसमें लकड़ी की दिल्हाबन्दी तथा काष्ठ उत्कीर्ण के कार्य में बर्मा के बौद्ध मन्दिरों की कला का अनुकरण किया गया था।

अंत में इस द्वीप को छोड देना पडा क्योंकि भूकंप के कारण यह खतरनाक घोषित किया गया था। एक समय ऐसा था जब सारा द्वीप ऐश्वर्यपूर्ण व रंगीन जीवन से गुंजायमान था जिसमें आलीशान सचिवालय भवन, बंगले, सुन्दर गिरजाघर, क्लब, तैरने का तालाब जिसमें गरम पानी की भी व्यवस्था थी, टेनिस के मैदान तथा अंग्रेज सिपाहियों के लिए बैरिकें भी बनी थीं। ये सब भवन अब खण्डहर बन चुके हैं जिन्हें झाड़ियों, पेड़ों तथा बेलों ने ढक दिया है। दीवारों को बेलों ने इस प्रकार जकड़ दिया है कि उन पर अनेक कलात्मक तथा ज्यामितीय नमूने बन गए हैं, जो सारे वातावरण को रोमानी तथा कहीं डरावना सा बना देते हैं। यह स्थान वृत्त चित्र बनाने के लिए बिना अधिक काट-छांट के प्रयोग में लाया जा सकता है।

कुछ चीतल इस द्वीप में छोड़े गये हैं किन्तु उन्हें खाने के लिए उचित चारा उपलब्ध नहीं होता, विशेष रूप से गर्मी के मौसम में जब उन्हें नौसेना के प्रहरी नारियल की गरी देते हैं। जिसके कारण वे नौसैनिकों से बिल्कुल नहीं डरते। यहां पर कुछ मयूर पक्षी भी हैं। यहां का कब्रिस्तान भी यहां के इतिहास की झांकी प्रस्तुत करता है। इस द्वीप में जाने से पूर्व नौसेना से अनुमति पत्र अवश्य प्राप्त करना चाहिए।

कारबिन कौव बीच

कारबिन कौव पर अर्द्धचन्द्राकार समुद्री बालू तट बहुत सुन्दर नैसर्गिक वातावरण में शोभायमान है जो समुद्र स्नान के लिए बहुत उपयुक्त स्थान है। रविवार या अन्य अवकाश के दिन पोर्ट ब्लेयर से लोगों की भीड़ यहां पर समुद्र स्नान के लिए उमड़ पड़ती है। एक छोटे-से कुटीर में बालू तट के समीप नहाने व रहने की व्यवस्था भी है। प्रशासन के कृषि विभाग द्वारा यहां पर एक नारियल का बगीचा भी लगाया गया है जहां पर उचित मूल्य पर डाब पीने को मिल सकता है। पोर्ट ब्लेयर से 10 किलो मीटर की दूरी पर जापानियों द्वारा अधिपत्य काल में बनाए गये बंकर व छोटे कंक्रीट के किले हैं, जो बहुत मजबूत तथा जापान के इंजीनियरों की कार्यकुशलता का प्रतीक हैं।

माउंट हैरियट

माउंट हैरियट सबसे नजदीकी ऊंची चोटी है जिसकी ऊंचाई 365 मीटर है तथा बम्बू फ्लैट से तीन किलोमीटर की दूरी पर है। यहां पर कभी चीफ कमिश्नर का ग्रीष्म कालीन निवास था जिसके केवल कुछ चिन्ह ही शेष रह गए हैं। यहां से पोर्ट ब्लेयर तथा पहाड़ियों का बहुत सुन्दर दृश्य दिखाई देता है। हैरियट पहाड़ का सबसे बड़ा आकर्षण है यहां से सूर्यास्त का अलौकिक दृश्य जिसे देखते हुए देर हो जाने के कारण तत्कालीन वायसराय लोर्ड मेयो को अपने प्राण गंवाने पड़े थे। यहां चढ़ते समय सैलानी यहां के वनों की विपुल सम्पदा को भी देख सकते हैं तथा कुछ दुर्लभ किस्म के पेड़ पडौक, गुर्जन, पपीता आदि पहचानना सीख सकते हैं।

सीपीघाट

सीपीघाट पोर्ट ब्लेयर के करीब चौदह किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। प्रशासन के कृषि विभाग का यहां पर एक कृषि उद्यान फार्म है जहां कई नए प्रकार के पौधे तथा मसाले पैदा करने पर परीक्षण किए जा रहे हैं। इनकी प्रगति को देखकर एक अनजान व्यक्ति भी इन द्वीपों की इन कीमती मसालों की उत्पादन क्षमता के बारे में आश्वस्त हो जाता है। लौंग, कालीमिर्च, जायफल, दालचीनी, अन्नानास, पपीता, सन्तरे, केले आदि के सुन्दर अत्यलंकृत पौधों को अन्य द्वीपों में फैलाने के कार्यक्रम के औचित्य की पूर्ण रूप से पुष्टि करते हैं। बौने जाति के नारियल के पेड़ों को देखकर बहुत आश्चर्य होता है।

इस फार्म में स्थानीय तथा जंगली जाति के अनेक फूल हैं। उष्ण कटिबन्धी सूर्य की प्रखर किरणें नये पुष्पों में विचित्र गहरे रंग भर देती हैं जो कि एक चमत्कारिक प्रक्रिया है। इसी फार्म के समीप एक अन्य परीक्षण फार्म केन्द्रीय कृषि अनुसंधान संस्थान के अंतर्गत खारे जल में नारियल की खेती पर परीक्षण कर रहा है जिसकी विशेष प्रकार की पौध लगाई गई है। उनकी प्रगति बहुत अच्छी है। सीपीघाट जाने वाले मार्ग पर झींगा तथा अन्य समुद्री भोजन विकास परीक्षण फार्म भी बनाए गए हैं।

जिरकटांग

सीपीघाट से करीब 32 किलोमीटर दूर जिरकटांग में एक अन्य उद्यान है। यह फार्म गहन वन के अन्दर जरावों की सुरक्षित जेल के समीप बनाया गया है। बागवानी के क्षेत्र में यह एक अनोखा परीक्षण है कि ऊंचे जंगली पेड़ तथा झाड़ियों के बीच उद्यान लगाए गए हैं। इस प्रकार वन व उद्यान के बीच यह अंतर्जातीय विवाह अत्यन्त सफल सिद्ध हुआ है, विशेष रूप से काली मिर्च की बेलें बहुत अच्छी पनप रही हैं क्योंकि उनको छाया की आवश्यकता होती है जिसे यहां के प्राकृतिक वातावरण में जंगली पेड़ उपलब्ध कराते हैं। अन्य पौधे जो सफलतापूर्वक उगाये गये हैं वे हैं लौंग, जायफल, दालचीनी, केले तथा कोको। आदिवासी जरावा नारियल व केले बहुत चाव से खाते हैं। वे कभी-कभी चांदनी रात में इस फार्म पर हमला भी बोल देते हैं।

चिड़िया टापू

पोर्ट ब्लेयर से करीब 26 किलोमीटर की दूरी पर दक्षिण अंडमान का दक्षिणी छोर चिड़िया टापू कहलाता है। यहां पर एक बहुत सुन्दर वन विभाग का विश्राम गृह है जहां पर सैलानी रात्रि विश्राम कर सकते हैं। चिड़ियों के सुरीले गीतों से उन्हें प्रभात का आभास मिलता है। वे वहां मछली पकड़ सकते हैं, समुद्र में नहा सकते हैं तथा समुद्र तट से कुछ सीपियां एकत्रित कर सकते हैं। अंडमान में पाये जाने वाले पक्षियों में भी अधिकांश पक्षी यहां पर पाये जाते हैं।

बर्मानाला पोर्ट ब्लेयर से 17 किलोमीटर की दूरी पर है। यहां पर लकड़ी का ढुलान

व चढ़ान वन विभाग हाथियों द्वारा करवाता है।

मधुबन पोर्ट ब्लेयर से 14 किलोमीटर की दूरी पर है। वहां पर वन विभाग द्वारा हाथियों को लकड़ी के लट्ठों का ढुलान तथा चढ़ाने का प्रशिक्षण दिया जाता है क्योंकि यहां जंगलों में भारी वस्तुओं को उठाने के लिए क्रेन ले जाना संभव नहीं होता अत: यह काम हाथियों द्वारा किया जाता हैं।

वन्डूर बालू तट पोर्ट ब्लेयर से करीब एक घंटे में मोटर कार से पहुंचा जा सकता है। यह स्थान बहुत रमणीय है और यहां से कई द्वीप पास-पास दिखाई देते हैं। समुद्र का पानी बहुत साफ सुथरा है और नहाने तथा तैरने के लिए बहुत उपयुक्त है। इस समुद्र तट पर प्रवाहित काष्ठ की अनेक कलाकृतियां मिल जाती हैं। यहां पर वन विभाग का विज्ञान भवन भी है जहां से सारे क्षेत्र का मनोहर दृश्य दिखाई देता है। यहां से अन्य दूसरे समीप के रेडस्किन, जौलीबोय, क्रेब आदि रमणीय द्वीपों में जाने के लिए नावें उपलब्ध हो जाती हैं।

जौलीबोय जैसा कि नाम दिया गया है प्रकृति की एक अनोखी रचना है और वास्तव में बहुत रमणीय है। सुनहली चमकती बालू तट पर सघन पुंजों की छतरी, पर्यटक एक बार तो हजारों वर्ष पूर्व के अतीत में खो जाता है जब मनुष्य प्रकृति से आत्मसात था। यह बिल्कुल निर्जन द्वीप है तथा पर्यटक बिल्कुल एकान्त में प्रकृति की सुरम्य गोद में खो जाने को लालायित रहते हैं जहां उन्हें आत्मिक शान्ति व विश्रान्ति मिलती है। जल के अन्दर के जीव जन्तुओं की दुनिया की निराली है। विशेष रूप से श्रवाल (कोरल) तथा समुद्री शैवाल (सी बीडस) जो विभिन्न रंग बिरंगे फूल-पौधों के आकार के होते हैं। यह उपकरणों सहित गोता लगाने तथा सतह से थोड़े नीचे नली से सांस लेकर तैरने के लिए आदर्श स्थान है।

रेडस्किन द्वीप भी वन्डूर के बहुत निकट है। सघन वन के बीच बहुत सुन्दर कोरल पाये जाते हैं। मछली पकड़ने तथा एकान्त के लिए बहुत अच्छा स्थान है।

राईट म्यो पोर्ट ब्लेयर से केवल 17 किलोमीटर दूर है। वन विभाग की यहां पर एक शाखा है जहां पर हाथियों द्वारा लकड़ी के लट्ठे चढ़ाने उतारने का काम किया जाता है। इन प्रशिक्षित जानवरों को महावत के इशारे पर कम्प्यूटर की तरह काम करते देख कर आश्चर्य होता है। इससे थोड़ा आगे यहां खाड़ी में नौका विहार का आनन्द उठाया जा सकता है यदि समुद्र ज्वार पर हो तो कहना ही क्या, क्योंकि मैनग्रौव के पेड़ों का समुद्र में आधे डूबे हुए होने पर नौका विहार में अलौकिक आनन्द मिलता है।

मध्य अंडमान

पोर्ट ब्लेयर से बहुत सवेरे के समय रंगत के लिए नावें चलती हैं। रंगत करीब 50 नौटिकल मील की दूरी पर स्थित है। वहां के लिए दो नावें चलती हैं। एक नेल व हैवलौक द्वीपों से होकर चलती है तथा दूसरी बाराटांग होकर जाती है। ये नावें उसी शाम को वापस

लौट जाती हैं । यह नौका विहार बड़ा रोमांचित व ज्ञानवर्धक है और विभिन्न द्वीप वासियों के जनजीवन की झांकी प्रस्तुत करता है । रंगत में तहसील है और यह बड़ी तेजी से कस्बे का रूप ग्रहण कर रहा है । यहां पर अस्पताल तथा शिक्षण संस्थाएं हैं । यह क्षेत्र जरावा सुरक्षित क्षेत्र से मिला हुआ है और समीप के ग्रामों में जरावा अक्सर रात में आकर नारियल व केले चुपचाप चुरा ले जाते हैं । इस क्षेत्र में बहुत अच्छे सन्तरे पैदा होते हैं ।

मायाबन्दर भी मध्य अंडमान में स्थित है तथा रंगत के काफी समीप है । यह मध्य अंडमान के परगनाधीश का मुख्यालय है । यहां अस्पताल, स्कूल व अन्य विभागों के कार्यालय भी हैं । पोर्ट ब्लेयर से यह 85 नौटिकल मील है तथा यहां के लिए एक सीधी व एक रंगत होकर नाविक सेवा उपलब्ध है । नाव से रंगत में उतरकर वहां से मायाबन्दर के लिए बस भी ली जा सकती हैं । रंगत से मायाबन्दर तक की सड़क अनेक बस्तियों से होकर जाती है जिनमें प्रमुख हैं दक्षिण भारत के लोगों की बस्ती वेटापुर, बंगाल के लोगों का बिलीग्राउण्ड तथा बर्मा के करेन लोगों की बस्ती । सड़क घने जंगलों से होकर जाती है और अक्सर मृग दिखाई देते हैं ।

मायाबन्दर में सार्वजनिक निर्माण विभाग का एक सुन्दर विश्राम गृह है जो बिल्कुल समुद्र तट पर है । यहां आने पर रात्रि विश्राम यहीं करना पड़ता है क्योंकि वापसी नाव केवल दूसरे प्रातः जाती है । अगर किसी के पास समय हो तो कालीघाट तक का नौका विहार अत्यन्त आनन्ददायक तथा उत्तेजनापूर्ण होता है क्योंकि खाड़ी में अनेक मगरमच्छ दृष्टिगोचर होते हैं । यह सारा क्षेत्र मगरमच्छों से भरा हुआ है । मायाबन्दर में भी जगह-जगह पर इनके अंडे बिखरे दिखाई देते हैं । नैसर्गिक छटा बहुत ही नयनाभिराम है ।

उत्तरी अंडमान

दिगलीपुर उत्तरी अंडमान का मुख्यालय है । यह पोर्ट ब्लेयर से 100 नौटिकल मील की दूरी पर स्थित है । कभी-कभी यहां जाने वाली नावें मायाबन्दर भी कुछ देर के लिए रुकती हैं । यहां की जलवायु बहुत अच्छी है और पर्याप्त मात्रा में यहां पर शाक, सब्जियां उगाई जाती हैं । यहां की भूमि बहुत उपजाऊ है । यहां फसल बहुत अच्छी होती है । इसे एक प्रकार से अंडमान का अन्न भंडार कह सकते हैं । यहां 762 मीटर की ऊंचाई पर स्थित सैडल पीक चारों ओर से दिखाई देता है । सार्वजनिक निर्माण भवन भी कुछ ऊंचाई पर बना है वहां से सम्पूर्ण विस्तृत घाटी का विहंगम दृश्य बहुत नयनाभिराम है, जो एक प्रकार से कश्मीर घाटी का स्मरण दिलाता है । सर्पाकार कलपांग नदी विश्राम भवन के समीप से जाती है और यदि बारिश व समुद्र का ज्वार दोनों एक साथ हो जाते हैं तो दूर तक नदी का जल फैल जाता है ।

दक्षिण के द्वीपों के मुकाबले में मध्य व उत्तरी अंडमान के क्षेत्र अधिक पर्यटकों को आकर्षित नहीं कर पाए हैं उसका प्रमुख कारण है इनका अगम्य होना तथा आवागमन के

साधनों की कमी। किन्तु थोड़ी साहसिक भावना से इन समस्याओं पर काबू पाया जा सकता है और इसका परिणाम अत्यन्त लाभप्रद होगा तथा अनुभव स्मरणीय रहेगा।

शीघ्र ही दक्षिण अंडमान को उत्तरी अंडमान से भूमि के रास्ते मध्य अंडमान होते हुए जोड़ देने की एक महत्वाकांक्षी परियोजना पूरी हो जायेगी। विभिन्न द्वीपों को पृथक करने वाली खाड़ियों पर नाविक सेवा उपलब्ध कराने का प्रावधान है। इस परियोजना का नाम अंडमान ट्रंक रोड है जो लगभग पूरी होने को है।

लिटिल अंडमान

लिटिल अंडमान पोर्ट ब्लेयर 66 नौटिकल मील दक्षिण में काफी बड़ा द्वीप है। रास्ते में दो सिंक द्वीप हैं जो एक बालू की दीवार से अलग होते हैं। ज्वार के समय यह दीवार समुद्र में समा जाती है। इसके दक्षिण में दो और द्वीप हैं जिन्हें ब्रदर्स व सिस्टर्स कहा जाता है। लिटिल अंडमान में पहले केवल आदिवासी जनजाति के ओंगी रहा करते थे जिन्होंने अंग्रेजों के साथ अपने धनुष बाण से लड़ाई लड़ी किन्तु हार गए। तब से इनकी आबादी निरन्तर घटती गई तथा अब उनका अस्तित्व समाप्त होने पर है।

ओंगियों को अब डिगोंग क्रीक में, जो कि हट बे से कुछ ही किलोमीटर दूर उत्तर में है, बसाया गया है। इस बस्ती में केवल अनुमति पत्र से ही प्रवेश मिल सकता है जिसे प्रशासन केवल विशेष परिस्थितियों में देता है जब यात्रा का उद्देश्य उनसे सम्बन्धित हो। प्रशासन नहीं चाहता कि उनको बाहरी दुनिया के सामने अनाश्रित छोड़ दे, संक्रामक रोगों के भय के अतिरिक्त इस बात का भी अंदेशा है कि बाहर से आये अनियन्त्रित लोग कहीं इनका शोषण न कर लें तथा इनकी अर्द्धनग्नावस्था का मजाक उड़ाकर उनके अन्दर हीन भावना न भर दें। लेकिन हट में दो चार ओंगी अकसर मिल ही जाते हैं जहां वे सौदा खरीदने जाते रहते हैं। लिटिल अंडमान का प्रवेश द्वार नाव घाट नहीं था। वन विभाग को यहां से लकड़ी ले जाने में बड़ी कठिनाई होती थी जो तूफान में समुद्र में दूर बह जाती जिसे पुनः लाना संभव नहीं होता। यहां पर एक नौका घाट (जेटी) बनाई गयी किन्तु उसे भी समुद्री चक्रवात से सुरक्षा की आवश्यकता थी। अतः तंरगरोध बांध हाल ही में बनाया गया है, जो दर्शनीय है।

कुछ वर्ष पूर्व तक ये द्वीप बिल्कुल बंजर पड़ा था। भूतपूर्व पूर्वी पाकिस्तान से आने वाले विस्थापितों के तथा श्री लंका तथा बर्मा से देश प्रत्यावर्तितों के पुनर्वास के लिए, पुनर्वास विभाग ने दैत्याकार बुलडोजरों द्वारा जंगल साफ करा कर विभिन्न स्थानों में 331 परिवार बसाये जिन्हें सड़क, स्कूल और पेयजल उपलब्ध किए गए हैं। लोग बहुत परिश्रमी हैं और भूमि भी उतनी ही उपजाऊ है और वे विभिन्न प्रकार के अनाज उगाने में सफल हुए हैं।

इस द्वीप में सबसे आकर्षक दृश्य 2400 हेक्टर में फैले लाल तेल वाले खजूर के लहलहाते पौधे हैं जो यहां पर मलेशिया, नाइजीरिया, आइवरी कोस्ट, पपुवा, न्यूगिन्नी से बीज लाकर

उगाए गए हैं। अपने मूल स्थान मलेशिया से भी पौधे की वर्धन यहां पर अच्छी हुई है। छतरी-सी ओढ़े हुए अत्यलंकृत इसके पौधे दूर तक पहाड़ी ढालों पर फैले एक नयनाभिराम दृश्य प्रस्तुत करते हैं। इस योजना का पूर्ण रूप से सम्पादन होने पर कीमती विदेशी मुद्रा की बचत हो सकेगी।

कार निकोबार द्वीप की जनसंख्या बहुत अधिक है। यहां की कुछ आबादी को ग्रेट निकोबार द्वीप में बसाने के प्रयास असफल रहे यद्यपि कुछ परिवार अस्थाई रूप से पश्चिमी तट पर बसे। निकोबारियों की प्रार्थना पर पांच सौ एकड़ भूमि लिटिल अंडमान में दी गई है, जहां उन्होंने सामुदायिक रूप से खेती की है व उद्यान लगाये हैं। निकोबारियों की यह बस्ती हट बे से केवल 5 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है और पर्यटक उनके जनजीवन की झांकी प्राप्त कर सकते हैं।

कार निकोबार

कार निकोबार पोर्ट ब्लेयर से 150 नौटिकल मील दूर है किन्तु जहाजों को खतरनाक व उत्पाती दस डिग्री को पार कर पहुंचना होता है और अक्सर तूफानी अंधेरी रातों में अगर जहाज में राडार न हो तो, अक्सर अपने पथ से भटक जाते हैं और जब सुबह होती है तब उन्हें पता चलता है कि वे अपने गन्तवय स्यान से कहीं दूर चले गए हैं। लेखक को भी इस दुविधा का अनेक बार सामना करना पड़ा। यहां पर अभी कोई अच्छा स्थायी नाव घाट नहीं बन सका है। मानसून होने पर अस्थाई नाव घाट पश्चिमी तट से पूर्वोत्तर तट पर लाना पड़ता है और पूर्वी हवाओं के अक्तूबर में आगमन पर फिर इसे पश्चिमी तट पर ले जाना पड़ता है। कभी-कभी जब मौसम अकस्मात बदल जाता है तो जलयानों का समुद्र में बह जाने का खतरा उत्पन्न हो जाता है और निकोबारियों के लिए इस काम में सहायता करनी पड़ती है। अगर यह घटना रात्रि के समय हो जाय तो कभी-कभी भारी नुकसान हो जाता है तथा नौकाएं लंगर तोड़कर खुले समुद्र में खो जाती हैं। ऐसी ही परिस्थितियों में कुछ वर्ष पूर्व मत्स्य विभाग की यान्त्रिक नाव भी बह गई थी। जहाज से उतरने के लिए छोटी नावों का प्रयोग करना पड़ता है और अन्त में कुछ मीटर तो घुटने तक पानी में चलना पड़ता है।

कार निकोबार द्वीप सबसे बड़ी आबादी का द्वीप है। यह बिल्कुल चौरस है इसका क्षेत्रफल 129 वर्ग किलोमीटर है। कुछ ही घंटों में पूरे द्वीप का चक्कर लगाकर नारियल, केवड़े आदि के सुन्दर उद्यानों की झांकी मिल सकती है यहां पर एक विचित्र नारियल का पेड़ है जिसमें शाखाएं हैं। काकना के पास सुन्दर बालू तट है। भ्रमण के दौरान नवागन्तुक निकोबारी गांवों को भी देखता है तथा रास्ते में पुरुष व स्त्रियां नारियल व केलों का बोझ लाते हुए दिखाई देते हैं।

यहां स्थित गिरजाघर भी देखने योग्य है। बिशप रिचर्डसन के गुरू सोलोमन की मधुर

स्मृति में यह गिरजाघर उन्हीं को अर्पित किया गया है तथा उसी के अहाते में आधुनिक निकोबार के जन्मदाता बिशप रिचर्डसन की समाधि भी बनी है तथा समीप में उनकी आदमकद मूर्ति भी लगी है।

निकोबारियों के कुटीर बहुत सुन्दर होते हैं। नवागन्तुक को एक बार सीढ़ियों से ऊपर चढ़कर कमरे का आरामदेह वातावरण तथा केन की सीकों से मन्द हवा द्वारा वातानुकूलित होने का आभास दिलाना अवश्य देखना चाहिए।

साधारण लोगों का व्यवहार मित्रतापूर्ण व अतिथि सत्कारक का होता है, महिलाएं भी हंसमुख व प्रसन्न रहती हैं। वे खेलकूद में बहुत रूचि रखते हैं अंतर्ग्रामीण महिला वॉलीबाल प्रतियोगिता दर्शकों की बहुत बड़ी भीड़ एकत्रित करती है तथा विशिष्ट अतिथियों के लिए थोड़ी पूर्व सूचना पर इन खेलों का विशेष आयोजन किया जा सकता है।

निकोबारी लोग लगभग सभी प्रकार के घर के अन्दर तथा बाहर खेले जाने वाले खेलों को खेलते हैं। निकोबार उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के लड़के अखिल भारतीय सुब्रतो फुटबाल प्रतियोगिता कई बार जीत चुके हैं। निकोबारी लोग सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भी बहुत रूचि रखते हैं और उनमें इसकी बहुत प्रतिभा भी है। ये लोग नए विचारों व बातों का बड़ी जल्दी अनुकरण करने लगते हैं विशेष रूप से छोटे बच्चों द्वारा राष्ट्रीय गीतों का सामूहिक रूप से सुमधुर स्वरों में पाठ हृदय को छू लेता है।

नानकोरी

नानकोरी विश्व के सुन्दरतम बन्दरगाहों में से एक है और कार निकोबार से 82 नौटिकल (समुद्री) मील की दूरी पर ग्रेट निकोबार के कैम्पल बे जाने के रास्ते में स्थित है। समुद्र के मध्य, दस अंश जलांतराल (चैनेल) तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पथ के समीप प्रकृति की यह एक अनोखी देन है। कई जलयान समुद्री चक्रवात आदि आपतकाल में इस बन्दरगाह की शरण लेते हैं। कभी-कभी पड़ोसी देशों से कुछ अन्य चोरी से मछली पकड़ने या तस्करी के लिए भी आते हैं और कभी-कभी तो दस अंश जलांतराल के थपेड़ों से आहत ह्वेल मछली भी यहां पर शरण लेने आ जाती है।

चौरा

फुटबाल के मैदान की तरह द्वीप चौरा है। दुर्भाग्य से इस द्वीप में मीठे पानी का कोई स्त्रोत नहीं है। सूखे के मौसम में पेयजल की बड़ी कठिनाई होती है। प्रशासन ने यहां पर वर्षा के जल को अधिक समय तक एकत्रित करने की व्यवस्था कर रखी है।

निकोबारी जनजाति के लोग चौरा के लोगों के प्रति बड़ी श्रद्धा रखते हैं। जिस प्रकार मुख्य भूमि में पंडितों का आदर किया जाता है उसी तरह चौरा के लोगों का भी समाज में विशेष स्थान है। साल में एक बार निकोबारी लोग चौरा की तीर्थ यात्रा बड़े उत्साह व

समारोह के साथ करते हैं। सारी नावें विशेष रूप से सजाई जाती हैं। बहुत से लोग चौरा के लिए चल पड़ते हैं, जो एक प्रकार की नौका दौड़ सी लगती है। कभी-कभी खराब मौसम या बादलों से घिरे आसमान में वे दिशाभ्रम के कारण समुद्र में भटक जाते हैं किन्तु समुद्र से नित्य खेलने वाले बहादुर निकोबारी हताश नहीं होते। ऐसे भी उदाहरण हैं जब बिना भोजन व जल के कई दिन तक नौका चलाने के बाद वे बर्मा या थाईलैंड के तट पर सकुशल पहुंच गए। निकोबारियों के इस नौका यात्रा में खो जाने के समाचार से अक्सर प्रशासन को अनेक प्रकार की कठिनाईयां होती हैं तथा निकोबार स्थित वायुसेना का दल उन्हें बचाने जाता है। उन्हें वायुयान गंतव्य दिशा की ओर बढ़ने में सहायता देते हैं।

चौरा के लोग बहुत कुशल काष्ठकार हैं और बहुत अच्छी नौकाएं बनाते हैं। निकोबारियों के घरों का अधिकांश लकड़ी का काम उनके द्वारा किया जाता है। निकोबारी रीति-रिवाजों के अनुसार मिट्टी के बर्तन बनाने का एकाधिकार केवल चौरा के लोगों का है। बाकी लोगों को उनसे खरीदना होता है, जो ऐसा नहीं कर सकते उन्हें उसके बदले में उनकी क्षतिपूर्ति करनी पड़ती है।

कचाल द्वीप में सबसे बड़ा रबड़ के पेड़ों का उद्यान है। इस काम के लिए श्री लंका से स्वदेश प्रत्यावर्तित तमिल परिवारों को लगाया गया है। रबड़ के पेड़ का अच्छा उत्पादन देश की आर्थिक स्थिति में नवजीवन का संचार करेगा।

ग्रेट निकोबार

ग्रेट निकोबार द्वीप का मुख्यालय कैम्पल बे है जो पोर्ट ब्लेयर से 294 नौटिकल मील दूर है। ऊंचे पहाड़ों तथा एलेजेन्डरिया व गलतिया जैसी बड़ी नदियों के निकोबार द्वीप समूह में ग्रेट निकोबार सबसे बड़ा द्वीप है। पहले इस द्वीप में केवल शर्मीले, डरपोक सोम्पेन घने जंगलों में रहते थे तथा पश्चिमी तट पर थोड़ी निकोबारियों की आबादी थी।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् पंजाब से 100 भूतपूर्व सैनिक परिवारों को पुनर्वास के लिए लाकर एक प्रायोगिक परियोजना प्रारंभ की गई। परिवारों को आने का पूर्ण मार्ग व्यय, भूमि से पैदावार प्राप्त करने तक निशुल्क राशन, मकान बनाने के लिए अनुदान, मुफ्त ट्रैक्टर सेवा, बीज तथा खाद और भाड़े के बर्तन तथा बैलों के लिए अनुदान आदि सुविधाएं योजना के आरंभिक वर्षों में सरकार की ओर से सुलभ की गईं।

इन सुविधाओं के बावजूद जलवायु, मौसम, अत्याधिक वर्षा, अज्ञात बीमारियों, मलेरिया व फाइलेरिया की अनेक भंयकर समस्याएं थीं किन्तु बहादुर तथा उद्यमी लोगों ने अन्त में इन समस्याओं पर काबू पा लिया और इन बस्तियों में आशा की नयी किरणें फूटने लगीं। इन सुखद परिणामों से प्रभावित होकर देश के विभिन्न प्रदेशों से इन द्वीपों में बसने के इच्छुक भूतपूर्व सैनिकों का एक विशेष समिति द्वारा चयन किया गया और उन्हें इस द्वीप में बसाया गया। शेष और लोग भी बसाए जायेंगे, यदि पश्चिमी तट पर बसाने

की अनुमति मिल जाती है ।

ग्रेट निकोबार द्वीप को दो बड़े मार्गों पूर्व-पश्चिम तथा उत्तर-दक्षिण ने सुगम बना दिया है । वर्तमान भूतपूर्व सैनिकों की बस्ती उत्तर-दक्षिण मार्ग पर स्थित है, जो अन्त में इन्दिरा गांधी (पिगमैलियन) पाइन्ट पर पहुंचती है । राष्ट्रीय एकता का एक आदर्श यहां पर आए विभिन्न प्रदेशों के लोगों द्वारा प्रस्तुत किया गया है जहां वे परस्पर बड़े प्रेम, सौहार्द व सद्भाव से रहते हैं । इन बस्तियों में जाने पर ही इस बात का आभास मिलता है कि कितने परिश्रम से इन्होंने यहां पर खेती की है तथा उद्यान लगाए हैं । यहां पर एक विशेष प्रकार का पपीता मिलता है जो अन्दर से बिल्कुल लाल होता है और बहुत स्वादिष्ट होता है ।

कैम्पल बे शीघ्र ही कस्बे के रूप में विकसित हो रहा है । वर्तमान नौका घाट बहुत छोटा है और बड़े जहाजों को दूर समुद्र में लंगर डालना पड़ता है । तूफानी मौसम में जहाज से नावों पर उतरना बहुत कठिन व कभी-कभी काफी खतरनाक भी हो जाता है । यहां पर सरकार ने तरंग रोध की योजना स्वीकार कर दी है जिससे इस क्षेत्र का समुचित विकास हो सकेगा ।

इन्दिरा गांधी (पिगमैलियन) पाइन्ट इस द्वीप तथा देश का सबसे दक्षिण छोर है जो अत्यन्त रमणीय स्थान है । गलतिया नदी इसके समीप घने जंगलों के बीच बहती है । ये दोनों पुराना पिगमैलियन नाम व गलतिया नाम यूनानी देवी देवताओं के हैं और इस स्थान का रोमांचपूर्ण वातावरण वास्तव में इन पौराणिक रहस्य पूर्ण भावों का प्रतिनिधित्व करता है । यहां पर एक प्रकाश स्तम्भ भी है, जो कोलम्बो तथा सिंगापुर के बीच चलने वाले जहाजों का पथ प्रदर्शन करता है । पर्यटकों को यह स्थान अवश्य देखना चाहिए । जहाज के प्रस्थान के समय को देख कर इसकी व्यवस्था की जा सकती है । इस स्थान पर एक वानस्पतिक उद्यान बनाने का प्रस्ताव है ।

बन्दरों की एक अजीब प्रकार की जाति केवल इसी द्वीप में पाई जाती है । कभी-कभी गलतिया नदी के तट पर मगरमच्छ भी दिखाई देते हैं । यहां की आदिवासी जनजाति सोम्पेन से भी भेंट की व्यवस्था की जा सकती है वैसे भी गलतिया नदी के आस-पास वे अब मिल ही जाते हैं ।

पश्चिमी तट में एक छोटा-सा मैगापौड द्वीप है जहां संसार में दुर्लभ पक्षी मैगापौड पाया जाता है ।

साहसी लोग जो यहां के अछूते प्राकृतिक सौन्दर्य को और अधिक देखना चाहें तथा यहां के आदिवासियों के विषय में कुछ और जानकारी चाहें वे गलतिया या एलेक्जेन्डरिया नदियों में ऊपर की तरफ नौका विहार करें जिसमें सम्भवत कुछ सप्ताह लग जायें किन्तु इस साहसिक कार्य का पुरस्कार भी उसी के अनुरूप महान आत्म सन्तोष प्रदान करेगा ।

ग्रंथ-सूची

1.	एम. वी. पोटमैन	ए हिस्टरी आफ अवर रिलेशंस विद द अंडमांस, कलकत्ता
2.	एफ. जे. माउंट	एडवैनचर्स एंड रिसर्चेज अमंग दि अंडमान आइलैंड्स, लंदन
3.	बीडन सी क्लौस	इन दि अंडमान एंड निकोबार - दि नैरेटिव आफ ए क्रूज इन दि स्कूनर लंदन
4.	साइक्स	ए हिस्टरी आफ एक्सप्लोरेशंस, लंदन
5.	वी. डी. सावरकर	द स्टोरी आफ माई ट्रांसपोर्टेशन फार लाइफ, मुंबई
6.	क्रांट	हिस्टरी आफ ब्रदर्स - एकाउंट आफ डैनिस मिशन, लंदन
7.	बी. एस. चेनगप्पा	अंडमान फोरेस्ट्स एंड देयर रिप्रोडक्शंस, मद्रास
8.	ए. आर. ब्राउन	अंडमान आइलैंड्स - ए सोशल स्टडी, इलिनो
9.	जी. व्हाइटहेड	इन निकोबार आइलैंड्स, लंदन
10.	सर कौम्पटन मैकंजी	आल ओवर दि प्लेस, लंदन
11.	डा. ताराचंद	इंडियाज स्ट्रगल फार फ्रीडम
12.	अलफ्रेड क्राफ्ट्स एंड पर्सी बुचना	ए हिस्टरी आफ फार ईस्ट
13.	हरबर्ट फी	जापान सबड्यूड
14.	रिचर्ड डनलप	बिहाइंड जैपनीज लाइंस
15.		सिलेक्टेड स्पीचेज आफ सुभाष चंद्र बोस, पब्लिकेशंस डिवीजन, मिनिस्ट्री आफ इंफारमेशन एंड ब्रॉडकास्टिंग
16.	जिराड एच कौर	दि वार आफ दि स्प्रिंग्रिंग टाइगर्स
17.	सूबा सिंह, दिवान सिंह	कालापानी

18. एन. इकबाल सिंह — दि अंडमान स्टोरी
19. विश्वनाथ प्रसाद वर्मा — बालगंगाधर तिलक
20. एल. पी. माथुर — हिस्टरी आफ दि अंडमान एंड निकोबार आइलैंड्स (1756-1966)
21. के. के. माथुर — निकोबार आइलैंड्स
22. एलन जे. ग्रीनबर्ज — दि ब्रिटिश इमेज आफ इंडिया
23. माइकेल एडवर्ड — दि लास्ट यीअर्स आफ ब्रिटिश रूल
24. सुशील चतुर्वेदी — अंडमान द्वीप समूह
25. — इंडिया दि ट्रांसफर आफ पावर (बारह भाग)
26. आर. पाम दत्त — इंडिया टुडे
27. फिलिप जिगले — माउंटबेटन - दि ऑफिशियल बायोग्राफी
28. धर्मेंद्र गौड़ — मैं अंग्रेजों का जासूस था

भारत सरकार द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट

1. अंडमान व निकोबार द्वीप समूह तथा पैनल सेटलमेंट पर 1864 से 1976-77 तक
2. सेंसस रिपोर्ट - अंडमान एंड निकोबार - 1901, लेखक - ले. सर रिचर्ड टेम्पुल
3. सेंसस रिपोर्ट - अंडमान एंड निकोबार - 1911, लेखक - मे. आर. एफ. लेवी
4. सेंसस रिपोर्ट - अंडमान एंड निकोबार - 1931, लेखक - सी. जे. बोर्नीटन
5. सेंसस रिपोर्ट - अंडमान एंड निकोबार - 1951, लेखक - ए. के. घोष
6. सेंसस रिपोर्ट - अंडमान एंड निकोबार - 1961, लेखक - एस. के. शर्मा
7. सेंसस रिपोर्ट - अंडमान एंड निकोबार - 1971
8. रिपोर्ट आफ दि इंडियन जेल कमेटी - 1919-20
9. 1857 के पश्चात गजट आफ इंडिया में छपे रिज्योलेशन एंड गजट नौटिफिकेशन

प्रकाशित दस्तावेज

1. राष्ट्रीय लेखागार में रखे अभिलेख
2. पंचवर्षीय योजनाएं
3. अंडमान आइलैंड्स अंडर जैपनीज औक्यूपेशन - 1942-45, लेखक - रामकृष्ण